अंक 69

अप्रैल -- जून 1995

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार

कोचीन में सम्पन्न क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में राजभाषा विभाग, भारत सरकार के संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप से पुरस्कार ग्रहण करते हुए श्री प्रशान्त मेनोन, मण्डल प्रबंधक, अं०का० तिरूवनंतपुरम।

भारतीय भाषा सम्मेलन के समापन समारोह में डा० शंकर दयाल सिंह जी भाषण देते हुए। मंच पर आसीन डा० मंजु तिवारी, श्री कण्णन, श्री हरिबाबू कंसल, श्री जी०आर० नारायण, श्री रामनाथ सहगल, डा० रवीन्द्र कुमार सेठ।

राजभाषा भारती

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे।

—निराला

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष : 18 अंक : 69 अप्रैल-जून, 1995

□ **संपादक :**

राज कुमार सैनी
निदेशक (अनुसंधान)
फोन: 4617807

□ **उप संपादक :**

नेत्र सिंह रावत
फोन: 4698054

सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोन: 4699441

□ **संपादन सहायक :**

शांति कुमार स्याल

निःशुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

□

पत्र-व्यवहार का पता :

संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन, (11वां॰ तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003
फोन: 4698054, 4617807

अनुक्रम

अनुक्रम		पृष्ठ
□ सम्पादकीय		
□ चिंतन		
1. संविधान सभा और राजभाषा	— शंकर दयाल सिंह	1
2. भाषा की सरलता	— ब्रज किशोर शर्मा	7
3. हिंदी भाषा में होने वाली अशुद्धियां	— डा॰ (श्रीमती) प्रेम भार्गव	12
4. अनुस्वार और अनुनासिक	— रमेश चन्द्र	14
5. अनुवादक और अर्थ का अनुसंधान	— विश्वभर प्रसाद 'गुप्त बंधु'	16
6. विधि के क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग	— एम॰ सी॰ पांडेय	18
7. आगे बढ़िए-पुनः हिंदी की लहर उत्पन्न करें	— ओ॰ सत्यनारायण राव	19
8. सरलता की लचर दलील	— अशोक कुमार चोपड़ा	21
□ साहित्यिकी		
1. कच्चे अंधेरे की घाटी हैं—शमशेर	— डा॰ बलदेव बंशी	22
2. भारतीय उपन्यासों में समान तत्व	— जगदीश चतुर्वेदी	24
3. संस्कृत के नीति काव्य	— डा॰ किरन शुक्ल, — महेन्द्र सिंह	29
□ पुरानी यादें: नए परिप्रेक्ष्य		
1. गांधी जीः व्यक्तित्व के विभिन्न रूप	— डा॰ रामदास नादार	41
2. नरेन्द्र जीः यादों के दर्पण में	— रिफअत सरोश	43
3. आचार्य कृष्ण बिहारी मिश्रः एक संक्षिप्त परिचय	— कृष्ण बिहारी मिश्र	45
4. पं॰ प्रताप नारायण मिश्रः जीवन और व्यक्तित्व	— डा॰ शांति प्रकाश वर्मा	47
□ विश्व हिंदी दर्शन		
यात्रा के अन्दर भी होतीः है कुछ अंतर्यात्राएं	— शंकर दयाल सिंह	50
फीजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि	— डा॰ विमलेश कांति वर्मा	53
□ भाषा संगम		
वनों से गुजरते हुए	— राबर्ट फ्रास्ट	62
तुम मेरे स्वदेश	— नाज़िम हिकमत	63
गजल	— राम प्रकाश राही	64

☐ **संस्कृति दर्शन**

संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास — डा० शशि तिवारी 65

☐ **प्रेरणा पुंज**

श्री जगन्नाथ: राजभाषा हिंदी के लिए समर्पित व्यक्तित्व — विश्वंभर प्रसाद गुप्त 'गुप्त-बंधु' 66

नेत्रहीन किन्तु साहसी हिंदी आशुलिपिक — -जगन्नाथ 68

☐ **भेंटवार्ता**

लेखक समाज को नए मूल्य बतलाएं 69

(वरिष्ठ साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर से कामिनी बाली की बातचीत)

☐ **पुस्तक समीक्षा** 72

महत्वपूर्ण आत्मकथा (माधवी देसाई), मुठभेड़: पठनीय आलोचना का प्रतिमान (श्याम कश्यप), प्रेम संबंधों की कहानियां (जगदीश चतुर्वेदी), रूमानी कहानी का गुलदस्ता: डेलिया का फूल (जगदीश चतुर्वेदी), कायर समय में वैचारिक साहस (कुबेर दत्त), महासागर संशाधन (सम्पादित) गेरू से लिखा नाम (श्याम कश्यप), कोहरा (कमलेश्वर), आधुनिक तेलुगु साहित्य (डा० पी०वी० नरसा रेड्डी), बिक्री कर की आरंभिक जानकारी (श्री आर०बी० लाल, अमर नाथ सिंघला), शब्द चिह्न, शब्दाक्षर एवं प्रचलित रेखाकृतियां (विजय सिंह चौहान), चर्चित कहानियां (रमेश चन्द्र शाह), ग्रामीण पुलिस-समस्याएं और समाधान (राम लाल विवेक), हिंदी पत्रकारिता की दुनिया (सविता चड्ढा), उपासना (विपिन बिहारी प्रसाद), काव्य संकलन-पैगाम (शहानवाज अ० गनी मुजावर)।

☐ **राजभाषा सम्मेलन / संगोष्ठियां** 93

पश्चिम क्षेत्र में राजभाषा सम्मेलन; राष्ट्रीय एकता की दिशा में भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन, केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चण्डीगढ़ में हिंदी संगोष्ठी, करनाल क्षेत्र के राजभाषा अधिकारियों की वार्षिक बैठक, हिंदी साहित्य संगम बोकारो स्टील सिटी में कवि सम्मेलन, भिलाई इस्पात संयत्र में तकनीकी सम्मेलन, कोचिन में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन, भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड, बम्बई के हिंदी समन्वयकों का सम्मेलन; केनरा बैंक, मण्डल कार्यालय, मेरठ में हिंदी प्रतिनिधियों की बैठक; अरूणाचल नागरी संस्थान में विचार गोष्ठी, इस्को, बर्नपुर राजभाषा क्लब का वार्षिकोत्सव।

☐ **विविधा** 98

▲ निक-नेट पर राजभाषा सूचना प्रणाली ▲ हिंदी शिक्षण योजना ▲ हिंदी टाइपिंग प्रशिक्षण ▲ पुरस्कार ▲ समाचार दर्शन ▲ प्रोत्साहन ▲ प्रतियोगिता ▲ आदेश-अनुदेश ▲ पाठकों के पत्र।

सम्पादकीय

तुम वहन कर सको जन-मन में मेरे विचार
वाणी मेरी, चाहिए तुम्हें क्या अलंकार?

—सुमित्रा नन्दन पन्त

राजभाषा भारती का अंक 69 आपके हाथों में है। हमारा प्रयास यह रहा है कि धीरे-धीरे राजभाषा भारती की अन्तर्वस्तु, विषय-वस्तु और साज-सज्जा में निरन्तर सुधार लाया जाए। विद्वान पाठक और लेखक सराहना भरे पत्र भेजकर हमारा मनोबल बढ़ाते रहते हैं, जिसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं। तथापि अपनी प्रशंसा होते देख हम आत्ममुग्ध नहीं हैं, हम जानते हैं कि अभी भी इस प्रयास में सुधार की पर्याप्त

गुंजाइश है। जो कमियां हैं उनसे हम मुह चुराना नहीं चाहते और उन्हें दूर करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

पिछले दिनों भारत की संविधान सभा के माननीय सदस्य श्री मोटूरि सत्य नारायण का निधन हो गया। एक अहिंदी भाषी विद्वान और गण्यमान्य व्यक्ति होते हुए उन्होंने हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। हिंदी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित कराने के लिए उन्होंने जो दुर्धर्ष संघर्ष किया उसे याद कर पाषाण भी द्रवित हो उठेगा। हिंदी भाषा के प्रति उनका प्रेम और अवदान चिरस्मरणीय रहेगा। दक्षिण भाषी हिंदी प्रेमियों में उनका नाम अग्रगण्य और अविस्मरणीय है।

हिंदी के कवि श्री रमेश गौड़ और गीतकार श्री वीरेन्द्र मिश्र का भी पिछले दिनों स्वर्गवास हो गया। एक अरसे तक श्री रमेश गौड़ ने अपनी नए ढंग की कविताओं द्वारा और श्री वीरेन्द्र मिश्र ने अपने नवगीतों द्वारा हिंदी कविता और हिंदी गीति-काव्य की श्रीवृद्धि की। साहित्य-संध्याओं में रमेश गौड़ और कवि सम्मेलनों में वीरेन्द्र मिश्र की उपस्थिति हमेशा इन संध्याओं और सम्मेलनों की रौनक को चार चांद लगाती थी। जब वे ऐसे अवसरों पर उपस्थित नहीं होते थे तो वे संध्याएं / रातें अंधेरी लगतीं थीं। ऐसे ही संवेदनशील क्षणों में स्वरचित चार पंक्तियों द्वारा उनका स्मरण करने के लिए मन उद्वेलित हो रहा है :—

"दर्द के चारागार नहीं आए
शाम के हमसफ़र नहीं आए
आज की रात फिर अमा होगी
आज फिर तुम नज़र नहीं आए।"

राजभाषा भारती परिवार हिंदी-सेवी और साहित्य के इन तीनों सुपरिचित अदाकारों की स्मृति-मूर्तियों के समक्ष अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता है।

पाठकों, लेखकों और हिंदी-सेवियों से सविनय अनुरोध है कि वे राजभाषा भारती के आगामी अंक के लिए, यदि उनके पास माननीय श्री मोटूरि सत्य नारायण के बारे में कोई प्रामाणिक संस्मरण, आलेख या अन्य सामग्री हो तो हमें अवश्य भिजवाने की कृपा करें।

(राज कुमार सैनी)

चिंतन

संविधान सभा और राजभाषा

—शंकर दयाल सिंह

कुछ लोगों को भ्रम है कि एक वोट के बहुमत से हिंदी को राजभाषा स्वीकार किया गया है। जब संविधान सभा बनी तब अंग्रेजी ही एक मात्र भाषा थी जिसमें संविधान का प्रारूप तैयार किया जा सकता था क्योंकि प्रारूपण समिति में जितने भी सदस्य थे वे यदि किसी एक भाषा में पारंगत थे तो अंग्रेजी में। 14 सितंबर, 1946 को संविधान सभा की नियम समिति ने डा० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में यह निर्णय किया कि संविधान सभा का कामकाज हिन्दुस्तानी या अंग्रेजी में किया जाना चाहिए और अध्यक्ष की अनुमति से कोई भी सदस्य सदन में अपनी मातृभाषा में भाषण दे सकेगा। संघ संविधान समिति ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि संघ की संसद की भाषा हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी होगी और सदस्यों को अपनी मातृभाषा का प्रयोग करने की छूट होगी। प्रांतीय संविधान समिति ने यह सिफारिश की कि प्रातीय विधान मंडलों में कामकाज प्रान्त की भाषा या भाषाओं में किया जायेगा अथवा हिन्दुस्तानी या अंग्रेजी में।

14 जुलाई, 1947 को जब संविधान सभा का सत्र प्रारंभ हुआ तब सत्र के दूसरे ही दिन यह संशोधन प्रस्तुत किया गया कि हिन्दुस्तानी के स्थान पर हिन्दी शब्द रखा जाए। 16 जुलाई को ही संविधान सभा और कांग्रेस पार्टी में इस विषय पर विचार-विमर्श शुरू हुआ। विचार-विमर्श के दौरान नेता एक ओर थे और साधारण सदस्य दूसरी ओर। इस मतदान में हिन्दी के पक्ष में 63 वोट थे और हिन्दुस्तानी के पक्ष में 32 । इसी प्रकार एक दूसरे संविधान में देवनागरी के पक्ष में 63 वोट थे और विपक्ष में 18 । दूसरे दिन संविधान सभा की बैठक में सरदार पटेल ने यह अनुरोध किया कि प्रांतीय विधानमंडलों की भाषा के प्रश्न को अभी न लिया जाए। 5 अगस्त, 1949 को कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने विभागीय क्षेत्रों के बारे में एक संकल्प तैयार किया।

5 अगस्त के संकल्प की प्रतिक्रिया तुरन्त हुई। 6 और 7 अगस्त को संविधान सभा की बैठक नहीं हुई। किंतु कांग्रेस दल के कार्यालय में भाषा नीति के बारे में हजारों पत्र आए। इसी बीच गोविंद दास की अध्यक्षता में हिन्दी साहित्य सम्मलेन ने नई दिल्ली में एक राजभाषा सम्मेलन किया जिसमें हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्यकार भी एकत्र हुए। इस सम्मेलन में हिन्दी भाषा और नागरीलिपि को राजभाषा के रूप में स्वीकार करने का प्रस्ताव पारित किया गया।

8 अगस्त को जब संविधान सभा का अधिवेशन प्रारंभ हुआ तो उस दिन के परिपत्र में संविधान के प्रारूप संबंधी उपबन्धों पर अनेक संशोधन थे। एक संशोधन पर 82 सदस्यों के हस्ताक्षर थे। इनमें से पहला नाम आचार्य जुगल किशोर का था जो 1948 में कांग्रेस के महामंत्री थे। अनेक हस्ताक्षरकर्ता दक्षिण भारत के थे। 9 अगस्त, 1948 को कुछ सदस्यों ने इन संशोधनों का विरोध किया और अपराह्न में सभाई कांग्रेस पार्टी की बैठक में इसका विरोध किया। विरोध इस बात पर था कि अंग्रेजी राजभाषा के रूप में 15 वर्ष तक चले। जहां तक हिंदी के संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किए जाने की बात है मीटिंग में इस बारे में कोई मतभेद नहीं था। सदस्यों में अगर मतभेद था तो वह इस बात पर कि हिन्दी का स्वरूप क्या हो, अर्थात उसमें शब्द अरबी, फारसी के लिए जाएं या संस्कृत से। समस्या का हल निकालने के लिए एक समिति का गठन किया गया जिसके सदस्य थे-श्री गोपाल स्वामी आयंगर, श्री टी०टी० कृष्णामाचारी, श्री ए०के० आयंगर, श्री के०एम० मुंशी, श्री भीव राव अम्बेडकर, श्री सआदुल्ला, श्री एल०एम०राव० मौलाना, अबुल कलाम आजाद, पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त, राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन, श्री बालकृष्ण शर्मा नवीन, श्री श्यामा प्रसाद मुखर्जी और श्री के० सन्थानम्।

हिन्दी को राजभाषा के रूप में शीघ्र प्रतिष्ठित करने के लिए 82 सदस्यों के हस्ताक्षर थे जो संशोधन पेश किया गया था उसके जवाब में 15 वर्ष तक अंग्रेजी को चालू रखने के लिए 44 सदस्यों के हस्ताक्षर से एक अन्य संशोधन पेश किया गया जिसमें सबसे पहला नाम श्री के० सन्थानम का था और अन्य हस्ताक्षरकर्ताओं में मुख्य थे—श्री कृष्णामाचारी, श्रीमती दुर्गा बाई, श्री ए०के० अय्यर और श्री अनन्तशयनम् अयंगार।

जहां तक हिन्दी के स्वीकार किए जाने की बात है दोनों ही पक्षों में इसके बारे में कोई असहमति नहीं थी। मत भिन्नता केवल इस बात पर थी कि अंग्रेजी कब तक चलती रहे। इसी संशोधन में 10 अगस्त को यह प्रस्ताव रखा गया कि संघ और राज्य के शासकीय प्रयोजन के लिए अंकों का प्रयोग किया जाए। 10 से 17 अगस्त तक भाषा के बारे में सभाई पार्टी में गरमागरम बहस चलती रही। 16 अगस्त को विशेष समिति ने अपनी रिपोर्ट पेश की। इस रिपोर्ट में अरबी अंकों के स्थान पर "अन्तर्राष्ट्रीय अंक" शब्द का प्रयोग किया गया। 22 अगस्त को डा० अम्बेडकर ने समझौते के रूप में एक प्रस्ताव पेश किया। इसके बाद दस दिनों तक अंकों और 15 वर्ष की अन्तरिम अवधि के बारे में संविधान सभाई पार्टी में बहस चली। इस बहस के दौरान जो विचार सामने आए उन्हें ध्यान में रखते हुए संविधान के उपबन्धों को जो रूप दिया गया उसे मुंशी आयंगार सूत्र करते हैं।

डा॰ अम्बेडकर ने अपनी पुस्तक 'थाट्स ऑन लिंग्विस्टिक स्टेटस्' में यह लिखा है कि जिस अनुच्छेद पर सबसे ज्यादा विवाद हुआ वह हिन्दी के प्रश्न पर था। सबसे अधिक विरोध इसी पर हुआ तथा सबसे अधिक गरमागरमी भी इस पर हुई। लेकिन विवाद के बाद इस प्रश्न पर मतदान हुआ तो पक्ष और विपक्ष में 78-78 वोट थे। पुनर्विचार के बाद जब पुनः मतदान हुआ तो हिन्दी के पक्ष में 78 और विपक्ष में 77 मत थे। सेठ गोविन्ददास ने अपनी आत्मकथा में इसी प्रकार की बात लिखते हुए यह भी उल्लेख किया है कि पटियाला के काका भगवन्त राय हिन्दी के पक्ष में अपना मत देकर और यह जानकर कि मतदान उनके पक्ष में हुआ है बाहर चले गए। दोनों लेखकों ने जिस घटना का उल्लेख किया है वह 26 अगस्त को कांग्रेस पार्टी मीटिंग की घटना है, संविधान सभा की नहीं।

2 सितंबर की शाम को मुंशी आयंगर सूत्र पर विचार विमर्श प्रारम्भ हुआ। अध्यक्षता डा॰ पट्टाभि सीतारमैया कर रहे थे। यहां जो भी मुख्य बहस थी वह तथाकथित अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को लेकर थी और कोई भी निर्णय नहीं हो सका। परिणामस्वरूप संसदीय कांग्रेस पार्टी में सहमति के अभाव में भाषा विवाद संविधान में उसी रूप में प्रस्तुत किया गया और कोई विप जारी नहीं किया गया।

2 सितंबर की बैठक के बाद भी हिन्दी के मामले में समझौता ढूंढने का प्रयास जारी रहा। संविधान सभा में भाषा संबंधी उपबन्धों पर 12 सितंबर को विचार प्रारंभ होना था। 10 सितंबर के संविधान सभा के परिपत्र में भाषा संबंधी जो संशोधन थे वे 45 पृष्ठों में छपे थे। यह उल्लेखनीय है कि डा॰ अम्बेडकर और श्री कृष्णामाचारी सहित 28 सदस्यों ने एक संविधान पेश करके यह मांग की कि संस्कृत को राजभाषा बनाया जाए।

12 सितंबर को बहस प्रारंभ होते ही डा॰ राजेन्द्र प्रसाद ने सदस्यों से यह अनुरोध किया कि वे संयत भाषा का प्रयोग करें और ऐसा कुछ न कहें जिससे दूसरों की भावना को ठेस पहुंचे। इसके बाद श्री गोपाल स्वामी आयंगर ने मुंशी-आयंगर सूत्र पर आधारित उपबन्ध पुनः स्थापित किए। सेठ गोविंद दास ने इसका विरोध किया। उसी दिन शाम को राजर्षि टंडन, पंडित रविशंकर शुक्ल, सेठ गोविंददास आदि ने कुछ और संशोधन तैयार किए। 13 तारीख की बहस में डा॰ श्यामाप्रसाद मुखर्जी तथा पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भाग लिया। तीसरे दिन की बहस में डा॰ रघुवीर, राजर्षि टंडन, मौलाना आजाद और शंकरराव देव आदि ने अपने विचार व्यक्त किए।

14 सितंबर को 1 बजे बैठक स्थगित हुई। इसी दिन अपराह्न में इस विषय पर अन्तिम फैसला होना था। किंतु विचार-विमर्श से समझौते की कोई शक्ल उभरती नजर नहीं आ रही थी। 3 बजे संविधान सभाई पार्टी ने समझौते के प्रयास में बैठक आरंभ की। इसकी अध्यक्षता पट्टाभि सीतारमैया ने की। विधान सभा का सत्र 5 बजे प्रारंभ होना था और तभी सदस्यों में कुछ सहमति हुई। वे संविधान सभा में प्रविष्ट हुए और उन्होंने अध्यक्ष से अनुरोध किया कि वे उन्हें ब्यौरे की बातों को हल करने के लिए एक घंटे का समय और दें। 6 बजे तक सभी पहलुओं पर विचार कर मुंशी-आयंगर सूत्र में सुधार कर दिया गया और सभी सदस्यों ने मुक्ति की सांस ली।

संविधान सभा की कार्रवाई के अनुसार तीन दिनों तक चलने वाले इस राजभाषा-समस्या पर 71 माननीय सदस्यों ने भाग लियाः

12-9-49 से 15-9-49

राजभाषा संविधान के मसौदे पर हुई चर्चा में भाग लेने वाले सदस्यों के नाम :

1. माननीय डा॰ राजेन्द्र प्रसाद (सभापति)
2. श्री महावीर त्यागी
3. श्री मौलाना हसरत मोहानी
4. सेठ गोविन्द दास (सी॰पी॰ और बरार, सामान्य)
5. श्री पं॰ बालकृष्ण शर्मा
6. माननीय पं॰ रविशंकर शुक्ला (सी॰पी॰ और बरार, सामान्य)
7. श्री जसपत राय कपूर (संयुक्त प्रांत, सामान्य)
8. श्री पी॰ एस॰ देशमुख
9. मौलाना नज़ीरूद्दीन अहमद
10. श्री ज़वाहर लाल नेहरू
11. श्री देशबंधु गुप्ता
12. श्री बी॰ दास॰ (उड़ीसा, सामान्य)
13. श्री एस॰वी॰ कृष्णमूर्ति राव
14. श्री घनश्याम सिंह गुप्तर (सी॰पी॰ और बरार, सामान्य)
15. डा॰ बी॰ आर॰ अंबेडकर
16. श्री एच॰वी॰ कामत
17. श्री एम॰ गोपालस्वामी आयंगर (मद्रास सामान्य)
18. श्री लक्ष्मीकांत गायत्रा (प॰ बंगाल, सामान्य)
19. श्री एस॰ नागप्पा
20. पं॰ गोविन्द मालवीय (संयुक्त प्रान्त, सामान्य)
21. काज़ी सैयद करीमुद्दीन (सी॰पी॰ और बरार, मुस्लिम)
22. श्री काला वेंगट राव
23. श्री सारंगधर दास (ओड़िसा)
24. श्री के॰ संथानम् (मद्रास सामान्य)
25. श्री एस॰वी॰ कृष्णमूर्ति राव
26. मो॰ हिफ्जुद रहमान (संयुक्त प्रांत, मुस्लिम)
27. श्री आर॰ व्री॰ कुलेकर (संयुक्त प्रांत, सामान्य)
28. प्रो॰ सिब्बनलाल सक्सेना (संयुक्त प्रांत, सामान्य)
29. श्री एच॰आर॰ गुरुव रेड्डी (मैसूर प्रान्त)
30. श्री बी॰एन॰ मुत्रवली (बंबई राज्य)
31. श्री फ्रैंक एंथनी
32. पं॰ हृदयनाथ कुंजरू
33. श्री ए॰ कृष्णस्वामी अयय्र (मद्रास, सामान्य)
34. श्री राम सहाय (मध्य भारत)
35. श्री वी॰आई॰ मुनिस्वामी पिल्लै (मद्रास सामान्य)
36. श्री लक्ष्मीनारायण साहू (ओड़िया, सामान्य)
37. श्री एन॰वी॰ गाडगिल (बंबई, सामान्य)
38. श्री टी॰ए॰ रामलिंगम चेट्टियार (मद्रास, सामान्य)
39. प्रो॰ एन॰जी॰ रंगा (मद्रास , सामान्य)
40. श्री सतीश चंद्र सामंत (प॰ बंगाल, सामान्य)

41. श्री अलगूराय शास्त्री (संयुक्त प्रांत, सामान्य)
42. डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी (प० बंगाल, सामान्य)
43. श्री पी०टी० चाको (त्रावनकोर और कोच्चिन, संयुक्त सचिव)
44. श्री एच०जे० खांडेकर (सी०पी० और बरार, सामान्य)
45. डा० वी० सुब्बारायन (मद्रास, सामान्य)
46. श्री टी०टी० कृष्णमाचारी (मद्रास, सामान्य)
47. श्री कुलाधार चालिहा (असम, सामान्य)
48. श्री रे० जेरोम डि ज़ा (मद्रास, सामान्य)
49. श्री वी०एम० गुप्ते (बंबई, सामान्य)
50. श्री बी०पी० झुनझुनवाला (बिहार, सामान्य)
51. श्री एल० कृष्णस्वामी भारती (मद्रास, सामान्य)
52. सरदार हुकम सिंह (पू० पंजाब, सिक्ख)
53. श्री जयनारायण व्यास (राजस्थान)
54. श्रीमती जी० दुर्गाबाई (मद्रास सामान्य)
55. श्री शंकरराव देव (बंबई सामान्य)
56. श्री जयपाल सिंह (बिहार, सामान्य)
57. श्री पुरुषोत्तमदास टंडन (सं० प्रांत, सामान्य)
58. श्री आर०आर० दिवाकर
59. मौलाना अबुल कलाम आजाद (संयुक्त प्रांत, मुस्लिम)
60. डा० रघुवीर (सी०पी० और बरार, सामान्य)
61. श्री के०एम० मुंशी (बंबई, सामान्य)
62. श्री नजीरुद्दीन अहमद (प० बंगाल, मुस्लिम)
63. श्री सी० सुब्रह्मण्यम (मद्रास, सामान्य)
64. मो० इस्माइल (मद्रास, मुस्लिम)
65. श्री जगतनारायण लाल (बिहार, सामान्य)
66. श्री रामनाथ गोयनका (मद्रास, सामान्य)
67. श्री सत्यनारायण सिन्हा (बिहार, सामान्य)
68. श्री जेड०एच० लारी (संयुक्त प्रांत, मुस्लिम)
69. श्री महबूब अली बेग साहिब बहादुर (मद्रास, सामान्य)
70. मोहम्मद ताहिर (बिहार, मुस्लिम)
71. श्री बोनीफेस लकड़ा (बिहार, सामान्य)

संविधान सभा और हिन्दी की चर्चा की समाप्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि हम संविधान सभा के तत्कालीन अध्यक्ष डां० राजेन्द्र प्रसाद के विचारों से अवगत न हों। ऊपर दो बातें आई हैं, इससे यह स्पष्ट है कि भाषा का प्रश्न बड़ा ही आवश्यक प्रश्न था जिस पर संविधान सभा ने 12, 13 और 14 सितम्बर, 1949 को गम्भीरता से बहस किया। डा० राजेन्द्र प्रसाद ने अन्त में जो भाषण दिया उसे यथावत् मैं भारतीय संविधान सभा के वाद-विवाद की सरकारी रिपोर्ट के हिंदी संस्करण से उद्धृत कर रहा हूं:

"अब आज की कार्यवाही समाप्त होती है, किन्तु सदन को स्थगित करने से पूर्व मैं बधाई के रूप में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मेरे विचार में हमने अपने संविधान में एक अध्याय स्वीकार किया है जिसका देश के निर्माण पर बहुत प्रभाव पड़ेगा। हमारे इतिहास में अब तक कभी भी एक भाषा को शासन और प्रशासन की भाषा के रूप में मान्यता नहीं मिली थी। हमारा धार्मिक साहित्य और प्रकाशन संस्कृत में सन्निहित था। निस्संदेह उसका समस्त देश में अध्ययन किया जाता था, किन्तु वह भाषा भी कभी समूचे देश के प्रशासनीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होती थी। आज पहली ही बार ऐसा संविधान बना है जब कि हमने अपने संविधान में एक भाषा रखी है जो संघ के प्रशासन की भाषा होगी और उस भाषा का विकास समय की परिस्थितियों के अनुसार ही करना होगा।

मैं हिंदी का या किसी अन्य भाषा का विद्वान होने का दावा नहीं करता। मेरा यह भी दावा नहीं है कि किसी भाषा में मेरा कुछ अंशदान है, किन्तु सामान्य व्यक्ति में हमारी उस भाषा का क्या रूप होगा जिसे हमने आज संघ के प्रशासन की भाषा स्वीकार की है। हिंदी में विगत में कई कई बार परिवर्तन हुये हैं और आज उसकी कई शैलियां हैं, पहले हमारा बहुत सा साहित्य ब्रजभाषा में लिखा गया था। अब हिन्दी में खड़ी बोली का प्रचलन है। मेरे विचार में देश की अन्य भाषाओं के सम्पर्क से उसका और भी विकास होगा। मुझे इसमे कोई संदेह नहीं है कि हिंदी देश की अन्य भाषाओं से अच्छी अच्छी बातें ग्रहण करेगी तो उससे उन्नति ही होगी, अवनति नहीं होगी।

हमने अब देश का राजनैतिक एकीकरण कर लिया है। अब हम एक दूसरा जोड़ लगा रहे हैं जिससे हम सब एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक हो जायेंगे। मुझे आशा है कि सब सदस्य संतोष की भावना लेकर घर जायेंगे और जो मतदान में हार भी गये हैं वे भी इस पर बुरा नहीं मानेंगे तथा उस कार्य में सहायता देंगे जो संविधान के कारण संघ को भाषा के विषय में अब करना पड़ेगा।

मैं दक्षिण भारत के विषय में एक शब्द कहना चाहता हूं। 1917 में जब महात्मा गांधी चम्पारन में थे और मुझे उनके साथ कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था तब उन्होंने दक्षिण में हिंदी प्रचार का कार्य आरम्भ करने का विचार किया और उनके कहने पर स्वामी सत्यदेव और गांधी जी के प्रिय पुत्र देवदास गांधी ने वहां जाकर यह कार्य आरम्भ किया। बाद में 1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में इस प्रचार कार्य को सम्मलेन का मुख्य कार्य स्वीकार किया गया और वहां कार्य चलता रहा। मेरा सौभाग्य है कि मैं गत 32 वर्षों में इस कार्य से सम्बद्ध रहा हूं, यद्यपि मैं यह घनिष्ट सम्बंध का दावा नहीं कर सकता। मैं दक्षिण में एक सिरे से दूसरे सिरे को गया और मेरे हृदय में बहुत प्रसन्नता हुई कि दक्षिण के लोगों ने भाषा के संबंध में महात्मा गांधी के अनुरोध के अनुसार कैसा अच्छा कार्य किया है। मैं जानता हूं कि उन्हें कितनी ही कठिनाइयों का सामना करना पड़ा किन्तु उन्हें इस मामले में जो जोश था वह बहुत सराहनीय था। मैंने कई बार पारितोषिक वितरण भी किया है और सदस्यों को यह सुन कर मनोरंजन होगा कि मैंने एक ही समय पर दो पीढ़ियों को पारितोपिक दिये हैं शायद तीन को ही दिये हों - अर्थात दादा, पिता और पुत्र हिंदी पढ़ कर, परीक्षा पास करके एक ही वर्ष पारितोषिकों तथा प्रमाणपत्रों के लिये आये थे। यह कार्य चलता रहा है और दक्षिण के लोगों ने इसे अपनाया है। आज मैं कह नहीं सकता कि वे इस हिंदी कार्य के लिए कितने लाख व्यय कर रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि इस भाषा को दक्षिण के बहुत से लोगों ने अखिल भारतीय भाषा मान लिया है और इसमें उन्होंने जिस जोश का प्रदर्शन किया है उसके लिए उत्तर भारतीयों को उन्हें बधाई देनी चाहिए, मान्यता देनी चाहिये और धन्यवाद देना चाहिये।

यदि आज उन्होंने किसी विशेष बात पर हठ किया है तो हमें याद रखना चाहिये कि आखिर यदि हिंदी को उन्हें स्वीकार करना है तो वे ही करेंगे, उनकी ओर से हम तो नहीं करेंगे, और आखिर यह क्या बात है जिस पर इतना वाद-विवाद हो गया है? मैं आश्चर्य कर रहा था कि हमें

छोटे से मामले पर इतनी बहस करने की, इतना समय बर्बाद करने की क्या आवश्यकता है 9 आखिर अंक है क्या? दस ही तो हैं। इन दस में, मुझे याद पड़ता है कि तीन तो ऐसे हैं जो अंग्रेजी में और हिंदी में एक से हैं। - 2, 3 और 0 1 मेरे ख्याल में चार और हैं जो रूप में एक से हैं किन्तु उनसे अलग-अलग कार्य निकलते हैं। उदाहरण के लिए हिंदी का 4 अंग्रेजी के 8 (8) से बहुत मिलता जुलता है, यद्यपि एक 4 के लिए आता है और दूसरा 8 के लिए। अंग्रेजी का 6 हिंदी के 7 से बहुत मिलता है, यद्यपि उन दोनों के भिन्न भिन्न अर्थ हैं। हिंदी का 9 जिस रूप में अब लिखा जाता है, मराठी से लिया गया है और अंग्रेजी के 9 से बहुत मिलता है। अब केवल दो-तीन अंक बच गये जिनके दोनों प्रकार के अंकों में भिन्न-भिन्न रूप हैं और भिन्न भिन्न अर्थ हैं। अतः यह मुद्रणालय की सुविधा या असुविधा का प्रश्न नहीं है जैसा कि कुछ सदस्यों ने कहा है। मेरे विचार में मुद्रणालय की दृष्टि से हिन्दी और अंग्रेजी अंकों में कोई अंतर नहीं है।

किन्तु हमें अपने मित्रों की भावनाओं का आदर करना है जो उसे चाहते हैं, और मैं अपने सब हिन्दी मित्रों से कहूंगा कि वे इसे उस भावना से स्वीकार करें, इसलिए स्वीकार करें कि हम उनसे हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि स्वीकार करवाना चाहते हैं और मुझे प्रसन्नता है कि इस सदन ने अत्यधिक बहुमत से इस सुझाव को स्वीकार कर लिया है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आखिर यह बहुत बड़ी रियायत नहीं है। हम उनसे हिन्दी स्वीकार करवाना चाहते थे और उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया, और हम उनसे देवनागरी लिपि को स्वीकार करवाना चाहते थे, वह भी उन्होंने स्वीकार कर ली। वे हमसे भिन्न प्रकार के अंक स्वीकार करवाना चाहते थे, उन्हें स्वीकार करने में कठिनाई क्यों होनी चाहिए? इस पर मैं छोटा सा दृष्टान्त देता हूं जो मनोरंजक होगा। हम चाहते हैं कि कुछ मित्र हमें निमन्त्रण दें। वे निमन्त्रण दे देते हैं। वे कहते हैं, आप आकर हमारे घर में ठहर सकते हैं उसके लिए आपका स्वागत हैं। किन्तु जब आप हमारे घर आयें तो कृपया
अंग्रेजी चलन के जूते पहनिये, भारतीय चप्पल मत पहनिये जैसा कि आप अपने घर में पहनते हैं। "उस निमंत्रण को केवल इसी आधार पर ठुकराना मेरे लिए बुद्धिमत्ता नहीं होगी कि मैं चप्पल को नहीं छोड़ना चाहता। मैं अंग्रेजी जूते पहन लूंगा और निमंत्रण को स्वीकार कर लूंगा और इसी सहिष्णुता की भावना से राष्ट्रीय समस्याएं हल हो सकती हैं।

हमारे संविधान में बहुत से विवाद उठ खड़े हुए हैं और बहुत से प्रश्न उठे हैं जिन पर गम्भीर मतभेद थे किन्तु हमने किसी न किसी प्रकार उनका निपटारा कर लिया। यह सब से बड़ी खाई थी जिससे हम एक दूसरे से अलग हो सकते थे। हमें यह कल्पना करनी चाहिये कि यदि दक्षिण हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को स्वीकार नहीं करता तब क्या होता। स्विटजरलैण्ड जैसे छोटे से, नन्हें से देश में तीन भाषाएं हैं जो संविधान में मान्य हैं और सब कुछ काम उन तीनों भाषाओं में होता है। क्या हम समझते हैं कि हम केन्द्रीय परशासनीय परयोजनों के लिए उन भाषाओं को रखने की सोचते जो भारत में प्रचलित हैं तो क्या हम सब प्रान्तों को साथ रख सकते थे, सब में एकता करा सकते थे? प्रत्येक पृष्ठ को शायद पन्द्रह बीस भाषाओं में मुद्रित करना पड़ता।

यह केवल व्यय का प्रश्न नहीं है। यह मानसिक दशा का भी प्रश्न है जिसका हमारे समस्त जीवन पर प्रभाव पड़ेगा। हम केन्द्र में जिस भाषा का प्रयोग करेंगे उससे हम एक दूसरे के निकटतर आते जायेंगे। आखिर अंग्रेजी से हम निकटतर आये हैं क्योंकि यह एक भाषा थी। अंग्रेजी के स्थान पर हमने एक भारतीय भाषा को अपनाया है, इससे अवश्यमेव हमारे सम्बन्ध घनिष्टतर होंगे, विशेषतः इस लिये कि हमारी परम्पराएं एक ही हैं, हमारी संस्कृति एक ही है और हमारी सभ्यता में सब बातें एक ही हैं। अतएव यदि हम इस सूत्र को स्वीकार नहीं करते तो परिणाम यह होता कि इस देश में बहुत सी भाषाओं का प्रयोग होता या वे प्रांत पृथक हो जाते जो बाध्य होकर किसी भाषा विशेष को स्वीकार करना नहीं चाहते थे। हमने यथासम्भव बुद्धिमानी का कार्य किया है और मुझे हर्ष है, मुझे प्रसन्नता है और मुझे आशा है कि भावी सन्तति इसके लिए हमारी सराहना करेगी"।

अब यहां मैं संविधान सभा में जिस रूप में राजभाषा को स्वीकृत किया उसे भी यथावत् दे रहा हूं:—

भाग-14-क

राजभाषा

अध्याय—1 संघ की राजभाषा

301—क (1) संघ की राजभाषा हिंदी ओर लिपि देवनागरी होगी।

संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खण्ड (1) से किसी बात के होते हुए भी इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालाविधि के लिये संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिये अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी जिनके लिये ऐसे प्रारम्भ के ठीक पहिले वह प्रयोग की जाती थी:

परन्तु राष्ट्रपति उक्त कालावधि में, आदेश द्वारा, संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिंदी भाषा का तथा भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के साथ-साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी संसद उक्त पन्द्रह साल की कालावधि के पश्चात विधि द्वारा—

(क) अंग्रेजी भाषा का, अथवा

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबन्धित कर सकेगी जैसे कि ऐसे विधि में उल्लिखित हों।

301—ख राजभाषा के लिए संसद का आयोग और समिति।

(1) राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति पर तथा तत्पश्चात ऐसे प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा, एक आयोग कठित करेगा जो एक सभापति और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिल कर बनेगा जैसे कि राष्ट्रपति नियुक्त करें, तथा आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया भी आदेश परिभाषित करेगा।

(2) राष्ट्रपति को—

(क) संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये हिन्दी भाषा के उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग के,

(ख) संघ के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिये अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बन्धनों के,

(ग) अनुच्छेद 348 में वर्णित प्रयोजनों में से सब या किसी के लिये प्रयोग की जाने वाली भाषा के,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक उल्लिखित प्रयोजनों के लिए प्रयोग किये जाने वाले अंकों के रूप के,

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच अथवा एक राज्य और दूसरे के बीच संचार की भाषा तथा उनके प्रयोग के बारे में राष्ट्रपति द्वारा आयोग पृच्छा किये हुये किसी अन्य विषय के बारे में सिफारिश करने में आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का तथा लोक सेवाओं के बारे में अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों के लोगों के न्यायपूर्ण दावों और हितों का सम्यक ध्यान रखेगा।

(3) खण्ड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने में आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का तथा लोक सेवाओं के बारे में अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों के लोगों के न्यायपूर्ण दावों और हितों का सम्यक ध्यान रखेगा।

(4) तीस सदस्यों की एक समिति गठित की जायेगी जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्य परिषद के सदस्य होंगे जो कि क्रमशः लोक सभा के सदस्यों तथा राज्य परिषद के सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(5) खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करना तथा उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को करना समिति का कर्तव्य होगा।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति खण्ड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात उस सारे प्रतिवेदन के या उस के किसी भाग के अनुसार निर्देश निकाल सकेगा।

अध्याय 2—प्रादेशिक भाषाएं

301—ग राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं

अनुच्छेद 343 और 347 के उपबन्धों के अधीन रहते हुये राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिये प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिंदी को अंगीकार कर सकेगाः

परन्तु जब तक राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा इस से अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक राज्य के भीतर उन राजकीय प्रयोजनों के लिये अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी जिनके लिये इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहिले वह प्रयोग की जाती थी।

301—घ संघ में एक राज्य और दूसरे के बीच में अथवा राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा

राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयुक्त होने के लिये तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ के बीच में संचार के लिये राजभाषा होगी।

परन्तु यदि दो या अधिक राज्य करार करते हैं कि ऐसे राज्य के बीच में संचार के लिये राजभाषा हिन्दी भाषा हो तो ऐसे संचार के लिए वह भाषा प्रयोग की जा सकेगी।

301—ङ किसी राज्य के जन-समुदाय के किसी भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध

तद्विषयक मांग की जाने पर यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाय कि किसी राज्य के जनसमुदाय का पर्याप्त अनुपात चाहता है कि उस के द्वारा बोली जाने वाली कोई भाषा राज्य द्वारा अभिज्ञात की जाये तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को उस राज्य में सर्वत्र अथवा उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिये जैसा कि वह उल्लिखित करे राजकीय अभिज्ञा दी जाये।

अध्याय ∙3

उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

301—च (1) उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में तथा अधिनियम, विधेयकों, आदि में प्रयोग की जाने वाली भाषा

इस भाग के पूर्ववर्ती उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे, तब तक—

(क) उच्चतम न्यायालय में तथा प्रत्येक उच्चतम न्यायालय में सब कार्यवाहियां,

(ख) जो—

(1) विधेयक, अथवा उन पर प्रस्तावित किए जाने वाले जो संशोधन संसद के प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किये जायें उन सब के प्राधिकृत पाठ,

(2) अधिनियम संसद द्वारा या राज्य के विधान मण्डल द्वारा पारित किये जायें तथा जो अध्यादेश राष्ट्रपति या राज्यपाल या राजप्रमुख द्वारा प्रख्यापित किये जायें उन सब के प्राधिकृत पाठ, तथा

(3) आदेश नियम, विनियम और उप विधि

इस संविधान के अधीन, अथवा संसद या राज्यों के विधान मंडल, द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन, निकाले जायें उन सबके प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(2) खण्ड (1) के उपखण्ड (क) में किसे बात के होते हुए भी किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजन के लिये प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य में मुख्य स्थान रखने वाले उच्च न्यायालय में कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा

परन्तु इस खंड की कोई बात वैसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, आज्ञप्ति अथवा आदेश को लागू न होगी।

(3) खंड (1) के उपखण्ड (ख) में किसी बात के होते हुये भी जहां किसी राज्य के विधान मण्डल ने, उस विधान मण्डल में पुरःस्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उप खण्ड की कण्डिका (घ) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिये अंग्रेजी भाषा से अन्य किसी भाषा के प्रयोग को विहित किया है वहां उस राज्य के राजकीय सूचना पत्र में उस राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उस का अनुवाद उस खण्ड के अभिप्रायों के लिये उस का अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जायेगा।

301—छ भाषा संबंधी कुछ विधियों के अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्षों की कालावधि तक अनुच्छेद 348 के खण्ड (1) में वर्णित प्रयोजनों में से किसी के लिये प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबन्ध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के अधिनियम किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना न तो पुरःस्थापित और न प्रस्तावित किया जायेगा तथा ऐसे किसी विधेयक के पुरःस्थापित अथवा किसी संशोधन के प्रस्ताव किये जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर, तथा उस अनुच्छेद के खण्ड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर, विचार करने के पश्चात ही राष्ट्रपति देगा।

अध्याय—4 विशेष निदेश

301—ज व्यथा के निवारण के लिए अभिवेदन में प्रयोक्तव्य भाषा

किसी व्यथा के निवारण के लिये संघ या राज्य के किसी पदाधिकारी या प्राधिकारी को यथास्थिति संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली भाषा में अभिवेदन देने का प्रत्येक व्यक्ति को हक होगा।

301—झ हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश।

हिन्दी भाषा की प्रसार वृद्धि करना उस का विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, तथा उस की आत्मीयता में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावलि को आत्मसात करते हुये तथा जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उस के शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः वैसी उल्लिखित भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उस की समृद्धि निश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।

20—क

1. असमिया	8.मराठी
2. बंगला	9.उड़िया
3.कन्नड	10. पंजाबी
4. गुजराती	10.क. संस्कृत
5. हिन्दी	11. तमिल
6. कश्मीरी	12. तेलगु
7. मलयालम	13. उर्दू

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

मौलाना हसरत मोहनी: मैं चाहती हूं कि मेरा विरोधी मत लिखा जाये तथा उसके साथ यह भी लिखा जाये कि ......

अध्यक्षः ऐसी कोई प्रक्रिया नहीं है कि किसी व्यक्ति का मत लिखा जाये, विशेषतः उसके किसी कथन के साथ प्रश्न यह है :

"कि भाग 14—क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

भाग14—क संविधान में जोड़ दिया गया।

निश्चय ही अब राजभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में विस्तार से लोगों को जानकारी हो सकेगी।

उपाध्यक्ष, संसदीय राजभाषा समिति, 15, गुरूद्वारा रकाब गंज रोड़, नई दिल्ली

भाषा की सरलता

—ब्रजकिशोर शर्मा

भाषा की सरलता का आग्रह उचित है। किंतु यह भी जानना आवश्यक है कि आग्रहकर्ता का सरलंता से क्या तात्पर्य है। क्या सरलता का कोई शास्त्रीय अर्थ है।

एक उल्लेखनीय बात यह है कि कठिनता का दोष केवल हिंदी भाषा में ही है ऐसा प्रतीत होता है। अंग्रेजी भाषा को सरल करने का विचार किसी भी संघ से सुनने को नहीं मिलता। शिकायत मिलती है तो यही कि अंग्रेजी का भारतीयकरण हो रहा है। हिन्दी वाले अपने ढंग से लिखते हैं, तमिल वाले अपने ढंग से। हिन्दी पर ही यह आक्षेप क्यों है, यह भी विचारणीय है।

सामान्य बोलचाल की भाषा का स्वरूप और संरचना शास्त्रीय भाषा से भिन्न होती है। विधि के लेखन की, विशेषतया अधिनियमित विधि के प्रारूपण की, भाषा का प्रयोजन और उसके बंधन, उसकी वाक्य रचना और शब्द संचय का निर्णय करते है। प्रारूपण की भाषा का एक लक्ष्य संप्रेपणीयता या बोधगम्यता है। किंतु यह एक मात्र उद्देश्य नहीं है। उसे एकार्थता की और निर्वचन के नियमों के अनुरूप होने की दो महत्वपूर्ण शर्तों को भी पूरा करना पड़ता है। यदि इनकी अपेक्षा हुई तो विधि के निर्माण के उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होगी। जिस कार्य के लिए विधान बनाया गया था वह सिद्ध नहीं होगा।

सरलता का एक अर्थ यह होता है कि ऐसे शब्दों का प्रयोग हो जो प्रचलित हों। जो "सब" समझते हों। जिन लोगों ने इस विषय का अध्ययन किया है, उनका निष्कर्ष है कि शब्द में जितने कम अक्षर होंगे वह उतना ही सरल होगा। हिन्दी में एक से तीन अक्षर वाले शब्दों की भरमार है। उनका प्रयोग भी होता हैं। किन्तु ऐसे शब्दों के प्रयोग की सीमा है। हिन्दी के शब्द भंडार में सभी शब्द इस आकार के नहीं है। हिन्दी की क्यों किसी भी भाषा में ऐसा नहीं हो सकता। हमारे पास "नियम" है किन्तु केवल एक इसी शब्द से तो भी विचारों की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। हमें अधिनियम, परिनियम, संनियम और विनियम का भी प्रयोग करना होगा। केवल "शेष" हमारे विचारों के संप्रेपण के लिए पर्याप्त नहीं है। हमें अवशेष, अतिशेष, अधिशेष, विशेष और निःशेष की भी आवश्यकता है। संघ के साथ परिसंघ और अधिसंघ भी चाहिए तभी हम सार्थक संदेश दे पाएंगे। संक्षेप में यह इस पर निर्भर करेगा कि आपके पास कहने के लिए क्या हैं। जितना गंभीर विषय होगा, जितना गहन अध्ययन होगा उतनी ही अभिव्यक्ति सूक्ष्म होगी। उसी अनुपात में शब्दों की भी आवश्यकता होगी। कम शब्दों से काम नहीं चलेगा। सटीक अभिव्यकित के लिए विशाल शब्द भंडार चाहिए तभी शब्दों का चयन सही होगा।

शब्द संप्रेपणीयता का उपादान है। प्रेपक और गृहीता अर्थात लेखक और पाठक या वक्ता और श्रोता का भाषा संस्कार, उनकी शिक्षा-दीक्षा और उनके सामाजिक परिवेश के अनुसार ही संप्रेषणीयता होती है उसी के अनुरूप शब्द चुने जाते है। विष्णु की अर्चना के लिए कमल चाहिए किन्तु आशुतोष के लिए अकाव और बेलपत्र ही उपयुक्त है। जैसा देव वैसी पूजा। ग्राहक और दूकानदार की भाषा में दार्शनिक विवेचन नहीं होता। विश्वविद्यालय में तत्वमीमांसा की भाषा का प्रयोग, अस्पताल में नर्स से नहीं हो सकता। वित्त मंत्री के बजट भाषण की भाषा निर्वाचन क्षेत्र में मत याचना की भाषा नहीं हो सकती।

भाषायी प्रक्रिया सामाजिक प्रक्रिया है। भाषाभेद का कारण सामाजिक संदर्भ है। एक ही भाषा में अभिव्यक्ति के अनेक विकल्प होते हैं। विषय, परिस्थिति, व्यक्ति के सामाजिक स्तरभेद, प्रयोजन आदि के आधार पर प्रयोग में विविध विकल्प होते हैं। भाषा का प्रयोग सामाजिक संदर्भ में ही होता है। यदि समाज में विविधता है तो वह भाषा में भी परिलक्षित होगी। भाषा का प्रयोगनिरपेक्ष मानकरूप नहीं हो सकता। भाषा, व्यक्ति और समाज अन्योन्याश्रित है। इसलिए सभी स्तर के व्यक्तियों के लिए भाषा समानरूप से बोधगम्य नहीं हो सकती। विशेष विषय के अध्ययनकर्ता या विशेष व्यवसाय में लगे लोग विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करते हैं। निरंतर प्रयोग से शब्द विचारों को संक्षेप में संप्रेषित करने लगते है। आज चिकित्सा के क्षेत्र में अंग्रेजी और लेटिन के अनेक शब्द और उनकी संक्षिप्तियां विशेषज्ञों के विचार के समर्थ वाहक बने हुए है। सामान्यजन के लिए वे अर्थहीन ध्वनि मात्र हैं।

प्रचलन से शब्द परिचित की श्रेणी में आ जाता है। जब किसी व्यक्ति का परिचित शब्द वाक्य में जुड़ा हुआ मिलता है तो वह संप्रेषणीय हो जाता है। दुर्बोध क्लिष्ट शब्द नहीं है जिससे हमारा परिचय नहीं है।

जो शब्दों के कठिन होने की शिकायत करते है वे यह भूल जाते हैं कि जिस शब्द से पूर्व परिचय नहीं होता वहीं कठिन प्रतीत होता है। परिचय होगा प्रचलन से। प्रचलन का मार्ग रोककर बार-बार सरलता का नारा लगाने से भाषा का विकास अवरूद्ध हो जाएगा। इसी विरोध का दुष्परिणाम हमारे देश का साधारण जन भुगत रहा है। उच्च वर्ग तो अंग्रेजी के माध्यम से शासक बना हुआ है। भारतीय भाषाओं में माध्यम से अध्ययन करने वाले लोगों को भ्रमित कर उनका शोषण हो रहा है।

सरलता का दूसरा अर्थ है वाक्य की सरलता अर्थात् वाक्य का गठन इस प्रकार का हो कि पढ़ने पर या सुनने पर अर्थ समझ में आ जाए।

अनुसंधानकर्ताओं के यह निष्कर्ष है कि वाक्य में शब्द संख्या जितनी कम होगी उतना ही वह सुबोध होगा। वाक्य में शब्दों की संख्या में वृद्धि के साथ उसकी कठिनाता भी वृद्धिगत होगी है। 10-11 शब्दों के वाक्य सरल होते हैं। किन्तु 17-18 से अधिक शब्द वाक्य कठिनाई की पहली सीढ़ी पर आ जाता है। विधि में तो 100-150 शब्दों के वाक्य तो सामान्य दिखाई पड़ते हैं। कोई-कोई वाक्य तो पूरे पृष्ठ पर फैले होते हैं। यह विस्तार पूर्णतया अकारण नहीं है। गत दो सौ वर्षों में विधि के प्रारूपण और निर्वचन के सिद्धांत स्थिर हुए हैं। न्यायालय निर्वचन के सिद्धांत और साधारण खंड अधिनियम के आधार पर अर्थान्वयन करते हैं। न्यायालय को ही यह अधिकार है कि वे यह निर्णय दें कि किसी धारा का अर्थ क्या है। अतएव न्यायालय द्वारा प्रणीत नियमों और न्यायालय के निर्णयों के अनुसार प्रारूपण करना एक विवशता है। हमने जो विधिक प्रणाली अपना ली है उसकी सीमाओं के भीतर ही भाषाई विकल्प उपलब्ध है। जब तक यह प्रणाली नहीं बदली जाएगी वाक्य रचना में विशेष परिर्वतन करना संभव नहीं होगा। इस दुरूहता के पीछे हिन्दी के विधि के प्रारूपकार की विवशता है दुराग्रह नहीं।

2nd Witness:
Address____________
Occupation__________

* To be filled in by the borrower.

इसके साक्ष्य स्वरूप उधार लेने वाले और प्रतिभू ने तथा भारत के राष्ट्रपति की ओर से____________ मंत्रालय/कार्यालय के श्री ____________ ने इस ____________ पर अपने-अपने हस्ताक्षर कर दिए हैं

उधार लेने वाले ने

(1) .... (साक्षी का नाम, पता और व्यवसाय)

(उधार लेने वाले के हस्ताक्षर)

.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

(2) ....

(साक्षी का नाम, पता और व्यवसाय) (प्रतिभू के हस्ताक्षर)

प्रतिभू का नाम ....

.... (साक्षी के हस्ताक्षर) पदनाम ....

मंत्रालय / कार्यालय ....

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए भारत के राष्ट्रपति के लिए और उनकी ओर से ....

मंत्रालय / कार्यालय के श्री.................. ने..........

(राष्ट्रपति के लिए और उनकी ओर से हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर)

(1) ....

(साक्षी का नाम पता और व्यवसाय)

.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

(2) ....

(साक्षी का नाम पता और व्यवसाय)

.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए

* उधार लेने वाले द्वारा भरा जाए।

IN WITNESS WHWEREOF the parties hereto have set their hands on the dates hereinafter named respectively.

Signed and elivered by ..

....

this . . day of ....

one thousand nine hundred and .... (Signed)

In the presence of:

(1) ....

....

(2) .... (Signed)

....

Signed by...........

....

by order of the President of India in the presence of:

....

....

इसके साक्ष्य स्वरूप इसके पक्षकारों ने इसमें आगे लिखी तारीखों को अपने हस्ताक्षर कर दिए हैं।

____________ ने आज

तारीख ____________ को

(1) ____________ ____________

____________ (हस्ताक्षर)

(2) ____________ ____________

(हस्ताक्षर)

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए और परिदान किया। भारत के राष्ट्रपति के आदेश से____________ ने

____

____

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए

IN WITNESS WHEREOF THE BORROWER AND THE SURETY

have hereunto set their hand and Shri ____________ in the Ministry/Office of ____________ in the Ministry/Office of ____________ for and on behalf of the President of India has hereunto set his hand.

Signed by the Borrower in the presence of: (Signature of the Borrower)

1st Witness:
Address____________
Occupation

2nd Witness: ____________
Address____________ (Signature of the Surety)
Occupation____________ at present employed as...

Signed by Shri____________ ____________in the
in the Ministry/ ____________in the
Office____________ Ministry/Office____________

in the Presence of ______________ ______________

____

____

(for and on behalf of the President of India)

1st Witness:
Address______________
Occupation

2nd Witness:
Address______________
Occupation______________

* To be filled in by the borrower.

इसके साक्ष्य स्वरूप उधार लेने वाले और प्रतिभू ने तथा भारत के राष्ट्रपति की ओर से______________ मंत्रालय/कार्यालय के श्री ______________ ने इस ______________ पर अपने-अपने हस्ताक्षर कर दिए हैं

उधार लेने वाले ने

(1) .... (साक्षी का नाम, पता और व्यवसाय)
(उधार लेने वाले के हस्ताक्षर)
.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

(2) ....
(साक्षी का नाम, पता और व्यवसाय) (प्रतिभू के हस्ताक्षर)
प्रतिभू का नाम ....
.... (साक्षी के हस्ताक्षर) पदनाम ....
मंत्रालय / कार्यालय ....

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए भारत के राष्ट्रपति के लिए और उनकी ओर से ....
मंत्रालय / कार्यालय के श्री.................. ने..........
(राष्ट्रपति के लिए और उनकी ओर से हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर)

(1) ....
(साक्षी का नाम पता और व्यवसाय)
.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

(2) ....
(साक्षी का नाम पता और व्यवसाय)
.... (साक्षी के हस्ताक्षर)

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए

* उधार लेने वाले द्वारा भरा जाए।

IN WITNESS WHWEREOF the parties hereto have set their hands on the dates hereinafter named respectively.

Signed and clivered by . .
....
this . . day of ....
one thousand nine hundred and .... (Signed)

In the presence of:
(1) ....
....
(2) .... (Signed)
....

Signed by. . . . .
....
by order of the President of India in the presence of:
....
....

इसके साक्ष्य स्वरूप इसके पक्षकारों ने इसमें आगे लिखी तारीखों को अपने हस्ताक्षर कर दिए हैं।

______________ ने आज
तारीख ______________ को

(1) ______________ ______________
______________ (हस्ताक्षर)

(2) ______________ ______________
(हस्ताक्षर)

की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए और परिदान किया। भारत के राष्ट्रपति के आदेश से______________ ने
____
____
की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए

इस अंग्रेजी पैरा के हिंदी पाठ से इसकी तुलना करने पर यह सहज की स्पष्ट हो जाएगा कि हिंदी कही अधिक बोधगम्य है।

Every rule made udner this Act shall be laid, as soon as may be after it is made, before each House of Parliament, while it is in session, for a total period of thirty days which may be comprised in one session of in two or more successive sessions, and if, before the expiry of the session immediately following the session or the successive sessions aforesaid, both Houses agree in making any modification in the rule

शेषांश पृष्ठ 13 पर

हिन्दी भाषा में होने वाली अशुद्धियां

— डा॰ (श्रीमती) प्रेम भार्गव

किसी भी भाषा का विकास तभी संभव है जब अधिक से अधिक लोगों के द्वारा उसे प्रयोग में लाया जाए। अधिकतम लोगों द्वारा प्रयोग करने पर उसमें कुछ विकार भी आते-जाते हैं। समय के अन्तराल पर वैयाकरण उनमें से कुल विकारों को व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध मान कर स्वीकार भी कर लेते हैं, पर अधिकांश अशुद्ध ही माने जाते हैं। आजकल की हिन्दी भाषा में भी व्याकरण संबंधी अनेक प्रकार की अशुद्धियां दृष्टिगोचर होती रही हैं, जिनमें निम्न मुख्य हैं।

(1) कारक की विभक्ति की अशुद्धि

इसमें विशेषतः कर्ता कारक की विभक्ति "ने" का प्रयोग गलत स्थान पर किया जा रहा है और जहां "ने" का प्रयोग होना चाहिए वहां नहीं किया जा रहा है, उदाहरणार्थ—

(क) प्रशासन ने अपने रवैये में बदलाव नहीं लाया (जनसत्ता)

(ख) महाराष्ट्र उपभोक्ता विकास केन्द्र ने——————— एक परिसंवाद का आयोजन किया जाएगा (जनसत्ता)

(ग) सरकार ने तो एतियात बरतने बारे में कोई प्रचार मुहिम चलाई, न अभी फैल रही अफवाहों, आशंकाओं के निराकरण का कोई उपाय कर रही है (जनसत्ता)

(घ) पुलिस ने ऐसे कई मामले सामने लाए हैं।

(ङ) सरकार विदेशी एजेंसियों के दबाव में आकर अपना सारा ध्यान महिलाओं पर केन्द्रित कर दिया है। (नवभारत टाइम्स)

(च) मुख्य सचिव ने अपनी रिपोर्ट 17 फरवरी को भेजने को कहा गया है (नवभारत टाइम्स)

(छ) आयोग ने मुख्य सचिव को भेजे निर्देश के बारे में वे कुछ अधिक नहीं कहना चाहते।

(ज) सरकार की ऐसी कोशिशों का देश भर के तमाम महिला संगठनों का विरोध किया है।

वस्तुतः "ने" कर्ता कारक की विभक्ति अवश्य है पर कर्ता के साथ उसका प्रयोग प्रायः प्रच्छत्र होता है; केवल सकर्मक क्रिया के भूतकाल के कर्ता के साथ उसका प्रयोग किया जाता है उदाहरण क, घ की क्रिया अकर्मक है। अतः उसके कर्ता के साथ ने का प्रयोग अशुद्ध है। उदाहरण ग एवं ड, की क्रिया सकर्मक है अतः उसके कर्ता "सरकार" के साथ ने का प्रयोग किया जाना चाहिए था। उदाहरण ख, च, छ कर्मवाच्य हैं। व्याकरण के नियम के अनुसार कर्मवाच्य में क़तार करण कारण में बदल जाता है उसके साथ "ने" का प्रयोग न करके "के द्वारा" का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण "ज" में महिला संगठनों के साथ "का" का प्रयोग अर्थ का अनर्थ ही कर रहा है। "ग" में "बरतने" के साथ "के" का प्रयोग भी होना चाहिए था।

(2) "कि" और "की" का अन्तर प्रायः स्पष्ट नहीं है और उसका गलत प्रयोग किया जाता है। "कि" समुच्च्य-बोधक है और दो वाक्यों को जोड़ने का कार्य करता है जब कि "की" संबंध कारक की विभक्ति है, संबंध बोधक है और दो शब्दों का संबंध बताता है उदाहरण के लिए निम्न वाक्य पर्याप्त हैः-

(क) कई नेताओं ने लोगों को आश्वासन दिया था "की" इस प्रक्रिया की जांच की जाएगी (जनसत्ता)

(ख) या फिर ये देखिए "की" आपके ऊपर के फ्लेट में पार्टी के नाम पर-----

(3) विशेषण का अनुचित स्थान पर प्रयोग

व्याकरण का नियम है कि विशेषण का प्रयोग प्रायः विशेष्य के पहले किया जाना चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो जाता है। उदाहरणतः—

(क) अमरीका से वे एक हिन्दी की लघु पत्रिका का प्रकाशन कर रहे हैं। (जनसत्ता)

(ख) कुछ और सेना के सशस्त्र जवान पहुंचे

(ग) तीन हजार जवान और कल तक इस क्षेत्र में पहुंचने वाले हैं। (जनसत्ता) उदाहरण "क" में "एक" का प्रयोग "लघु" के पहले "ख" में "कुछ और" का प्रयोग "सशस्त्र जवान" के पहले और "ग" में "और" का प्रयोग "तीन हजार जवान" के पहले होना चाहिए था। हिन्दी कई नहीं है, लघु पत्रिका कई हो सकती है अतः उसके पहले "एक" का प्रयोग वांछनीय है। उसी प्रकार "कुछ और "एवं "और" जवानों की संख्या की वृद्धि को दर्शाता है; "सेना" और "कल" की वृद्धि को नहीं।

(4) स्वतः के लिए प्रायः निजवाचक सर्वमान का प्रयोग न करके अन्यपुरूष के प्रयोग का प्रचलन होने लगा है जो अनुचित है उदाहरणतः-

(क) इस बार के दौरे में "उनकी" जान से वे हाथ धो बैठे (धर्मयुग)

(ख) गगन ने "उसकी" बर्थडे पर बुलाया (धर्मयुग)

(ग) आंटी ने मुझे "उन्ही के" जहां रूकने को कहा (धर्मयुग)

(घ) भारत के लिए "उसकी" अखंडता की हर कीमत पर रक्षा करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है (जनसत्ता)

(5) क्रियाओं के अनुचित रूप का प्रयोगः

(क) अभी हाल ही में ब्रिटिश पर्यटक जोनाथन बुक को बम्बई के प्रधान डाकघर के पास ठगों ने शिकंजे में ऐसे फांसे (जनसत्ता) वाक्य में "फांसे" क्रिया "जोनाथन बुक" से संबंधित है जब कि लेखक के अनुसार वह दो ठगों से संबंधित लगती है इसलिए उसने फांसा का बहुवचन रूप का प्रयोग किया है।

(ख) वे भूकंप प्रभावित क्षेत्रों का दौरा भी लगाकर रहे हैं। (जनसत्ता) वाक्य में "लगा" के साथ "कर" का प्रयोग अवांछनीय है "लगा रहे हैं" ही पर्याप्त है।

(6). अनुचित शब्दों का प्रयोगः

कारतूस के लिए प्रायः जिन्दा कारतूस लिखा जाता है। कारतूस चेतन प्राणी है जो जिन्दा या मृत हो। वस्तुतः "अप्रयुक्त कारतूस" होना चाहिए।

"तकनीकी" शब्द विशेषण है पर इसका प्रयोग संज्ञा के स्थान पर भी देखने को मिलता है। कोई भी प्रत्यय लगा कर शब्दों का निर्माण कर लिया जाता है जैसे "चौड़ीकरण"।

(7). निपात का अनुचित प्रयोगः

अनुचित स्थान पर निपात का प्रयोग अर्थ का अनर्थ कर देता है। उदाहरणतः

(क) नसबंदी कराना तो आसान है ही, साथ में कम कष्टकर भी है (नवभारत टाइम्स) वाक्य में "तो" का प्रयोग "आसान" के बाद होना चाहिए था।

रही सही कसर अनुवाद कार्य ने पूरी कर दी है। अनुवाद कार्य प्रायः अंग्रेजी वाक्यों की तर्ज पर होता है। कभी-कभी तो यह अनुवाद इतना अशुद्ध होता है कि इसे हिन्दी के साथ भौंडा और शर्मनाक मजाक ही कहा जा सकता है। वरली नाका स्थित केनरा बैंक में हिन्दी सप्ताह के आयोजन के समय हिन्दी की जो छीछालेदर की गई उसकी चन्द पंक्तियां उदाहरण के लिए पर्याप्त है "बेहतर है यदि व्यक्ति को मृत्यु हुआ किन्तु व्यक्ति को निर्माण ने किया हुआ आदर्श कभी नहीं मरना चाहिए"।

दुख तो तब अधिक होता है जब इस प्रकार की अशुद्धियां प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में देखने को मिलती हैं। समाचार प्रसारण के साथ-साथ परिष्कृत एवं शुद्ध भाषा के प्रचार-प्रसार में भी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं का बहुत बड़ा योगदान है। सम्पादक को लेखक के लिखित विचारों में परिवर्तन करने का तो कोई अधिकार नहीं है पर क्या वह गलत विचारों की काट-छांट नहीं कर सकता या भाषागत अशुद्धियों में सुधार नहीं कर सकता? यदि ऐसा नहीं है तो लेखक के साथ-साथ वह भी समाज में गलत भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए उत्तरदायी होगा। ■

8सी कंचनजंगा, अणुशक्ति नगर, बम्बई 400094

पृष्ठ 11 का शेषांश

or both Houses agree that the rule should not be made the rule shall thereafter have effect only in such modified form or be of no effect, as the case may be so, however, that any such modification or annulment shall be without prejudice to the validity of anything previsouly done under that rule.

इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा। यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात वह ऐसे परिवर्तित रूप से ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए। तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा। किंतु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। ■

एम-103, धर्म अपार्टमेंट 2, इन्द्रप्रस्थ विस्तार, दिल्ली-110092

हिन्दी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और उसे दृढ़ करती है। देश का कोई भी सच्चा प्रेमी हिन्दी का तिरस्कार नहीं कर सकता। दुनिया से कह दो गाँधी अंग्रेजी नहीं जानता।

महात्मा गाँधी

अनुस्वार और अनुनासिक

--रमेश चन्द्र

नासिक्यता और हिन्दी भाषा

नासिक्यता (nasality) भाषा में प्रमुख लक्षण के रूप में होती है। हिन्दी भाषा में यह दो स्वरूपों में मिलती है। एक वह, जो स्वर में होती है और अनुनासिकता कहलाती है। दूसरी वह, जो व्यंजन में होती है और अनुस्वारता कहलाती है। नासिक्यता के ये दोनों स्वरुप हिन्दी भाषा की मुख्य विशेषताओं में से है। हिन्दी भाषा में इनका प्रयोग लिपि के अभिन्न अंग के रूप में होता है। इन दोनों का न केवल कार्य-क्षेत्र ही अलग-अलग है, बल्कि प्रकार्य (function) भी बंटा हुआ है। स्वनिमिक (अर्थ-भेदक / phonemic) होने के कारण ये परस्पर प्रायः व्यतिरेकी वितरण (contrastive distribution) में मिलती हैं (यथा कांत kant काँत kat, हंस hans—हँस hes, पर कहीं-कहीं परिपूरक वितरण (complementary distribution) में भी मिलती है, यथा डांड dand —डाँड dad.

भाषिक परिवर्तन और नासिक्यता

भाषा के परिवर्तन की प्रक्रिया के बारे में आम धारणा है कि पहले वाक् (spoken language) में परिवर्तन होता है, फिर उसके लिखित रूप में। परन्तु हिन्दी में नासिक्यता के संबंध में स्थिति कुछ भिन्न है।

जहां तक अनुनासिकता का संबंध है, इसका औच्चारणिक रूप तो ज्यों का त्यों बना हुआ है, परन्तु लेखन में अनुनासिकता-चिह्न (चन्द्र-बिन्दु) की जगह अनुस्वारता-चिह्न (बिन्दु) का प्रयोग होने लगा है, यथा "जाएँगे" की जगह "जाएंगे"। अनर्ह प्रतिस्थापन (unqualified substitution) की इस प्रवृत्ति का प्रादुर्भाव लेखन, टंकण तथा कंपोजिंग में प्रयत्न-लाघव (economy of effort) के कारण हुआ, जिसकी तुलना में अर्थ-भेदकता पर ध्यान नहीं दिया गया। भाषाविदों की दृष्टि में यह विकास मान्य नहीं है, क्योंकि लैखिक प्रयत्न-लाघव के बावजूद "फ" को "प", "ई" को "इ" और "ड़" को "ड" लिखना किसी को गंवारा नहीं होता। इन सब के मूल में हमें इनकी भिन्न स्वनिकता (phoneticality) और स्वनिमिकता (phonemicity) का परोक्ष ज्ञान होता है।

अनुस्वारता में परिवर्तन औच्चारणिक स्तर पर होने लगा है, लिखित रूप ज्यों का त्यों है, यथा "मांस" की जगह "माँस" उच्चारण।

अतः स्वनिमिकीगत उक्त दृष्टिकोण की अनुस्वार और अनुनासिक के संबंध में नितान्त आवश्यकता है, जिसका अभाव भाषा में अव्यवस्था और भ्रम उत्पन्न करता है।

ऐसी स्थिति से उबरने के लिए प्रयोक्ता को इनके कार्य-क्षेत्र, अर्थ-भेदक प्रकार्यों, प्रयोग के स्वरूप तथा इन पर स्वनिक प्रतिबंधों की जानकारी होनी जरूरी है। इस अध्ययन के लिए पहले अनुनासिकता को लेते हैं।

अनुनासिकता

अनुनासिकता स्वरीय लक्षण है। यह वह स्थिति है, जब किसी स्वर-ध्वनि के उच्चारण में मुख-विवरण (mouth-cavity) के साथ-साथ नासिका-विवर (nasal cavity) से भी वायु निःसृत हो। इसी औच्चारणिक स्थिति को मूर्त रूप देने के लिए संबद्ध स्वर-स्वन-प्रतीक के ऊपर अनुनासिकता के स्वन-प्रतीक (phonetic symbol) चन्द्र-बिन्दु (ँ) का प्रयोग किया जाता है और अनुनासिकतासह स्वरों को अनुनासिक स्वर (nasal vowels) कहा जाता है। चूंकि अनुनासिकता की व्याप्ति सभी स्वरों में समान रूप से होती है, अतः मितव्ययिता के सिद्धंत को ध्यान में रखते हुए यह एक स्वरीय लक्षण (vowel-characteristic) माना जा सकता है, अलग स्वनिम (phoneme) अक्षर (syllable) या व्यंजनगत लक्षण (consonantal characteristic) नहीं। यही कारण है कि अनुनासिकतायुक्त स्वरों का उच्चारण स्वर+अनुनासिकता से एक ही प्रयत्न में होता है, यथा बाँस=ब्+(आ+~*+स्+अ० लेखन-व्यवस्था में भी इसी कारण चन्द्र-बिन्दु स्वरों के ऊपर लगता है, व्यंजनों के ऊपर नहीं, यथा बाँस / ba~s, जांचja~c, न कि बाँस~bas, जाँचj~ac आदि। अनुनासिकतायुक्त व्यंजनों में भी अनुनासिकता का प्रयोग "अ" स्वर-प्रतीक "पाई"(।) के ऊपर होता है, व्यंजन के ऊपर नहीं, यथा "गँवारा" न कि "गँवारा)। इसीलिए स्वर-प्रतीक "पाई" रहित व्यंजन अर्थात् हल् (शुद्ध व्यंजन, जिसमें स्वर न मिला हो) के ऊपर अनुनासिकता-चिह्न का प्रयोग कभी नहीं होता, यथा "हँ", "गँ" न कि "ह्ँ", "ग्ँ"। दूसरे शब्दों में, शब्दों में अनुनासिकता का औच्चारणिक योग स्वरों के साथ होता है। इनका उच्चारण मुख और नासिक दोनों से होने के कारण कोमल होता है, यथा हँसhans, छाँवcha~w।

"अनुनासिक" या "अनुनासिकता" से "अनु+नासिक-प्रयोग" अर्थात् नासिका-प्रयोग बाद में होने की अवधारणा सामने आती है। यदि सूक्ष्म रूप में देखा जाए तो "आँवa~wa शब्द (उदाहरणार्थ) में "आँ" (a) अक्षर syllable) के उच्चारण में भी "आ" का उच्चारण मुख-विवर से पहले प्रारम्भ होता है और उसके तुरन्त बाद नासिका-विवर से अनुनासिकता का। परन्तु स्वर और अनुनासिकता के उच्चारण के मध्य यह अन्तर इतना सूक्ष्म है कि इसका आभास नहीं होता। अतः यह मान लिया जाता है कि अनुनासिक के उच्चारण में स्वर और अनुनासिकता का उच्चारण एक साथ होता है। अनुप्रयोग के स्तर पर, "आँवा" में "आ" और अनुनासिकता (~* का उच्चारण यदि न्यूनतम कालान्तर से या इसके बिना किया जाए, तो वह उच्चारण प्रचलित भाषिक रूप से भिन्न होगा।

अनुस्वारता

अनुस्वारता व्यंजनगत लक्षण है। अनुस्वारता के चिन्ह (-) का प्रयोग, शुद्ध नासिक्य व्यजनों (ङ्, ञ, ण्, न्, म्) के लिए किया जाता है। यह वह स्थिति है, जब इन व्यंजनों का उच्चारण मुख-विवर से न होकर नासिका-विवर से हो। इनके इस रूप को अनुस्वार कहा जाता है। अनुस्वार का उच्चारण नासिका से होने के कारण अनुवाद (resonance) की दृष्टि से अनुनासिक की तुलना में तीव्र होता है, यथा कंस Kens-कँस Ka~s, काँत Kant-कांतKa~t नासिका-विवर से ही इसे मुखरता (Sonority) मिलती है। प्रायौगिक तौर पर यदि "कंस" में अनुस्वार के

उच्चारण के समय नासिका-विवर बन्द कर लिया जाए, तो इसका उच्चारण हो ही नहीं पाता।

चूंकि कोई भी स्वर नासिका-विवर से न बोला जा कर केवल मुख-विवर से बोला जाता है, अतः वर्णमाला में स्वरों के बाद "अ" स्वन (phone) नासिका-विवर से उच्चारित होने के कारण "अनुस्वार" कहलाता है, स्वर नहीं। परन्तु इससे एक प्रश्न उठता है—अनुस्वारता के चिह्न का प्रयोग तो शुद्ध नासिक्य व्यंजनों के बदले किया जाता है, परन्तु इसे प्रकट करने के लिए आश्रय "अ" स्वर का लिया जाता है तथा "अं" कोई स्वर न होने पर भी उसे व्यंजनों की अपेक्षा स्वरों के अन्त में स्थान दिया गया है। क्या लिपि में इस चिह्न को अकेले "ॅ" रूप में प्रकट नहीं किया जा सकता था? यह प्रश्न तार्किक अवश्य लगता है, परन्तु अनुस्वारता के चिह्न के लिए देवनागरी में "अं" लेखिम के प्रयोग के पीछे सूक्ष्म वैज्ञानिकता कार्य करती है। भाषा में इस चिह्न का प्रयोग सर्वदा स्वर के बाद किया जता है। इसका प्रयोग शुद्ध व्यंजनों के साथ नहीं होता, यथा हंस=ह्+अ+न्+स्+अ, सुन्दर=स्+उ+न्+द्+अ+र। अतः लिपि में अनुस्वार को व्यवस्था "अ" के साथ (यथा "अं") होने से यह तात्पर्य नहीं कि इसका प्रयोग केवल इस स्वर विशेष के बाद ही हो, बल्कि स्वर के साथ प्रयोग और स्वर के बाद उच्चारण का यह दृष्टान्त मात्र है, प्रयोग का नियम नहीं। लिपि में "अ" के साथ इसका प्रयोग "अं" के रूप में" इसलिए किया जाता है, क्योंकि "अ" व्यंजनों में सर्वव्यापी है और "अ" के प्रयोग से किसी अन्य स्वेर के प्रयोग की अपेक्षा कम भ्रम उत्पन्न होता है। फिर भी वाक् में इसका उच्चारण स्वर-आधारित होने के कारण इसका प्रयोग किसी भी स्वर के साथ हो सकता है, यथा हिंदी, कुंतल आदि। अनुस्वार का प्रयोग स्वर के तुरन्त बाद होने के कारण ही इसे वर्णमाला में भी स्वरों के तुरन्त बाद स्थान दिया गया और इसी कारण अनुनासिक की तरह व्यंजनों में अनुस्वार का प्रयोग भी "अ"—स्वर-प्रतीक "पाई" के ऊपर होता है, (यथा "गं" न कि "ग्ं" (तथा हल् के ऊपर अनुस्वारता के चिह्न का प्रयोग नहीं होता, तथा "कं", "पं", "डं" न कि "कूं" "प्ं" या "ड्ं"।

अनुस्वार के स्वन-प्रतीक phonetic symbol "अं" के स्वरों के तुरन्त बाद रखे जाने, इसके स्वरवत् होने तथा इसका नाम "अनुस्वार" (स्वरों के बाद उच्चारित ध्वनि) होने से इस बात का साक्ष्य जुटता है कि अनुस्वार, वर्ग (pentad) के पंचमाक्षर का प्रतिनिधित्व करने के अतिरिक्त स्वयं में कोई अलग व्यंजन तो है ही नहीं, स्वर भी नहीं है; बल्कि रूप (morph) या रूपिम (morpheme) में जिस नासिक्य व्यंजन-ध्वनि का यह प्रतिनिधित्व करता है, उसे के अनुसार यह स्वनिम (Phoneme) या संस्वन (allophone) होता है।

अनुस्वार का स्वर या व्यंजन में से किसी के साथ कोई योग नहीं होता, इसीलिए यह ध्वनि विसर्ग (:) की भांति अयोगवाह (isolating) कहलाती है। परन्तु इससे इसकी अर्थ-वहन क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

अनुस्वार स्वर के बाद उच्चारित होने के कारण यह स्वर के ऊपर/बाद प्रयुक्त हुई बिन्दी है, न कि व्यंजन के ऊपर/बाद की, यथा कंस=क्+(अ+न्)+स्+अ या क्+अं+स्+अ। अनुस्वार (बिन्दु रूप) का प्रयोग भी ध्वनि-प्रक्रिया से प्रतिबंधित होता है, अतः ङ्, ञ्, ण् आदि की भांति इसके, रूपिम से पृथक, स्वतंत्र प्रयोग की न तो भाषिक शक्यता (possibility) है, न सार्थकता और न ही आवश्यकता है।

अनुस्वारता की यह समानान्तर व्यवस्था केवल लैखिक स्तर पर ही होती है। इसका औच्चारणिक स्वरूप नियम विशेष से नियंत्रित होता है, यानी रूप या रूपिम में अनुस्वार का प्रयोग होने पर उसका उच्चारण परवर्ती व्यंजन (following consonant) के वर्ग के पंचमाक्षरवत् होता है। यदि पंचमाक्षर के बाद किसी अन्य वर्ग का वर्ण हो या उसी पंचगाक्षर का द्वित्व (duality) हो, तो ऐसा पंचमाक्षर अनुस्वार रूप में प्रयुक्त न हो कर हल् रूप में प्रयुक्त होता है, यथा वाङ्मय, सुन्न, अन्याय, सम्मान, उन्नत न कि वांमय, सुंन, अंयाय, संमान, उंनत।

अनुनासिक और अनुस्वार की प्रयुक्ति (register) अथवा लिखित भाषा में पहचान के आधार

हिन्दी भाषा में ऊपर ("ें") तथा बराबर में (ि, ी) लगने वाली मात्राओं के साथ जिस चन्द्र-बिन्दु का प्रयोग होता है, वह अनिवार्यतः अनुस्वार नहीं होता। चन्द्ररहित वह बिन्दु अनुनासिक भी हो सकता है, क्योंकि ऊपर तथा बराबर में लगने वाली मात्राओं के साथ अनुनासिक भी बिन्दु रूप में ही प्रयुक्त होता है। ऐसे नासिक्य वर्णों की अनुस्वारता या अनुनासिकता जानने के कुछ व्यावहारिक एवं पारम्परिक आधार हैं, अर्थातः—

(1) अनुस्वार का प्रयोग शब्द के प्रारम्भिक, मध्यवर्तीर और अंतिम तीनों वर्णों के साथ होता है, यथा बंदर bandar, पतंग patang, एवं evem.

(2) अनुनासिक का प्रयोग भी तीनों जगह होता है, तथा बांटना batna, करूंगा karu:ga, सायं say, परन्तु मध्य में अत्यत्प और अधिकतर भविष्यकालिक क्रिया वाचक शब्दों क साथ होता है।

(3) बिन्दु का प्रयोग यदि शब्द के अन्त में व्यंजनांत "अ" के साथ हो, तो वह अनुस्वार होता है, यथा एवं evem, स्वंयं sweyem, परन्तु अंतिमाक्षर के साथ मात्रा भी हो तो वह अनुनासिक होता है, यथा मैं mE~, में me~, हैं hE~, हूंhu~:, आईai:, कहींkahi: बताऊंbatau:, करूं karu:, आदि इसी उदाहरण से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि अनुनासिक का केवल बिन्दु रूप में प्रयोग शब्द के अन्त में व्यंजनान्त "अ" तथा इ, ई, ए, ऐ, जो आदि उन स्वरों की मात्राओं के साथ होता है, जो शिरोरेखा से ऊपर लगती हों, तथा मैंmE~, या उससे ऊपर निकली हुई हों, यथा कहींkahi~:

(4) शब्द के अन्त में शेष मात्राओं (आ, उ, ऊ) के साथ अनुनासिक का प्रयोग चन्द्र-बिन्दु रूप में होता है, तथा जाऊं jau:, करूं karu:, हूं hu:, कहां kaha।

(5) अनुनासिक का बिन्दु रूप में प्रयोग बहुवचन बनाने के लिए भी किया जाता है, यथा "भाइयों ने", परन्तु सम्बोधन में इसका प्रयोग नहीं किया जाता, यथा भाइयो और बहनो।

(6) कुछ शब्दों के प्रथम वर्ण के साथ अकेले बिन्दु का प्रयोग अनुनासिकता के लिए भी किया जाता है, यथा संयम sayam,

शेषांश पृष्ठ 17 पर

अनुवादक और अर्थ का अनुसंधान

—विश्वंभर प्रसाद 'गुप्त-बन्धु'

'आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः' (यजुर्वेद), अर्थात् सभी ओर से अच्छे विचार हम तक पहुंचे, यह आदि काल से सभ्य मानव की आकांक्षा और आवश्यकता रही है। यह अनुवाद के सहारे ही पूरी हो सकती है। आजकल, जब आवागमन के विकसित साधनों के कारण विश्व बहुत छोटा हो गया है, और विभिन्न भाषा-भाषियों का पारस्परिक सम्पर्क बढ़ रहा है, अनुवादकों या दुभाषियों की आवश्यकता और महत्व स्पष्ट अनुभव किया जा रहा है।

किसी भी भाषा में बहुत से शब्दों के प्रायः एक से अधिक अर्थ हुआ करते हैं। संत तुलसी दास ने 'वर्णानामर्थसंधानां' कहकर यही संकेत किया है कि अर्थों का समूह हुआ करता है अर्थात् कोई भी शब्द अनेकार्थिक हो सकता है। किन्तु उनके भाव-साम्य में भी प्रायः कुछ न कुछ भिन्नता होती अवश्य है, चाहे वह अत्यन्त सूक्ष्म ही क्यों न हो। जैसे जननी का अर्थ है जन्म देने वाली और धात्री का अर्थ है पालने वाली, पर दोनों ही माता के पर्याय हैं। किसी विशेष स्थान पर प्रयुक्त किसी शब्द का क्या वास्तविक अर्थ होता है, यह जानना कभी-कभी टेढ़ी खीर सिद्ध होता है। किसी शब्दकोश में दिए हुए 'अर्थ समूह' में से कोई एक अर्थ चुन लेने के लिए वास्तव में असाधारण बुद्धि-कौशल की आवश्यकता होती है, और अनुवादकों के लिए तो यह एक अग्नि परीक्षा ही है।

एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करने पर मूल और अनुवाद में जाने अनजाने बहुत अंतर आ जाता है। अनुवाद कितना निर्भर-योग्य है, यह अनुवादक की योग्यता पर ही निर्भर होता है। अभी चार-पांच साल पहिले की ही बात है, 'प्रसार भारती विधेयक' का प्रारूप भी, सभी विधेयकों की भांति, अंग्रेजी में ही बना और भारत सरकार ने उसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया। उस हिन्दी अनुवाद के आधार पर भारत के उच्चतम न्यायालय के एक विद्वान अधिवक्ता श्री अरविन्द जैन ने अपनी समीक्षा और व्याख्या एक प्रतिष्ठित दैनिक (नवभारत टाइम्स दि० 17 मार्च 1990) में प्रकाशित कराई। किन्तु उस पर एक तूफान ही खड़ा हो गया। छान-बीन करने पर पता चला कि अनुवाद सही नहीं था, इसीलिए उसकी व्याख्या भी गलत हो गई और श्री जैन को चार-पांच दिन में ही क्षमा याचना सहित यह स्वीकार करना पड़ा कि उन्हें भारत सरकार के हिन्दी अधिकारियों द्वारा किए हुए अनुवाद पर निर्भर नहीं होना चाहिए था तथा लेख लिखने से पहिले अंग्रेजी मूल भी देख लेना चाहिए था (न०भा०टा० 22.3.1990)। यहां विद्वान अधिवक्ता की उलझन की कल्पना आसानी से की जा सकती है।

हमारे देश में यह एक विरोधाभास ही है कि राष्ट्र का संविधान मूलतः अंग्रेजी में बना। फिर उसका हिन्दी अनुवाद किया गया। किन्तु आवश्यकता होने पर प्रामाणिक अंग्रेजी की प्रति ही मानी जाती है। देश के सभी विधेयकों के भी हिन्दी अनुवाद हो रहे हैं; किन्तु प्रामाणिक शायद अंग्रेजी की मूल प्रतियां ही हों, हिन्दी अनुवाद नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि अंग्रेजी के खूंटे से बंधी हमारी बहुत सी योजनाएं जनता के लिए उपयोगी होने के बजाय मात्र दुखद भार सिद्ध होती हैं। किन्तु जब तक राजभाषा के पद से अंग्रेजी नहीं हटती तब तक हमें अनुवादकों पर निर्भर रहना ही पड़ेगा; और अंग्रेजी तब तक पिंड नहीं छोड़ती जब तक भर्ती परीक्षाओं के माध्यम के रूप में पाली जाती रहेगी।

अंग्रेजों के जमाने में भारतीय भाषाओं से अंग्रेजी में अनुवाद किया जाता था; किन्तु वह अंग्रेजी शासकों की सुविधा के लिए और कभी-कभी तो केवल कागज का पेट भरने के लिए ही होता था, क्योंकि उनके निर्णय प्रायः पूर्वाग्रह ग्रस्त हुआ करते थे, जनता को न्याय देने के लिए नहीं। इसका भी एक उदाहरण देखिए—प्रसिद्ध क्रान्तिकारी लाला हरदयाल की एक उर्दू पुस्तक है 'कौमें किस तरह जिन्दा रह सकती हैं'। उर्दू में 'आर्य' को 'आर्या' और 'स्वराज्य' को स्वराजिया' लिखते-पढ़ते हैं। इसी तरह उस पुस्तका का अनुवाद करते समय सरकारी अनुवादक ने ऋषि 'नचिकेता' को उर्दू में लिखे होने के कारण 'नीची कुतिया' समझा और अंग्रेजी में 'ए बिच आफ़ लो ओरिजिन' अनुवाद कर डाला।

खैर, वह तो एक बेचारे लिपिक का अज्ञान था। किन्तु ऐसी भूलें तो बड़े-बड़े विद्वानों तक ने की है। केवल संस्कृत का कुछ ज्ञान प्राप्त करके वैदिक पृष्ठ-भूमि से अनजान विदेशी विद्वानों ने वेदों के अपनी भाषा में भाषान्तर किये, फिर शासन ने उन पर प्रामाणिकता की मुहर लगाई और आर्यों को असभ्य तथा वेदों को गडरियों के गीत कहकर प्रचारित कर दिया। उन भ्रष्ट अनुवादों का ढोल पीट-पीट कर भारतीय संस्कृति को हेय सिद्ध कर दिया गया। देश को गुलाम बनाने में अंग्रेजों की यह जबर्दस्त सफलता थी। यह ध्रुव सत्य है कि—

आक्रान्ता करता सदा जन-संस्कृति का नाश।
शिक्षा पर अधिकार कर बसे दासता-पाश।। (अनल प्रकाश)

चर्चा हो रही थी अर्थ के अनुसंधान की। इस सिलसिले में कभी-कभी अनुवादक बड़ी दूर की कौड़ी ले आते हैं, जिससे सारा परिश्रम ही व्यर्थ हो जाता है। इसका एक उदाहरण सन् 1969 की द्विभाषी डायरी में देखने को मिला था। उसमें 'भारत के बारे में कुछ तथ्य' शीर्षक के अन्तर्गत लिखा था, 'भारत में.........किलोमीटर सड़कें हैं जिनका एक तिहाई समुद्र-तल पर आता है'। आश्चर्य यह हो रहा था कि भारत की सारी ही भूमि समुद्र तल से ऊपर है, और सड़कें भूमि-तल से प्रायः कुछ ऊची ही बनाई जाया करती है; तो फिर वे सड़कें कहां हैं जो समुद्र-तल पर आती हैं। विवश होकर अंग्रेजी पाठ देखना पड़ा जहां लिखा था "इंडिया हैज ....किलोमीटर आफ रोड्स, वन थर्ड आफ़ ह्विच इस सरफेस्ड'। बात कुछ समझ में आई कि एक तिहाई सड़कें पक्की हैं। किंतु अब समस्या यह आ गई कि एक सरल से अंग्रेजी वाक्य का ऐसा विचित्र हिन्दी अनुवाद कैसे हो गया। बहुत खोज-बीन करने पर पता चला कि सम्बन्धित अनुवादक ने चैम्बर्स के बीस-बाईस विशाल खण्डों वाले अंग्रेजी शब्दकोश का 'सरफ़स-सरफेस्ड—सरफेसिंग' वाला भाग देखा था। वहां लिखा था कि जब कोई जहाज समुद्र में डूब जाता है, तब दो-चार अन्य जहाज मिलकर उसे ऊपर सतह पर लाते हैं। यह 'सरफेसिंग' कहलाता है। पनडुब्बी भी डुबकी लगाकर जब सतह पर आती है तो उसे 'सरफेसिंग' करना कहते हैं। इसी के आधार पर अनुवादक महोदय ने अपनी समझ से

घोर परिश्रम करके 'सरफेस्ड रोड' का अर्थ खोज किला 'समुद्र-तल पर आई हुई सड़क' जब कि गांव के 'गवांर' भी उसे 'पक्की सड़क' कहते हैं। किन्तु चैम्बर के लेखक को भारत के गांवों की, भारत की भाषा की जानकारी कहा? फिर भी हम हैं कि अपनी सर्व-समर्थ विश्व-विख्यात भाषा के होते हुए भी न जाने किस स्वार्थवश अंग्रेजी से पल्ला छुड़ाना ही नहीं चाहते।

वर्तमान दुभाषी स्थिति में सन्तोषजनक कार्य-निष्पादन के लिए यह आवश्यक है कि हमारे अनुवादक या दुभाषिये संबंधित दोनों भाषाओं के विद्वान हों। इसके अतिरिक्त उन्हें उस विषय की भी पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए, जिसके साहित्य का अनुवाद करना हो। केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग के कार्य-विधि-साहित्य का अनुवाद तभी हो सका जब विभाग में ही हिंदी भी जानने वाले एक वरिष्ठ इंजीनियर के अधीन हिन्दी शाखा स्थापित हुई; अन्यथा उसमें कोई हाथ ही न लगाता था। विधि-साहित्य का अनुवाद भी सुयोग्य विधिवेत्ता ही कर सकते हैं, और करते हैं।

यह भी आवश्यक है कि हमारे अनुवादकों का वेतनमान उपर्युक्त अपेक्षाओं के अनुरूप आकर्षक हो। वेतनमान कम से कम उतना तो हो ही जिस पर उपयुक्त योग्यताओं वाला निपुण व्यक्ति आकर्षित हो सके। यह भी आवश्यक है कि निश्चित अन्तराल के बाद उनके पदोन्नति/विशेष वेतन वृद्धि के अवसर हों। सुयोग्य और सक्षम अनुवादक ही ऐसा अनुवाद कर सकते हैं जिस पर प्रामाणिक होने की मुहर लगाई जा सके। ■

बी-154, लोक विहार, दिल्ली-110034.

पृष्ठ 15 का शेषांश

संयत saya~t, सांकल saka~l, सांस sa~s। यद्यपि ऐसे प्रयोग यहां प्रतिपादित सिद्धान्त के अनुसार दोषमय हैं, परन्तु इनका प्रयोग इतना व्यापक और दीर्घकालिक हो चुका है कि इनमें चन्द्र-बिन्दु के प्रयोग की अनिवार्यता गौण मान ली जाती है।

(7) इसी प्रकार कुछ शब्दों के अन्त में व्यंजनान्त "अ" के साथ अनुस्वार बिन्दु का प्रयोग अनुनासिक के लिए भी कर लिया जाता है, यथा सायं, परन्तु ये कुछ अपवाद हैं, नियम नहीं।

एक बात और अनुनासिक और अनुस्वार के उच्चारण में कहीं अधिक दीर्घता देखने में आती है, (यथा "बूंद", "बंद") और कहीं कम (यथा "ठूंठ", "बंक"); बल्कि कहीं-कहीं तो अनुनासिक का उच्चारण अनुस्वार के उच्चारण जैसा प्रतीत होता है, यथा "बूंद", "बंद"। उच्चारण में इस भिन्नता का कारण इनके प्रयोग की स्थिति है। इनके तुरन्त बाद घोष व्यंजन आने पर इनके उच्चारण में मुखरता और घोष व्यंजन जैसा अनुनाद या घोषत्व आ जाता है, जिससे औच्चारणिक दीर्घता प्रभावित हो जाती है।

उपसंहार

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा में अनुस्वारता और अनुनासिकता का स्वरूप नितान्त रूप से भिन्न होता है तथा इनका एक-दूसरे के लिए जो प्रयोग होते देखा जाता है, वह आंख की किरकिरी के समान खटकता है और भाषा रूपी सुन्दरी के अलंकृत होने पर भी उसे उसी प्रकार अलंकारजन्य दोषयुक्त बना देता है, जैसे कोई युवती हाथों में कंगन की बजाए पाजेब तथा पैरों में कंगन पहन ले। इनका प्रयोग जब असम्बद्ध ध्वनि-प्रतीकों के साथ किया जाता है, (यथा एवं cvcm, सायं say,) तो वह भी नितान्ततः असंगत तथा औच्चारणिक स्वरूप से भिन्न होता है। अतः इनका अपनी जगह प्रयोग उसी प्रकार वांछनीय है, जैसे बिंदिया महिला की नाक या गाल की बजाए मस्तक पर ही हो। अनुस्वार या अनुनासिक का अपेक्षित जगह पर कोई प्रयोग ही न होना भी भाषा के रूप में अवांछित और अर्थ-भेदक परिवर्तन ला देता है, जिससे उसकी आलंकारिकता भी प्रभावित होती है। स्मणीय है कि व्यापक अर्थों में आलंकारिकता भाषा का शोभाकारक धर्म है।

निष्कर्ष रूप में यह ध्यान रखा जाए कि अनुनासिकता स्वर में होती है और अनुस्वारता व्यंजन में। ■

उप निदेशक (हिंदी) भारतीय मानक ब्यूरो भवन, नई दिल्ली-2

*** जब तक इस देश का राज काज अपनी भाषा में नहीं चलेगा, तब तक हम यह नहीं कह सकते कि देश में स्वराज्य है।**

—मोरारजी देसाई

विधि के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग

—एम०सी० पांडेय

किसी देश का संविधान उसकी विधायी व्यवस्था का परिचायक होता है। भारत का संविधान हमारे देश की सर्वोच्च विधि है और उसी के अनुसार देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था का निर्धारण किया जाता है। संविधान के अनुसार ही उस देश का राज-काज चलाया जाता है।

भारत के संविधान की उद्देशिका में संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य की संकल्पना की गई है जो सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक, न्याय तथा विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता पर आधारित होगा।

संविधान के अनुच्छेद 343(1) में उपबंध है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी और संविधान के अनुच्छेद 345 के अनुसार किसी राज्य का विधानमंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा।

ज्ञातव्य है कि संप्रभुता सम्पन्न राज्य में विधि बनाने की समस्त शक्ति विधानमंडल में निहित होती है। राज्य द्वारा सीधे बनाई गई विधि के अतिरिक्त उच्चतर न्यायालयों (भारत में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय) के निर्णय और रूढ़ि या प्रथागत विधि जिसे राज्य द्वारा मान्यता मिली है, भी राज्य की विधि के अंग होते हैं और वे राज्य के प्राधिकार से लागू होते हैं।

राज्य की कोई विधि जिसमें राज्य से मान्यता प्राप्त विधि भी सम्मिलित है, मूल अधिकारों का उल्लंघन नहीं कर सकती है।

विधि का सामान्य अर्थ, ब्रह्मा, भाग्य रीति या नियम होता है। इस ब्रह्मांड का प्रत्येक चर और अचर एक ही प्राकृतिक नियम से अनुशासित होता है। मेरा मंतव्य यहां ब्रह्मा या भाग्य से नहीं है बल्कि रीति नियम से है। यद्यपि प्रकारान्तर से ब्रह्मा को संपूर्ण जगत के आध्यात्मिक नियमों का विधायक स्वीकार किया जाता है, जहां सांसद या विधायक देश या राज्य से संबंधित कानून बनाते हैं। मेरा तात्पर्य संसद् सदस्यों या विधायकों द्वारा निर्मित कानून से है जो देश या संबंधित राज्य की विधि और व्यवस्था बनाए रखने में सहायक होते हैं। वैसे तो सरकार के तीनों अंग, अर्थात् कार्यपालिका, विधायिक और न्यायपालिका सर्वोच्च विधि से शासित होते हैं और क्रमशः विधि की व्यवस्था, विधि के निर्माण और विधि के समुचित न्यायनिर्णयन में सहायक होते हैं। चूंकि विधि का सरोकार इन तीनों अंगों से होता है इसलिए प्रत्येक अंग के कार्यकरण और समुचित क्रियान्वयन में विधि का उचित अनुपालन आवश्यक है।

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है। प्राचीन काल में विधि के क्षेत्र में संस्कृत भाषा का प्रयोग होता था तत्पश्चात क्रमशः फारसी और अंग्रेजी भाषाओं का प्रयोग विधि के क्षेत्र में होने लगा। आज भी काफी मात्रा में विधि का कार्य अंग्रेजी भाषा में ही हो रहा है परन्तु राजभाषा हिन्दी को प्रयोग में लाने के प्रयास भी जारी है। इस क्रम में यह कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। इसलिए विधि में हिन्दी के प्रयोग की अपेक्षा और अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

विधि के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग में सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं के व्यक्तिगत प्रयास प्रशंसनीय हैं। केन्द्रीय सरकार एवं अनेक राज्यों के राजभाषा विभाग भी इस कार्य की ओर अग्रसर है।

केन्द्रीय सरकार के विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय के विधायी विभाग के दो एकक, राजभाषा खण्ड और विधि साहित्य प्रकाशन विधि के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग और उसके उत्तरोत्तर विकास के कार्य में लगे हुए हैं। विधायी विभाग का राजभाषा खंड विधि के क्षेत्र में राजभाषा से संबंधित सभी कार्यों के लिए क्रियाशील है। राजभाषा खंड के मुख्य कार्य हैं—(i) सभी भारतीय भाषाओं में यथासंभव उपयोग के लिए मानक विधि शब्दावली तैयार करना और (ii) राजभाषा अधिनियम, 1963 के उपबंधों के क्रियान्वयन में केन्द्रीय अधिनियमों, अध्यादेशों, विधेयकों, विनियमों, आदेशों और अन्य अधीनस्थ विधानों के हिन्दी में प्राधिकृत पाठ तैयार करना। यह खंड केन्द्रीय अधिनियमों के हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं में पाठ तैयार करके भारत के राष्ट्रपति से इन्हें अधिप्रमाणित कराने संबंधी प्रस्तावों पर कार्रवाई करता है।

उल्लेखनीय है कि संविधान (अट्ठावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा राष्ट्रपति को संविधान के हिन्दी अनुवाद को अपने प्राधिकार से प्रकाशित कराने के लिए सशक्त किया गया है। भारत के संविधान का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ तारीख 23 अगस्त, 1988 के भारत के राजपत्र में प्रकाशित हुआ था। इसके अलावा डा० (न्यायमूर्ति) प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी ने हिन्दी भाषा में 'संविधान के मूलतत्व' लिखकर हिन्दी का विधि के प्रयोग में अपनी उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। भारत के संविधान पर डा०(न्यायमूर्ति) दुर्गादास बसु द्वारा अंग्रेजी में लिखी पुस्तक "कांस्टीच्यूशन आफ इंडिया—एन इन्ट्रोडक्शन" का अनुवाद "भारत का संविधान—एक परिचय" श्री व्रज किशोर शर्मा, निवर्तमान अपर सचिव, विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय, भारत सरकार ने किया। यह पुस्तक हिन्दी माध्यम से विद्यार्थियों, आचार्यों और अनेक अन्य विद्वानों के लिए काफी उपादेय सिद्ध हुई है। केन्द्र और राज्य की सिविल सेवाओं और न्यायिक सेवा की परीक्षाओं में बैठने वाले अभ्यर्थियों के लिए भी यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

पत्रिका का खंड, जिसका बाद में नाम विधि साहित्य प्रकाशन रखा गया है, विधायी विभाग में सन् 1968 में स्थापित किया गया था। उसे विधि के क्षेत्र में हिन्दी भाषा के प्रयोग की अभिवृद्धि का कार्य सौंपा गया है। इसके अतिरिक्त उसने हिन्दी में दो मासिक पत्रिका प्रकाशित करनी आरंभ की थी अर्थात (i) उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका और (ii) उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका। वर्ष 1986 में उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका को दो भागों में बांट दिया गया अर्थात् उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च

शेषांश पृष्ठ 20 पर

आगे बढ़िए-पुनः हिन्दी की लहर उत्पन्न करें

—ओ॰ सत्यनारायण राव

भाषा से संबंधित प्रश्न मुख्यतः मानसिकता और मनोवृत्ति से जुड़ा होता है। जब तक हमारे मन में देश की राजभाषा के प्रति प्रेम और आदर की भावना जागृत नहीं होगी, जब तक हम में इच्छा शक्ति, लगन और अभिरूची उत्पन्न नहीं होगी तब तक हिन्दी को उसका अपेक्षित स्थान दिलाने में सफल नहीं होंगे। किसी भी राष्ट्र में किसी प्रकार का भी परिवर्तन किसी न किसी निर्दिष्ट, स्पष्ट एवं विशिष्ट विचार दर्शन या क्रांति की लहर के द्वारा आता है। जटिल समस्याओं से जूझने एवं हालातों की रगड़ से हर युग में किसी विशेष वैचारिक लहर का उद्‌भव होता है। इसके तहत चाहे वह विषय समानगत हो या राजनीतिपरक या आर्थिक या फिर आध्यात्मिकपरक हो।

अतीत और वर्तमान में कभी भी जब-जब धरातल पर संघर्ष, तनाव या मानसिक कुंठाओं का मौन छाया, तब-तब विचारों की एक ऐसी लहर ऊपर उठी है जिसने अपनी सरगर्मी से समाज को ऐसी समस्त कुंठाओं तनावों व अंधविश्वासों से मुक्त किया है। कबीर, नानक, स्वामी विवेकानंद, राजाराम मोहन राय, दयानंद सरस्वती जैसे महापुरूष व युग सृष्टाओं ने पराधीन भारतवर्ष में इसी प्रकार की विचारों के उदभव के कारक थे जिससे समाज में नैतिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तन हुए थे।

स्वतंत्रता के पूर्व एक ओर स्वाधीनता संग्राम तो दूसरी ओर भाषायी आंदोलन भी उतनी ही तेज गति से जारी रहा। देश का सम्पूर्ण जनमानस अंग्रेजों व अंग्रेजी से पिंड छुड़ाने के लिए आतुर एवं लालायित था। उस समय स्वाधीनता आंदोलन के सब नारे स्वदेशी भाषा हिन्दी में ही थे। इसने ही स्वतंत्रता आंदोलन को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया था।

भारत स्वतंत्र होने के बाद जब स्वाधीन भारत के संविधान का निर्माण हुआ था तो अब से 47 वर्ष पूर्व 14, सितम्बर 1949 को देवनागरी लिपि में हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा बनाया गया था और क्षेत्रीय भाषाओं को अपने-अपने क्षेत्र की राजभाषा का दर्जा दिया गया। हिन्दी सम्पूर्ण देश के बहुमत की भाषा होने के कारण उसे राजभाषा का संवैधानिक अधिकार दिया गया है। इसके बोलने व समझने वालों की संख्या लगभग 47 करोड़ से भी अधिक है। इसलिए हिन्दी को क्षेत्रीय भाषाओं के बीच सम्पर्क भाषा की भूमिका का निर्वाह करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त माना गया है।

यह ठीक ही है कि हिन्दी को संविधान में राजभाषा का दर्जा दिया गया है, लेकिन हमें खेद है कि उसे अपनी संवैधानिक प्रतिष्ठा संविधान के लागू होने के 44 वर्ष बाद भी नहीं मिल रही है। अब भी राजभाषा के रूप में हिन्दी के बजाय अंग्रेजी का ही ज्यादा बोलबाला है। हवा अभी भी अंग्रेजी के पक्ष में बह रही है। इस तरह राजभाषा हिन्दी को सरकारी कार्यालयों में पूरी तरह न अपनाने के लिए कई कारण हैं। इनमें से निम्न कारण प्रमुख हैं:

पहला कारण यह है कि अंग्रेजी का व्यवहार करना हम अपनी शान एवं गौरव समझते हैं। यह धारणा बरसों से हमारी नस-नस में फैली हुई है। किसी आदत से मुक्ति पाना उतना सरल नहीं है। उसे त्याग देने में अत्यंत कठिनाई होती है। इस कारणवश हम अंग्रेजी का मोह नहीं छोड़ पा रहे हैं।

दूसरा कारण यह है कि जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है वे अकसर हिन्दी में बात करने व लिखने में कतराते हैं तथा उन्हें हिन्दी के प्रयोग में झिझक होती है। उनमें यह भय भी व्याप्त है कि उन पर हिन्दी थोपी जा रही है और हिन्दी के कारण उनकी प्रोन्नति के अवसर अवरूद्ध हो जायेंगे। इस काल्पनिक भय के कारण वे अंग्रेजी के प्रबल पक्षधर बने हुए हैं। उनकी आशंका के निवारण के लिए ही पंडित नेहरू ने आश्वासन दिया था कि हिन्दी किसी पर थोपी नहीं जाएगी। तदनुसार 1963 में ही राजभाषा अधिनियम पारित किया गया था।

तीसरा कारण यह है कि हिन्दी जानने वाले कर्मचारी हिन्दी में काम करने में इसलिए संकोच करते हैं कि उनका उच्चाधिकारी अंग्रेजी पसंद करता है और फिर उच्च अधिकारियों की भी अपनी कठिनाई है। वह अंग्रेजी माध्यम में पढ़ा लिखा है और उसका मोह अंग्रेजी के प्रति ही है, इसलिए वह हिन्दी से अनभिज्ञता का नाटक रचता है। इसलिए उनके मातहत भी हिन्दी जानते हुए भी उसका प्रयोग करने में हिचकिचाते हैं। उनके मानस पटल पर संकोच की भावना के साथ-साथ मिश्रित भय भी रहता है कि अगर वे हिन्दी में टिप्पण व प्रारूप लेखन करेगा तो उनकी गोपनीय रिपोर्ट उत्कृष्ट नहीं होगी। इसलिए बहुत सारे कर्मचारी हिन्दी में काम करना पसंद नहीं करते हैं।

चौथा कारण केवल मनगढ़ंत है। हम हिन्दी के प्रति उपेक्षा की भावना रखने के कारण कोई भी काम हिन्दी में नहीं कर पाते या किसी आदेश को कार्यान्वित करने की हमें इच्छा नहीं है तो हमें अनेक प्रकार की कठिनाईयां व बाधाएं अपने-आप हमारे सामने आने लगती है। हिन्दी के कार्यान्वयन के मामले में यही "मानक अभिव्यक्तियां" सुनने में आती हैं कि हिन्दी में लिखना या पढ़ना बहुत ही कठिन व क्लिष्ट कार्य है और इतना ही नहीं, यहां तक भी कहते हैं कि हिन्दी में अभिव्यक्ति क्षमता नहीं है। हिन्दी विज्ञान व तकनीकी विषयों को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं है। लेकिन इस प्रकार की बातें वही लोग करते हैं जिन्होंने हिन्दी पढ़ने व लिखने का कभी प्रयास या अभ्यास ही नहीं किया और न ही वे प्रयोग करना चाहते हैं।

यह बात कभी भी किसी से छिपी हुई नहीं है कि जब हमारे देश के नेता या प्रतिनिधि रूस, फ्रांस, चीन, जापान और जर्मनी आदि देशों में गए हैं और वहां अंग्रेजी में विचार व्यक्त करने लगे तो वहां के लोगों ने सदैव ही यह प्रश्न उठाया कि क्या आपके देश की अपनी कोई भाषा नहीं है। इस संबंध में ज्वलंत प्रश्न यह है कि आज से 300 वर्ष पूर्व जब अंग्रेजी भारत में नहीं आई थी

तो क्या राजकाज और प्रशासन का काम किस भाषा में होता था। क्या रूस, जर्मनी, जापान, इटली, चीन आदि देशों में अंग्रेजी न चलने के कारण वे देश दूसरे देशों की तुलना में विज्ञान व प्रौद्योगिकी में कम हैं।

अतः यह सोचने का विषय है कि जब हमारे संविधान निर्माताओं और हमारी सरकार ने हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में अपनाया है तो उसे पूर्णतः लागू करने के लिए निष्ठापूर्वक प्रयास करना चाहिए। सरकारी सेवा में रत हम तब ही यह कह सकते हैं कि हम सच्चे मायने में जनता के सेवक हैं। व्यवहार में जनता की भाषा "हिन्दी" को लाना समीचीन है।

देश में जब प्राइवेट व्यापारी एवं विक्रेता अपने व्यापार की वृद्धि एवं उत्पादों को आम जनता तक पहुंचाने के लिए हिन्दी का प्रयोग कर सकता है तो हम क्यों न इसका व्यापक प्रयोग करें। इस मर्म को हम प्रत्येक को उद्यत करना होगा क्योंकि "बर्फ पिघलने पर ही धारा में जल का प्रवाह होता है।" इस प्रकार सरकारी काम काज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए पहले हमें अपनी मानसिकता बदलनी होगी। अंग्रेजी के मोह को त्याग कर हिन्दी के काम में राष्ट्रीय गौरव का अनुभव करने की जरूरत है। इसलिए हिन्दी के प्रति अनुकूल अभिरूचि और उत्साह का उमंग संचार करने के लिए देश में हिन्दी की लहर एक बार पुनः उत्पन्न करनी होगी। प्रत्येक देशवासी को अपने देश की भाषा के प्रति आत्मीय अनुराग की भावना जगानी पड़ेगी और इसी भावना से देश में फिर से हिन्दी की वही लहर उत्पन्न होगी जो स्वतंत्रता आंदोलन के समय पूरे वेग से उमड़ पड़ी थी।

आज से 46 वर्ष पहले भारत की संविधान सभा ने हिन्दी भाषा को देश की राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया था। इसी उपलक्ष्य में इस दिन को यादगार बनाने के लिए 14 सितम्बर का दिन 'हिन्दी दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

राष्ट्र निर्माण में राष्ट्रभाषा का अपना महत्वपूर्ण योगदान रहता है। हमारे राष्ट्रपिता के कथनानुसार "लोकतंत्र तब तक अधूरा है जब तक देश का कामकाज उसकी अपनी भाषा में नहीं होता"। सार्वजनिक उपक्रमों पर यह सिद्धांत विशेष रूप से लागू होता है, क्योंकि वे सच्चे मायने में सार्वजनिक उपक्रम तभी कहलाएंगे जब उनका समस्त कामकाज जनता की भाषा में होगा। इसका सर्वाधिक सार्थक रूप यही है कि हम समस्त कार्यालयीन कामकाज यथाशक्ति हिन्दी में करने का सतत प्रयास करें। इस गरिमा का उचित आदर करते हुए हम पत्र-व्यवहार, टिप्पणी व मसौदा लेखन और आम वार्तालाप में हिन्दी का प्रयोग करें।

तो आइए और आगे बढ़िए और हिन्दी का लहर पुनः उत्पन्न करें एवं राजभाषा हिन्दी राजभाषा को सरकारी कार्यालयों में तहे दिल से अपनाएं। ■

राजभाषा अधिकारी हिन्दुस्तान जिंक लि॰ गाजुवाला-विशाखापटनल

पृष्ठ 18 का शेषांश

न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका। उच्चतम न्यायालय के रिपोर्ट करने योग्य चुने हुए निर्णय और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में सभी उच्च न्यायालयों के चुंने गए क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णय होते हैं। इसके द्वारा पत्रिकाओं के निर्णय सार भी प्रकाशित किए जाते हैं।

विधि साहित्य एकक विद्यार्थियों, शिक्षकों, वकीलों और न्यायिक अधिकारियों के उपयोग के लिए हिन्दी में विधि की मानक पुस्तकें, सुविख्यात विधि विशेषज्ञों से लिखवाकर प्रकाशित करता है। निजी क्षेत्र के लेखकों और प्रकाशकों को प्रोत्साहित करने के लिए उक्त प्रकाशन विभाग, विधि के क्षेत्र में हिन्दी में लिखी गई सर्वोत्तम विधि पुस्तकों पर वार्षिक पुरस्कार देता है। प्रकाशन ने 'चिकित्सा-न्याय शास्त्र और विष विज्ञान' जो डा॰ पटौरिया द्वारा लिखी गई पुस्तक, को भी प्रकाशित किया। विधि के क्षेत्र में हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए उक्त प्रकाशन विभाग हिन्दी भाषी क्षेत्रों के विधि महाविद्यालयों, जिला न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और राज्य सरकारों के विधि महाविद्यालयों, जिला न्यायालयों, उच्च न्यायालयों और राज्य सरकारों के विधि विभागों में गोष्ठियां आयोजित करता है। विधि साहित्य समाचार नामक एक त्रैमासिक पत्रिका भी प्रकाशित की जाती है जिसमें विधि के क्षेत्र में इस प्रकाशन विभाग के विभिन्न क्रियाकलापों और प्रकाशनों की विस्तृत जानकारी दी जाती है।

केन्द्रीय सरकार के प्रयासों के अलावा अनेक राज्य सरकारें अपने पूर्ण मनोबल से राजभाषा के प्रयोग और उसके विकास में लगी हैं। कई उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश अपना निर्णय राजभाषा हिन्दी के माध्यम से देते हैं जो एक प्रशंसा का विषय है। अनेक राज्य सरकारों द्वारा अधिनियमों विनियमों और अध्यादेशों का अधिनियमन मूलतः हिन्दी भाषा में किया जाता है जो हिन्दी के प्रयोग के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

राजभाषा हिन्दी का विधि के क्षेत्र में प्रयोग के संदर्भ में मेरा राजभाषा से संबंधित सभी व्यक्तियों से अनुरोध है कि देश की एकता और अखंडता बनाए रखते हुए प्रत्येक स्थान पर समरूपता बनाए रखें तो वह हिन्दी के विकास और साथ-साथ देश के विकास में और सहायक होगा। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग जैसी अनेक संस्थाएं विधि में हिन्दी के प्रयोग के प्रोत्साहन में अपना अमूल्य योगदान कर रही हैं। हम सभी हिन्दी प्रेमी उन सभी लोगों के प्रति आभारी हैं जो अपना सद्प्रयास हिन्दी के संवर्द्धन और विकास में कर रहे हैं। ■

उप संपादक विधि साहित्य प्रकाशन, भगवान दास रोड, नई दिल्ली।

सरलता की लचर दलील

—अशोक कुमार चोपड़ा

सरलता को पैमाना बनाकर किसी रचनाकार की भाषा की आलोचना उस रचनाकार की रचना के मुखर स्वर का गला घोंटना है। आलोचक को कोई अधिकार नहीं है कि वह सरलता के मापदण्ड से किसी रचना को निम्नकोटिक ठहराकर पाठक और रचनाकार के मध्य एक व्याघात खड़ा करे और यूं भी देखा जा सकता है कि यदि जयशंकर प्रसाद के एक सहृदय पाठक उतने ही मनोयोग से पढ़ता है जितना वह प्रेम चन्द को तो तथाकथित "सरलता" का प्रसाद ढहता दीख पड़ेगा। क्या कारण है कि दो रचनाकारों की भाषा, जिसमें एक की भाषा को आलोचक संस्कृत-निष्ठता का दुशाला ओढ़ाता है और हेयकोटिक रखता है तथा दूसरे की भाषा को सरल भाषा का नमूना मानकर उसे उत्तम कोटि में रखता है ....और इतना सब होते हुए भी सहृदय पाठक एक बैठक में उतने ही आल्हाद (किंवा रस) से प्रसाद जी की रचनाओं का अध्ययन करता है जितना कि वह प्रेमचन्द जी की रचनाओं से आनन्द भी अनुभूति लेता है। प्रसाद जी की किसी भी रचना को पढ़ना शुरू कर उस रचना को आद्योपांत पढ़ लेने की उत्कंठा तथा उस रचना के चरमोत्कर्ष के साथ तादात्मय-अनुभूति और नियताप्ति के पश्चात् पाठक का रसास्वादन हमें यह कहने को मजबूर करता है कि रचना की भाषा के साथ पाठक का कभी साधारणीकरण नहीं होता है, भाषा कभी रसास्वादन में बाधक नहीं होती बल्कि रचना में निहित कोई और ही उदात्त-तत्व अध्येता को अखंड रसानुभूति करवा देता है। तभी भावप्रवण अध्येता प्रसाद जी तथा प्रेमचन्द जी की रचना को पढ़कर टिप्पणी करता है कि "भई आनन्द आ गया"। इसी आनन्द में आलोचक की सरलता की गुहार-पुकार कभी व्याघात बनती नहीं देखी गई। चाहे आलोचक गला फाड़कर अरण्यरोदन करता रहे कि अमुक रचनाकार की रचना (काव्य, कहानी, उपन्यास या कोई भी साहित्यिक विधा) की भाषा कठिन, दुरुह तथा जटिल है परन्तु सहृदय पाठक को नित्य-अखंड भावानुभूति द्वारा रसास्वादन हो ही जाएगा। आलोचक की यही अवहेलना हमें फिर कहने को विवश करती है कि भाषा की सरलता को आलोचक ने जबरदस्ती लेखक की रचना के साथ जोड़ा है और सरलता की अपनी स्व-केन्द्रित माप-जोख रचना के साथ अन्याय करती प्रतीत होती है। यहां यह भी कह देना उपयुक्त होगा कि भाषा की सरलता के लिए संस्कृतनिष्ठता या उर्दूनिष्ठता के भोथरे मापदण्ड रचनाकार की रचना की ताजगी, उसके प्रवाह और रवानगी को समाप्त नहीं कर सकते। रचना की भाषा में प्रवाह है, प्रवाह में रवानगी है या ताजगी है.....कहने का यही अभिप्राय है कि हमें उस रचना की अखंडानुभूति हो रही है, बस। भाषा की संस्कृतनिष्ठता या उर्दूनिष्ठता तो आरोपित है, वह रसानुभूति में बाधक बनती नहीं देखी गई। इसीलिए सहृदय अध्येता प्रसाद तथा प्रेमचन्द दोनों की ही रचनाओं को उतनी ही एकाग्रता, मनोयोग तथा दत्तचित्त होकर पढ़ लेता है। यह तो हुई साहित्य में सरलता के अनधिकार प्रवेश की चर्चा। अधिक न कहते हुए इस संदर्भ में रसवादी आचार्य का यह श्लोक यहां पर्याप्त स्टीक होगा—

सवासनानां सभ्यानां रसस्यास्वादनं भवेत्।
निर्वासनास्तु रंगान्तः काष्ठकुड्यश्मसन्निभाः।।

अर्थात् सभ्य चित्तवृत्ति वाले 'सवासन" भावानुभूति प्रवण सहृदय व्यक्तियों को ही रसास्वादन हो सकता है। परन्तु "निर्वासन" जन, जो वासना-रहित हैं, वे तो रंगशाला के काष्ठ, पत्थरों और दीवारों की तरह हैं। (जो रंगशाला में अपनी उपस्थिति रखते हुए भी रसास्वादन नहीं कर पाते हैं।)

अब हम यहां सरकारी कामकाज की भाषा में "सरलता के नारे" पर अंगुली उठाएंगे। मैं मानता हूं कि सरकारी कामकाज में भी भाषा की सरलता से यही अभिप्राय है कि लिखने वाले की भाषा में प्रवाह तथा रवानगी हो। अर्थपूर्णतः स्पष्ट हो जाए। सरकारी कामकाज में अर्थ की स्पष्टता की ओर विशेष ध्यान दिया जाना है। इसलिए यह आवश्यक है कि लेखक इस संदर्भ में भाषा लिखते समय साहित्यिक भाषा की पूर्णतः वर्जना करे, उसका ध्यान अर्थ की स्पष्टता पर अधिक रहे। अर्थ की स्पष्टता का विश्लेषण यूं भी किया जा सकता है कि सरकारी कामकाज में भाषा का प्रयोग करते समय इस तथ्य की ओर ध्यान रहे कि ये आदेश, परिपत्र, अधिसूचना, नोटिंग तथा विज्ञप्ति आदि जन-सामान्य के लिए हैं और इससे कार्यालय के सभी कर्मचारियों का हित संपादन होना है। सरकारी कामकाज में भाषा विषयक इस नीति का यही ध्येय है। जनता-जनार्दन तथा जनहित की असुविधाओं व कष्टों को बोझिल व असामान्य भाषा द्वारा उजागर करना किंतु अनूदित करना बेहतर नहीं होगा। परन्तु इस संदर्भ में फिर दावे के साथ कहा जा सकता है कि अंग्रेजी में प्रशासनिक, वैज्ञानिक तथा कानूनी गुत्थियों को न खोल पाने का पूरा दायित्व स्वयं संग्रेजी का ही है। सैकड़ों नहीं हजारों उदाहरण इस तथ्य के लिए पेश किए जा सकते हैं, जहां जन-सामान्य तो क्या बड़े-बड़े भाषा विशारद भी अंग्रेजी के मूलपाठ की गहन गुत्थियों में उलझते हुए अर्थ को समझ नहीं पाते। परन्तु, आज मैंने अंग्रेजी पर दुरूहता का दुशाला ओढ़ाते किसी को नहीं सुना। अंग्रेजी की दुरूहता तो उसकी अंलकारिता व अंग्रेजी लिखने वाले लेखक की विद्वत्ता, शब्द-विन्यास तथा भंगिमा, शैली का परिचायक बन जाती है परन्तु हिंदी की दुरूह, जटिल तथा असामान्यता का जामा पहिनाते देर नहीं लगती। इस संदर्भ में बेहतर यही होता जबकि हिन्दी अधिकारियों द्वारा वेट तथा पुनरीक्षित किए गए अच्छे-अच्छे उदाहरणों को पेश किया जाता जिससे हिन्दी की सक्षमता, समर्थता तथा प्रभविष्णुता का पता लगता परन्तु उन्हीं उदाहरणों को प्रस्तुत करना जिससे हिन्दी भाषा उपहास का मध्यम बने, समझ नहीं आता इसके पीछे क्या कुत्सित मंशा निहित रहती है।

सरकारी कामकाज में जहां अनुवाद करने वाले कर्मचारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह प्रशासनिक, वैज्ञानिक विधिक तथा गणितीय आदि-आदि वैचारिक सरणियों के हर वाक्य का सरल भाषा में अनुवाद पेश करे तो विडम्बना हाथ लगती है, जो कि स्वाभाविक भी है। विज्ञान की नवागत प्रविधियों का हिन्दी अनुवाद यह कहकर टाल दिया जाता है और उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता है कि अनूदित रूपान्तर में प्रयुक्त शब्द समझ नहीं आ रहे। क्या कारण है इस उपेक्षित स्थिति का? बड़ा सीधा कारण है कि अप्रचलन की दूरगामी स्थिति उसें तथाकथित क्लिष्टता तथा

शेषांश पृष्ठ 40 पर

कच्चे अंधेरे की घाटी हैं: शमशेर

—डा० बलदेव वंशी

आज, शमशेर जी को अपने भीतर टटोलता हूं! उन के वजूद की, कवि और व्यक्ति—दोनों के मिले-जुले एक बिम्ब के रूप में कल्पना करता हूं, तो मुझे कच्चे अंधेरे की घाटी के रूप में लगते हैं शमशेर! ऐसे अंधेरे की, जिस के पास जाने पर उजाला याद आता है। ऐसा अंधेरा जो मां के गर्भ जैसी सुरक्षा देता है। सकून देता है। अपना लगता है। परिचिता पराया या आतंकित करने वाला नहीं। धैर्य धर्मी। सहनशीलता में और किसी महत संकल्प की सृजनात्मक प्रतीक्षा में ले जाने वाला। सात्विक !

हर बड़ा कवि प्रकाश से पहले अंधकार को पहचानता है। उस की गहराई और व्यापकता में जाता है। अंधेरे की पहचान अपनी सृजन-प्रक्रिया में उसकी परोक्ष या प्रत्यक्ष तनावी स्थिति, जो रहस्यमय छायाएं रचती है धैर्य के सधे हाथों, रचना में जो शामित प्रशांति जोड़ जाती हैं—गहरी अनुशासनात्मक—इन सब से मिलकर क्लासिक गरिमा प्राप्त करती है कृति। प्रकाश तो हमें उतना ही दिखता-लुभाता है रचना में, जितना बाहरी धरातल पर खिल-फला वृक्ष। किंतु रचना की बुनियाद में, आधार में रखा अंधेरा ऐसे ही ओझल रहता है जैसे दिन के उजालों की अभ्यस्त हमारी आंखों से प्रायः धरती के नीचे का अंधेरा, अंधेरे का यथार्थ।

इसी से एक बृहतर, विराट आंतरिक विवशता बन कर करूण-भावना रचना में रसी रहती है। अंधेरे की साक्षी से उद्भूत होती है यह। अलग से नहीं। गहरे मानवीय आशयों से जुड़ कर। जैसे निराला की राम की शक्ति पूजा में उपस्थित अंधकार या मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' या धर्मवीर भारती के काव्य 'अंधा युग' में। सृष्टि में व्याप्त अंधेरे की रहस्यमयी छाया यथार्थ होते हुए भी एक हद तक अमूर्त रूप में आती है, तो युग में फैले मानव-कृत-रचित अंधेरे की उपस्थिति ठोस रूप में आकर ग्रहण करती है, तभी उस का प्रतिकार होता है। प्राकृतिक सृष्टि से व्याप्त अंधकार की उपस्थिति अपने करूण-कोमल रूप में 'मौन' की शक्ल में भी उपस्थित होती है शमशेर जी के काव्य में। जहां शब्द है, वहां प्रकाश है। जहां शब्द और शब्द के मध्य शून्य या खाली स्थान—अंतराल है, वहां मौन है। और यह मौन और कुछ नहीं रहस्यमय अंधेरे का रूप है। शमशेर जी के द्वारा बैठाये हुए स्थान से आप शब्द को जरा हिला-डुला भी नहीं सकते। मौन खंडित हो जायेगा। अंधेरा खंडित हो जायेगा। तब रचा हुआ प्रकाश कैसे अखंडित रहेगा। कभी-कभी वह शब्दों की ध्वनियों को भी तोड़ कर रचते हैं। ध्वनियों के भीतर ध्वनियों का नया प्रायोगिक सृजन करते हैं और मौन को, अंधेरे को नये अर्थ-आयाम से जोड़ते हैं। 'एक नीला दरिया बरस रहा' कविता में देखें।

तब मेरे लिए पहाड़ "अरावली के
पुरातन-तम"

यहां पहाड़ के बाद खाली स्थान पहाड़ की विराटता की अनुभूति कराने के लिए छोड़ दिया गया है। यहां मौन भरा है या कहें कि अंधेरा,

"   अभी से
हां   मगर
वह
स्व S
र
एक फनल
                    धुंअवाता
                    विशाल आकाश में"

यहां 'स्वर' शब्द की ध्वनियों को भी तोड़ दिया है। 'र' एक समूची पंक्ति बन गया है।

हां, तो हम कह रहे थे कि क्लासिक कवियों ने इस अंधेरे को साधा है। उजाला तो सक्रिय करता है। हरकत में लाता है। कई तरह की उत्तेजनाएं जगाता है। अंधेरे की घाटी-चट्टानी पहाड़ों से धिरी हो तो उस के मध्य घिरा अंधेरा जैसे दीखने लगता है सीमित हो कर, परंतु पहाड़ हटने पर भले ही दिखे नहीं अंधेरा वह रहता जरूर है अपने स्पंदित मौन में। अंधेरा मिटता नहीं, मौजूद रहता है। प्रकाश, अंधेरे को मिटाता भी है तो थोड़ी देर को फिर स्वय भी मिट जाता है। पर अंधेरा, वह सर्वत्र है। सदा है। क्लासिक-शास्त्रीय काव्य-कला अंधेरे की तरह सर्वत्र है। सदा है। शमशेर उजाले के कवि नहीं, इन अर्थों में संघर्ष के कवि नहीं। अंधेरे और प्रशांति के कवि है! व्यक्ति की ऐन्द्रिकता-पांचों ज्ञानेन्द्रियों, जितना अंधेरे में सजग होती हैं, उतनी उजाले में नहीं। शमशेर की कविता में एन्द्रिकता अपनी पूरी और भरपूर सजगता और उत्कृष्ता में विद्यमान है। क्या बिंबों के नायाब, तरह-तरह के ललित फूल खिले हैं शमशेर जी के यहां।

प्रतीकों में, तो धरती नारी-प्रकृति है। धरती धारण करती है। फिर जिस बीज को कोख में धारण करती है उस समूचे वजूद की संभाल में चिंता और चेतना में रचती है। तो शमशेर का कवि भी इन अर्थों में, बड़े कवियों की तरह स्त्रैण है। कोख है। कोखपन वहां सजग है। कोख की संभाल—धैर्य-प्रतीक्षा-पोषण की प्रक्रिया अक्षुण्ण गतिमान है:—

जब आंसू छलक न जा कर
आकाश का फूल बन गया हो,
— वह मेरी कविताओं-सा मुझे लगेगा:
तब तुम मुझे क्या कहोगे?

अपने काव्य की और अपनी पहचान उस आंसू से की है कवि ने, जो छलक तो आया हो, किंतु आकाश का फूल बन गया हो। आंसू के

माध्यम से खड़ा किया यह आकाशीय बिंब अपने सौंदर्य स्वाद में ही नहीं अपनी करूण प्रकृति और मदिरता में कितना लुभावना और प्रिय बन गया है। ऐसा ही, कुछ-कुछ शमशेर और उन की कविताओं का मिजाज है।

गहरी भावना जब भी सजग होगी वह प्रकृति के निकट ले जायेगी। नैसर्गिक होगी। प्रकृति और कवि की उद्‌भावनाओं में उद्‌भूत प्रकृति—दोनों का द्वैत वहां शेष रह नहीं जायेगा। उस अद्वैत प्रकृति-सत्य के निकट खुली-पहुंची भावना और उस की अनुभूति विशिष्ट होगी। भले ही उसे यथार्थ-अनुभूति कह लिया जाये या अभौतिक (मलयज); जबकि यह अध्यात्म की कोटि में आती है। क्योंकि शमशेर शुद्ध और प्रथमतः भावना के कवि हैं, विचार के नहीं। वह सभी प्रभावों को भावना में घुला कर, भावना में ही लेते हैं। उन्हें कविता इसलिए 'फ्लैश' की तरह आती, कौंधती है। चिंतन विचार से नहीं। तीव्र भावनात्मक कौंध जो क्षणांश में ही, यदि न पकड़ी जाये तो, विलुप्त हो जाती। (शमशेर):—

—"शांत
मेरी भावना में तुम्हारा मुख कमल"
—"पी गया हूं दृश्य वर्षा काः
हर्ष बादल का
हृदय में भर कर हुआ हूं हवा-सा हल्का"

उक्त दोनों उद्धरण हमारे कथन को पुष्ट कर रहे हैं। यों उन की समूची काव्य प्रक्रिया की यही प्रकृति है, मूलतः। और कवि को भी।

शमशेर जी ने अपने अहं को सामाजिक क्षेत्र से हटाकर समूचा सृजन आयामों में फैला रखा है। इसलिए उनमें अपने भौतिक अभावों, स्थितियों के प्रति जाहिर क्रोध या शिकायत या आक्रोश कम ही पैदा होता। बहुत हुआ तो कविता में उस भावनात्मक प्रतीकों में व्यक्त किया। वस्तुतः शमशेर जी ने यथार्थ विचार को भी भावों में परिवर्तित कर संवेदनात्मक बिंब के रूप में व्यक्त किया। इस प्रक्रिया के रहते कोई भी वस्तु ठोस नहीं रह जाती उनके यहां भले ही बिंब यथार्थ और ठोस लगते हों; किंतु अनुभूत हैं। सौंदर्य और प्रेम की भी बहुत-सी कविताएं, इसलिए उन्होंने संगीत सुन कर या चित्र देखने के प्रभावों से रची हैं। संभवतः इतनी, इस पद्धति से किसी अन्य कवि ने कविताएं नहीं लिखी। यह पद्धति उन के स्वभाव और काव्य मन के अनुकूल पड़ती रहीः

"एक रोमान
जो कहीं नहीं है मगर जो मैं
हूं हूं
एक गूंज ऊबड़ खाबड़
लगातार
आंख जो कि हुए अंखुआए हुए
उपज आयी हो बहुत ही करीब बहुत
ही करीब"

इस उद्धरण से एक और बात ध्यान में आती है कि कवि होना—सच्चा और बड़ा कवि होना एक घाव होना है। घाव जो मानव मात्र की ही नहीं, प्राणी मात्र की पीड़ाओं से बना हो। भले ही निजी किसी घटना—दुर्घटना में आरंभ हुआ हो कभी, पर उस के पीड़क विस्तार की शोभा, उस की गहनता की गरिमा हल्की से हल्की भ्रू-भंगिमा को पकड़ती है। छोटी से छोटी पत्ती के कंपन को दर्ज करती है। संवेदित होती है। शमशेर जी ने अपने को ऐसा खुलाघाव बन जाने दिया। फिर सब कुछ इसी घाव से आंख से देखा। यह घाव और घावनुमा आंख यों आप देख नहीं पायेंगे। एक घाटी का ऊबड़-खाबड़पन भी मौजूद है इस में, किंतु बाहर से, बाहरी आंखों से इसे लक्ष्य कर पाना कहां आसान है। जबकि कवि हमारे बीच सदेह रहता हो। बहुत करीब हो। ऐसी करीबी दूरी ही लाती है। और यह दूरी ही दीवार बनी रही, जब तक वह रहे। लोग अपनी असहजताएं ले कर उन से मिलते। शमशेर उन्हें कैसे मिलते— वह अपनी सहजता में लोगों को लेते और हर बार ठगे जाते। उन की प्रकृति को, स्वभाव को किसी भी कोण से देखो, वह काव्यमय लगेंगे। इस प्रसंग में एक उद्धरणः

"तुम ने धरती का पद्य पढ़ा है?
उस की सहजता प्राण हैं।"

धरती, उस का पद्य, सहजता और प्राण! इस सूत्र में समूचा शमशेरियन मिजाज़ समाहित है। धरती का अपना पद्य है जो भीतर-बाहर की गतियों-रीतियों, ऋतुओं-रंगतों, प्रकृतियों में व्यक्त है। धरती अपने आप में सब कुछ को धर्म की तरह धारण किये है। धैर्य की तरह पोषण करती है रसाप्लावित हाथों, सांसों, को साधती-संभालती है। यह सब कार्य सहज रीति से घटित और सम्पन्न हो रहा है। यह धरती की प्राणता है; इसलिए यही सप्राण है। जहां सृजन का प्रण शेष है, वहीं प्राण शेष है। अन्यथा मृत्त है; मृत्तिका वत है।

शमशेर से मिलना—एक जीवंत अहसास से मिलना होता, एक काव्यमय अनुभव से स-ब-रू होना होता। किसी भी रंग में हों, किसी भी स्थान पर हों। जब भी मिलें शमशेर आप को भावना में मिलेंगे। अपनी भावना में ले जायेंगे। समूचे वजूद को उन्होंने जैसे कविता में बदल लिया था। धुला दिया था। उन्हें सुनना जैसे आंखों से ओझल मधुर-मदिर जल प्रवाह को सुनना होता। उन की ही काव्य-पंक्तियों में कहें तो—

"कहीं छिपा हुआ बहता पानी
बोल रहा थाः अपने स्पष्ट मधुर
प्रवाहित बोल।"

आज लोग तरह-तरह की हैरानियां व्यक्त कर रहे हैं शमशेर को ले कर, उनकी छोटी-छोटी बातों, आदतों को लेकर हर एक के पास कुछ न कुछ कहने को है। चाहे थोड़ा ही हो किंतु महत्वपूर्ण लगता है, चाहे शमशेर के हाथों की एक बार पी हुई नीबू-चाय हो या एक बार की मुलाकात या एक बार उन के मुख से सुनी कविता। कारण? शमशेर ने अपने को मिटा कर कविता को जीवित रखा। कविता को अपने श्वास दिये अपने प्राण समेट कर कविता में डाले। स्वयं अपने को, अपने दुखों, अभावों कष्टों को भूले रहे। जब कभी कोई टीस उठती भीतर, आह निकलती तो उसे भी कविता में, कविता शर्तों पर व्यक्त कियाः

"मैं समय की एक लम्बी आह
मौन लम्बी आह"

और इस आह में युग के अंधेरे, जो उनकी झोली में पड़े, उन के साथ रचना में समाविष्ट हैं। प्रकृतिगत प्रकाश गर्मी / अंधेरे रचना में कैसे धुले-मिले हैं; इन्हें अलग पाना आसान नहीं विशेषकर जब कवि स्वयं ही कविता बन गया हो! ■

ए-3 / 283, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-1100063

भारतीय उपन्यासों में समान तत्व

—जगदीश चतुर्वेदी

उपन्यास आधुनिक युग की अत्यंत जनप्रिय और यथार्थपरक विधा है। प्राचीन समय में जो काम महाकाव्य करता था, आधुनिक काल में वही कार्य उपन्यास कर रहा है। निश्चय ही उपन्यास आधुनिक युग का महाकाव्य है। भारत में महाकाव्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है किन्तु उपन्यास आधुनिक विधा है, जो काफी सीमा तक पाश्चात्य जीवन-दर्शन, संस्कृति, साहित्य आदि से प्रभावित हुए हैं। अंग्रेजों का शासन पूरे भारतवर्ष पर था, अतः हमारे जीवन पर उनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। वस्तुतः आधुनिक युग का भारतीय साहित्य पाश्चात्य साहित्य से, विशेषतः अंग्रेजी साहित्य से, काफी प्रभावित रहा है।

कुछ विद्वान भारतीय उपन्यास के प्रादुर्भाव को प्राचीन भारतीय वाङ्मय में खोजने का प्रयास करते हैं। उनकी मान्यता है कि भारत में कथा कहने की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। वे यह मानते हैं कि उपन्यास को **"देशकुमार चरित", "कादंबरी" और कथा सरित्सागर"** जैसे ग्रंथों को परंपरा का विकास क्यों न माना जाए। यह कहना भी कुछ सीमा तक ठीक है कि उपन्यास के बीच तत्व संस्कृत ग्रंथों में पहले से विद्यमान थे।

विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यिक रूपों में अत्यंत रोचक एकरूपता मिलती है और यह अतिशयोक्ति नहीं होगी कि **"भारतीय वाङ्मय अनेक भाषाओं में अभिव्यक्त एक ही विचार है।"** यह भी एक विराट समानता है कि महाभारत और रामायण पर आधारित कथाओं की परंपरा प्रायः पूरे देश में एक ही है।

आधुनिक युग में भारतीय भाषाओं में कथा साहित्य का प्रारंभ या तो अंग्रेजी उपन्यासों के अनुवाद से हुआ अथवा औपन्यासिक कथाओं को आधार बना कर हुआ। ब्रिटिश उपन्यासों के अनुवाद से हुआ अथवा औपन्यासिक कथाओं को आधार बना का हुआ। ब्रिटिश शासन के प्रारंभिक काल में अंग्रेजी के लोकप्रिय उपन्यासों का अनुवाद कई भारतीय भाषाओं में हुआ। भारतीय साहित्य में उपन्यास का प्रादुर्भाव सबसे पहले किस भारतीय भाषा में हुआ, यह विवाद का विषय हो सकता है। हां, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सन् 1850 के आसपास अंग्रेजी उपन्यासों के अनुवाद या उनके अनुकरण पर उपन्यास लिखे जाने लगे थे। यह भारतीय उपन्यास का शैशव काल था। प्रारंभिक उपन्यासों का कथ्य उपदेशात्मक अधिक था। उपन्यासकारों ने जिन विषयों को अपने उपन्यास का प्रतिपाद्य बनाया, वे स्थूल थे। दूसरे शब्दों में, उनका शिल्प-विधान अनगढ़ था। इस समय के उपन्यासों में विषय के विवेचन में वह गहराई और विश्लेषणपरक दृष्टि नहीं मिलती है जो बाद के भारतीय उपन्यासों में देखने को मिलती है। और, यह अस्वाभाविक भी नहीं है क्योंकि हर विधा के साथ ऐसा होता रहा है।

भारतीय उपन्यास के प्रारंभिक चरण में अंग्रेजी से भारतीय भाषाओं में अधिक अनुवाद हुए। इसके पश्चात् भारतीय भाषाओं में बंगला को मौलिक रचनाएं प्रस्तुत करने का श्रेय प्राप्त है। प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक चरण में बंगला से अनुवाद हुए। किन्तु अनुवाद अनुवाद ही होता है और मौलिक रचना का अपना अलग ही महत्व है। अनुवाद के बाद मौलिक उपन्यासों की रचना प्रत्येक भारतीय भाषा में हुई।

असमिया, कन्नड़ आदि भारतीय भाषाओं में जॉन बनियन के अंग्रेजी उपन्यास "पिलिग्रिम्स प्रोग्रेस" के अनुवाद के साथ आधुनिक उपन्यास विधा का श्रीगणेश हुआ। इसी प्रकार मलयालम के प्रथम उपन्यास "कुंदलता" पर स्काट की रचनाओं का प्रभाव है। हिन्दी कथा लेखन पर भी अंग्रेजी का प्रभाव रहा। जो कभी सीधा और कभी बंगला के माध्यम से आया।

वास्तव में यह तो भारतीय उपन्यास की पृष्ठभूमि मात्र है। भारतीय जन-जागरण के साथ भारत राष्ट्र की तरह भारतीय साहित्य और उसकी विशिष्ट विधा-उपन्यास ने भी अपनी अस्मिता को पहचान कर अनेक दिशाओं में विकास किया।

विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं के उपन्यास-साहित्य में प्रादेशिक विशिष्टताएं होने के बावजूद एक विचित्र साम्य है। 19वीं शती के उत्तरार्ध में अंग्रेजी के उपन्यासों के अनुवाद तथा वीर पुरुषों के जीवन से संबंधित ऐतिहासिक उपन्यास और तिलस्मी और ऐयारी के हैरत-अंगेज उपन्यासों की परंपरा सामान्यतः सभी भारतीय भाषाओं में परिलक्षित होती है। इन उपन्यासों को रोमांचक तथा आदर्शोन्मुख ऐतिहासिक उपन्यासों की संज्ञा से भी अभिहित किया जा सकता है। इन उपन्यासों में विभिन्न सामाजिक समस्याओं के संबंध में कई चरित्रों का निर्माण तो होता ही था, किन्तु ये चरित्र अंत में किसी आदर्श की प्रतिष्ठा करते थे। यथार्थवादी उपनयासों का प्रणयन इस भावना के बाद हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में विभिन्न भारतीय भाषाओं में ऐयारी, तिलस्म एवं रोमांचक उपन्यासों के साथ आदर्शपरक वीर गाथाएं भी उपन्यास रूप में लिखी गईं। हिन्दी में देवकीनंदन खत्री के उपन्यास चंद्रकांता संतति और भूतनाथ तथा किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों ने बहुत लोकप्रियता प्राप्त की। इन पुस्तकों का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। इसी अवधि में उर्दू में पंडित रतननाथ सरशार ने "फसाना-ए-आज़ाद" नामक वृह्दाकार उपन्यास की रचना की। इस उपन्यास का उर्दू साहित्य पर बहुत प्रभार पड़ा। सिंधी में भी मिर्ज़ा कलीच बेग ने " किस्सा दिलाराम" नामक ग्रंथ की। रचना की उत्तर भारत की भाषाओं में जिस प्रकार इन रोमांचकारी घटनाओं से भरे उपन्यासों का प्रणयन हुआ, उसी प्रकार दक्षिण में ओ॰ चंदू मेनन तथा सी॰वी॰ रामन पिल्ले ने मलयालम में, नरहरि गोपाल कृष्णन् ने तेलुगु में इस प्रकार के उपन्यासों का सृजन किया। तिलस्मी उपन्यासों के साथ जासूसी उपन्यासों की एक धारा भी भारतीय भाषाओं में दिखाई दी। तमिल के नटेश शास्त्री, मलयालम के केशव कुरूप, हिन्दी के गोपालराम गहमरी, उड़िया के उमेशचंन्द्र सरकार आदि ने कई महत्वपूर्ण जाससी उपन्यासों की रचना की।

इन जासूसी उपन्यासों के बाद भारतीय भाषाओं में ऐतिहासिक उपन्यासों का प्रादुर्भाव हुआ। इन्हीं के साथ-साथ सामाजिक उपन्यास भी लिखे जाने लगे। ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा का विशेष महत्व यह है कि विभिन्न अंचलों में भारत के वैभवपूर्ण अतीत की झांकी इन उपन्यासों के माध्यम से साकार हो सकी। कुछ उपन्यासों ने भारतव्यापी ख्याति अर्जित की। बंकिमचन्द्र चटर्जी के "दुर्गेशनंदिनी" और "कपाल कुंडला" उपन्यासों को

देश व्यापी ख्याति मिली। कई भारतीय भाषाओं में इनका अनुवाद हुआ। इसी अवधि में उड़िया के फकीरमोहन सेनापति, असमिया के पद्म गोहाई बरूआ, मराठी के हरिभाऊ आप्टे, मलयालम के रामन पिल्लै और उर्दू के अब्दुल हलीम सरर ने कई ऐतिहासिक उपन्यास लिख कर भारतीय कथा की श्रीवृद्धि की।

बीसवीं शताब्दी के पहले दो दशकों में भारतीय उपन्यास के क्षितिज पर कई प्रसिद्ध उपन्यासकारों का प्रादुर्भाव हुआ। इसी दौरान बंगाल में टैगोर और शरतचन्द्र ने अपने सामाजिक उपन्यासों के द्वारा जन-जन में नवजागृति पैदा करने में सक्रिय सहयोग दिया। शरत की रचनाओं ने बंगाल की नारी के विविध रूपों को अत्यंत जीवंत रूप में प्रतिष्ठित किया। उनकी रचनाएं बंगला के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनूदित एवं लोकप्रिय हुईं। इसी समय हिन्दी में प्रेमचन्द का आगमन एक अपूर्व घटना कहा जा सकता है। उर्दू और हिन्दी दोनों में प्रेमचन्द ने अपनी लेखनी द्वारा एक नवीन सामाजिक संस्कार पैदा किया। इस अवधि में अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनेक सामाजिक उपन्यास लिखे गए। गुजराती में कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, रमणलाल बसंतलाल देसाई, उड़िया में फकीरमोहन सेनापति, असमिया में लक्ष्मीनाथ बैजबरूआ, सिंधी में भैरूमल मेहरचन्द और दक्षिण की भाषाओं में कन्नड़ में एम० एस० पुट्टन, तेलुगु में विश्वनाथ सत्यनारायण और गुडिपादि वेंकटचलम्, मलयालम में अच्युत मेनन, के० एम० पणिक्कर आदि ने विभिन्न सामाजिक समस्याओं को अपने उपन्यासों का आधार बनाया। इन उपन्यासों में दहेज, बहुविवाह प्रथा, ऊंच-नीच के बंधन, कृषकों की दारूण दशा, जमींदारों के अत्याचार, धनी वर्ग की ऐयाशी, कुशिक्षा के दुष्प्रभाव तथा वेश्याजीवन आदि के संबंध में कई ज्वलंत प्रश्नों से उपन्यासकार जूझते दिखाई देते हैं। भारतवर्ष में स्वाधीनता आंदोलन बीसवीं सदी के प्रारंभ से ही जन-जन में एक आंदोलन के रूप में उमड़ रहा था और इस भावना को प्रश्रय देने में भारतीय कवियों एवं लेखकों का विशेष अवदान है। इस अवधि में कई ऐसे सामाजिक उपन्यास लिखे गए जिनमें इस राजनैतिक चेतना का दिग्दर्शन होता है। प्रेमचन्द ने "रंगभूमि" और कर्मभूमि", रवीन्द्रनाथ टैगोर ने "गोरा" और "नौका डूबी", शरतचन्द्र ने "पाथेर दावी" और "श्रीकांत" उपन्यासों के द्वारा एक सर्वदा नवीन सामाजिक-राजनैतिक चेतना का विकास किया। गुजराती के लब्धप्रतिष्ठ कथाकार पीतांबर पटेल, असमिया के रजनीकांत बरदलै और उड़िया के कालिंदीचरण पाणिग्रही की रचनाएं भी इस चेतना को सशक्त स्वरों में अपने अंचलों में प्रभावपूर्ण ढंग से प्रसारित कर रही थीं। आज़ादी के पूर्व मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का भी एक ऐसा दौरा आया जिसने बाह्य घटनाओं के साथ मनुष्य की आंतरिक ऊहापोह और सुख-दुःख एवं विडनवनाओं को वाणी देने का शुभारंभ किया। हिन्दी में जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय और इसाचन्द्र जोशी, गुजराती में जयंती दलाल एवं शिवकुमार जोशी, असमिया में प्रफुल्ल चन्द्र गोस्वामी, पंजाबी में नानक सिंह और संतसिंह सेखों तथा बंगला में विभूतिभूषण एवं तारा शंकर वंद्योपाध्याय ने विभिन्न मानसिक गुत्थियों को मनोवैज्ञानिक ढंग से सुलझाने में अभूतपूर्व योगदान दिया। दक्षिणांचल की भाषाओं में भी कई महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक उपन्यास इस बीच लिखे गए। मराठी में वि० स० खांडेकर, ना० सि० फड़के और मामा वेरेरकर का योगदान विशेष स्पृहणीय माना जाएगा। मलयालम में अच्युत मेनन; तकषि शिखशंकर पिल्लै और केशवदेव, कन्नड़ में शिराम कारंत और के० वी० पुट्टप्पा, तमिल में श्रीनिवास पिल्लै और पन्नेयप्प चेट्टियार आदि के उपन्यासों में स्त्री-पुरूषों के बदलते संबंध एवं मानवीय विसंगतियों के कई रूप अंकित किए गए।

इन सामाजिक, राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के साथ विभिन्न अंचलों की मिट्टी की गंध कुछ विशिष्ट आंचलिक उपन्यासों में सुवासित हुई है। गुजरात के आंचलिक उपन्यास विशेष रूप से चर्चित रहे। पन्नालाल पटेल और सुंदरम् के उपन्यासों में गुजराती की रहस्य श्यामला माटी की गंध एवं आंचलिक जीवन की अपूर्व झांकी मिलती है। यही विशेषता रजनीकांत बरदलै के आंचलिक असमिया उपन्यासों और गोपीनाथ महांति के उड़िया उपन्यासों में परिलक्षित होती है। बनफूल और प्रमथनाथ विशि के बंगला उपन्यास भी इसी वर्ग में परिगणित किए जा सकते हैं। मलयालम के तकषि शिवशंकर पिल्लै, एस० के० पोट्टेक्काट्ट, कन्नड़ के मास्ति वेंकटेड आयंगाकर और कुवेंपु, तेलुगु के सोमेश्वर शर्मा और तमिल के सीतारामैय्या के उपन्यास अपने अंचल की करूण एवं जीवंत कथा कहने में सक्षम हैं। प्रेमचन्द का "गोदान" भी इसी दौर की रचना है। ऐसा लगता है कि उपन्यास साहित्य के विभिन्न प्रयोग जो विश्व वांङ्मय में दिखाई दे रहे थे, स्वतंत्रतापूर्व के भारतीय उपन्यासों में बीच रूप में प्रगट होने लगे थे। यह परंपरा आजादी के बाद अधिक विकसित होकर सुष्ठु, प्रांजल एवं वृहत्तर परिप्रेक्ष्य में आगे के भारतीय उपन्यासों में दिखाई देती है।

स्वतंत्रता के बाद भारतीय उपन्यासकार विभिन्न कथानकों तथा घटना-चक्रों को अपने उपन्यास का माध्यम बनाते हैं। समसामयिक जीवन की समस्याओं से उपन्यासकार साक्षात्कार करते दिखाई देते हैं। नित्य प्रति के जीवन और परिवेश के कई चित्र इन उपन्यासों में परिलक्षित होते हैं। रवीन्द्र और शरत की समृद्ध परंपरा पाकर बंगला उपन्यासों में कई नए प्रयोग आजादी के बाद दिखाई दिए। प्रफुल्ल राय ने अपने उपन्यास "जन्म भूमि" में सामान्य जन से उच्च वर्ग की टकराहट का चित्रण किया है। "केयापातार नौका" में उन्होंने जन-जीवन पर देश "विभाजन के प्रभाव को दिखाया है। संतोषकुमार घोष ने "समय आमार समय" में अपने अंतरंग की खोज के साथ समसामयिक परिवेश को पहचानने की चेष्टा की है। आशापूर्णा देवी ने अपने उपन्यासों में संयुक्त परिवार और परिवारजनों की पारस्परिक संबंधों और यातनाओं की कथा कही है। उनके तीन प्रसिद्ध उपन्यासों-प्रथम प्रतिश्रुति, "सुवर्णलता" और "बकुलकथा" में भारतीय और विशेषतः बंगाली नारी की मुक्ति-आकांक्षा और आत्म-प्रसार की अदम्य पीड़ा का दिग्दर्शन है। प्रतिभा बसु के उपन्यास भी परिवार तथा प्रेम के इर्द-गिर्द घूमते हैं। विमल कर के उपन्यासों में युवा-वर्ग की बेचैनी, उद्देश्यहीन जीवन की छटपटाहट और समसामयिक समस्याओं से टकराहट है। युगीन चिंताओं से लेखक का महरा सरोकार है। विमल मित्र ने भी कुछ महत्वपूर्ण उपन्यास इस बीच लिखे जो भारत में प्रसिद्ध हुए। बंगला के समरेश बसु का नाम भी अपने प्रयोगों, आंचलिक अभिव्यक्तियों एवं प्रेम विषयक भावनाओं की तर्कपूर्ण चित्रण के लिए स्मरणीय है। पूर्वांचल की दो अन्य भाषाएं असमिया और उड़िया में भी कई श्रेष्ठ उपन्यास आजादी के बाद लिखे गए। विरंचिकुमार बरूआ का प्रसिद्ध उपन्यास "जीवनर बाटत" आजादी के कुछ पूर्व एक छद्मनाम से प्रकाशित हुआ, जिसमें समसामयिक जीवन की विभिन्न प्रवृत्तियों से साक्षात्कार दृष्टिगत होता है। अपने कलात्मक चित्रण के लिए यह उपन्यास असमिया साहित्य की उपलब्धि माना जाता है। ग्रामीण और नगर जीवन का सटीक चित्रण इस उपन्यास में मिलता है। बरूआ के अन्य उपन्यासों में भी जो स्वतंत्रता के बाद प्रकाशित हुए, चाय बागानों के जीवन और नारी-पुरूष संबंधों का

सहज एवं जीवंत चित्रण है। स्वातंत्र्योत्तर असमिया समाज में पनपे भ्रष्टाचार का ज्वलंत चित्रण दीनानाथ शर्मा ने अपने उपन्यासों में किया है। इनके अतिरिक्त प्रेमधर राजखोवा, वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य और सैयद अब्दुल मलिक के उपन्यासों ने आधुनिक असमिया कथा-साहित्य को विशिष्टता प्रदान की। उड़िया में भी आजादी के बाद कई उपन्यासकारों ने महत्वपूर्ण कृतियों का सृजन किया। गोपीनाथ महांति के उपन्यास "हरिजन" और "परजा" आजादी के बाद प्रकाशित हुए, जिनमें दलित एवं शोषित जनजातियों के प्रति क्रूरताओं के विरूद्ध मानवीय संवेदना प्रस्फुटित हुई है। कुछ प्रगतिवादी उपन्यासकारों ने भी उड़िया में कई उल्लेखनीय रचनाएं कीं। अस्तित्ववादी उपन्यासों की भी एक परंपरा उड़िया उपन्यासों में दिखाई देती है। नित्यानंद महापात्र के कथा प्रयोगों तथा गोपीनाथ महांति के "माटीमटला" में उड़ीसा के ग्राम-जीवन तथा बदलते हुए सामाजिक परिप्रेक्ष्य को अत्यंत सफलता से चित्रित किया गया है। इस कृति पर लेखक को ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ। महांति के अतिरिक्त अन्य चर्चित उड़िया उपन्यासकार हैं-राजकिशोर पट्टनायक, गोविंद दास, शांतनु कुमार और प्रतिभा राय।

बंगला, उड़िया और असमिया की यह समृद्ध परंपरा अन्य भारतीय भाषाओं में भी दृष्टिगत होती है। पश्चिमांचल की कृतियों में भी कई वही विशेषताएं पाई जाती हैं जो पूर्वांचल के उपन्यासों में हैं। गुजराती में कन्हैयालाला मुंशी की ऐतिहासिक एवं पौराणिक उपन्यासों की परंपरा आजादी के बाद भी दिखाई देती है। साथ ही पन्नालाल पटेल के आंचलिक उपन्यास भी आजादी के बाद प्रकाशित होते रहे। चुन्नीलाल मडिया के मनोवैज्ञानिक उपन्यास भी इसी अवधि में प्रकाशित हुए। यों जयंती दलाल के उपन्यास "ठीनु अथ विभा" से जो 1943 में प्रकाशित हुआ समसामयिक गुजराती उपन्यास का शुभारंभ माना जाता है। इस उपन्यास में बाह्य घटनाचक्रों के स्थान पर अंतर्मन के वात्याचक्रों को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। इनके अतिरिक्त पीतांबर पटेल, चन्द्रकांत बक्षी, शिवकुमार जोशी और मोहम्मद माकड़ जैसे उपन्यासकारों ने अपनी कृतियों द्वारा गुजराती साहित्य के कई नए क्षितिज छुए हैं। यही स्थिति मराठी साहित्य की भी है। गंगाधर गाडगिल, बसंत भनेटकर, अन्नाभाऊ साठे के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों ने मराठी साहित्य को एक नई गति प्रदान की। गंगाधर गाडगिल का उपन्यास "लिसीले फूल" में प्रेम और वासना के विभन्न रूपों का विश्लेपण किया गया है। एक दूसरी विशिष्टता मराठी उपन्यासों की आंचलिक रचनाएं हैं। शरद चन्द्र मक्तिबोध की उपन्यास "क्षिप्रा" इस दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कृति है। साथ ही ऊधी सलके के आंचलिक उपन्यास विशेष रूप से सराहे गए। स्वतंत्र्योत्तर मराठी उपन्यासकारों में भालचन्द्र नेमाणे का "कोशल विश्वास", मी० च० खांडोलकर का "अजगर कोंडुरा", जयंत दलवी का "चक्र" विभित्र कथा-प्रवृत्तियों को दिग्दर्शित करने वाले प्रमुख उपन्यास हैं।

उत्तर भारत की भाषाओं का आजादी के बाद बहुमुखी विकास हुआ और नए-नए कथा प्रयोग किए गए। प्रेमचन्द के बाद हिन्दी में जेनेंद्र कुमार तथा इलाचन्द्र जोशी के कई उपन्यास आजादी के बाद प्रकाशित हुए। इन दोनों

उपन्यासकारों ने हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास को प्रौढ़ता प्रदान की। मनोवैज्ञानिक उपन्यास की इस धारा ने न केवल मनोविश्लेपण शास्त्रियों द्वारा निर्देशित रहस्यों को अपनाया बल्कि प्रकृतवाद, अतियथार्थवाद, अस्तित्ववाद, प्रतीकवाद आदि के द्वारा कई मानव सत्यों का रहस्योद्घाटन किया। इसी के समानांतर प्रेमचन्द से प्रभावित समाजवादी विचारधारा से संबंद्ध उपन्यास भी प्रकाशित होते रहे। इन उपन्यासों की परंपरा मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रभावित हुई और युगीन सत्यों को इस राजनैतिक बोध से संबंद्ध माना गया। यह दृष्टि यथार्थवादी कही जा सकती है। इन उपन्यासों का अंत आदर्शोन्मुख नहीं है। वस्तुतः मार्क्सवाद के आग्रह से आदर्शवादी एवं आध्यात्मिक मूल्यों का विघटन होता गया और स्वयं प्रेमचंद को "गोदान" जैसा उपन्यास और "कफन" जैसी कहानी लिखनी पड़ी। प्रेमचन्द जी का आदर्शवादी विभ्रभ भी धीरे-धीरे टूट गया और लेखक अधिक यथार्थोन्मुख होते गए।

स्वतंत्रता के पश्चात् हिन्दी उपन्यासों में विषय-वैविध्य और नए-नए प्रयोग दृष्टिगत होते हैं। 1947 से 1950 के बीच कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गए। राहुल सांकृत्यायन का "सिंए सेनापति" (1947) चतुरसेन शास्त्री का "वैशाली की नगर बधू" (1949), रांगेय राघव का "मुर्दो का टीला" (1849) और वृंदावनलाल वर्मा की "मृगनयनी" (1950) आदि इसी कोटि में परिगणित किए जा जा सकते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी का उपन्यास "बाणभट्ट की आत्मकथा" भी इसी दौरान प्रकाशित हुआ। यह हिन्दी का एक बहुत महत्पूर्ण उपन्यास है। इन ऐतिहासिक उपन्यासों के अतिरिक्त जैनेंद्र कुमार, भगवतीचरण वर्मा, अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी के भी कई महत्वपूर्ण उपन्यास इसी समय प्रकाशित हुए। एक नई शैली आंचलिक उपन्यासों में भी दिखाई दी। फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास अंचल विशेष के वैशिष्ट्य को कलात्मक रूप में प्रकट करने में अत्यंत सफल रहे हैं। आंचलिक होने के बावजूद रचनाकार की दृष्टि पूर्णतया असामयिक और आधुनिक है। इन कृतियों में लेखक के संवेदन और उसकी संरचना में एक विशिष्ट संबंध एवं संतुलन परिलक्षित होता है। इसी प्रकार अमृतलाल नागर के उपन्यास "बूंद और समुद्र" में आधुनिकता का बोध मूल्यों के स्तर पर व्यक्त हुआ है। एक वृहत्तर फलक पर मानव मूल्यों का संक्रमण इसमें दिखाया गया है। व्यक्ति और समाज, व्यक्ति और उसका परिवेश आदि को माध्यम बनाकर मनुष्य की अस्मिता के पहचानने की सफल चेष्टा की गई है। यथार्थ और मूल्य के संबंध निरूपण की दृष्टि से भगवती चरण वर्मा का उपन्यास "भूले विसरे चित्र", उपेंद्रनाथ अश्क का "बड़ी-बड़ी आंखें" और धर्मवीर भारती का "सूरज का सातवां घोड़ा" उल्लेखनीय रचनाएं हैं।

भारतीय साहित्य में जो दो प्रमुख धाराएं आजादी के बाद दिखाई दी उनमें एक-मार्क्सवादी थी और दूसरी अस्तित्ववादी। पहले वर्ग के उपन्यासों में नागार्जुन का "बलचनमा", भैरवप्रसाद गुप्त का "गंगा भैया", यशपाल का "झूठ-सच" और रांगेय राघव का "कब तक पुकारूं" में जीवन को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से देखने का प्रयास है। दूसरी ओर अज्ञेय के "नदी के द्वीप", और "अपने-अपने अजनबी", मोहन राकेश के "अंधेरे बंद कमरे" और कृष्णबलदेव वैद के उपन्यास "उसका बचपन" में यथार्थ को अस्तित्ववादी दृष्टि से देखने की चेष्ट है। इसी दूसरे वर्ग में हम निर्मल वर्मा के उपन्यास "वे दिन" को भी परिगणित कर सकते हैं।

उत्तर भारत में आजादी के बाद कश्मीरी, उर्दू और पंजाबी कथा साहित्य में भी कई नए प्रयोग एवं नई-नई उद्भावनाएं दृष्टिगत होती हैं। विभाजन का सीधा प्रभाव पंजाब और सिंध के निवासियों पर पड़ा। पंजाब में पंजावी के साथ उर्दू के रचनाकार बहुतायात से थे। इस नर संहार का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव आजादी के बाद के रचनाकारों की रचनाओं पर देखा जा सकता है। कृश्न चंदर के उपन्यास "गद्दार" और रामानंद सागर के

उपन्यास "और इंसान मर गया" में विभाजन की यह दारूण कथा सशक्त रूप से व्यंजित हुई है। हयात उल्लाह अंसारी का उपन्यास "लहू के फूल" बीसवीं शताब्दी के हिन्दुस्तान का आँखों देखा इतिहास और इस देश की महान् संस्कृति और सभ्यता का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। राजेन्द्र सिंह

बेदी और बलवंत सिंह के दो आंचलिक उपन्यास "एक चादर मैली सी" तथा "रात", चोर और चांद" पंजाब की संस्कृति को उजागर करने वाली अत्यंत महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। आधुनिक तकनीक में अविभाजित भारत की सभ्यता, संस्कृति और चिंतन की विभिन्न रूपों का पर्यवेक्षण कुर्रतुल-एन-हैदर ने अपने उपन्यास "आग का दरिया" में सफलतापूर्वक किया है। यहां "दरिया" को समय का प्रतीक बनाकर आरंभ से अंत तक एक कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। ख्वाजा अहमद अब्बास का उपन्यास "इंकलाब", जीलानो बानो का उपन्यास "ऐवान-ए-ग़जल", अनवर अज़ीज का "धुंआ-धुंआ सवेरा" और जोगिन्दर पाल का "नादीद" विभिन्न मनः स्थितियों को दिग्दर्शित करने वाले बुहचर्चित उपन्यास हैं।

उर्दू के साथ आजादी के बाद पंजाबी साहित्य में भी कई महत्वपूर्ण कृतियों का सृजन हुआ। देश विभाजन का सर्वाधिक प्रभाव पंजाब के निवासियों पर ही पड़ा। भारत और पाकिस्तान में हुई भयांवह मारकाट, सांप्रदायिक दंगों और आबादियों की अदला-बदली के चश्मदीन गवाह पंजाब के नागरिक रहे। इसका अत्यंत सजीव चित्रण नानक सिंह ने अपने उपन्यास "अग्र दी खेड" और "खून दे सोहले" में किया है। इन उपन्यासों में तमाम खूनी दरिंदों के बीच उन चरित्रों की खोज की गई है जो इस सांप्रदायिक वैषम्य से ऊपर उठकर मानवीय सहायता के लिए अपनी जान की बाजी लगा देते हैं। नानक सिंह ने पंजाबी में सर्वाधिक उपन्यास लिख कर पंजाबी कथा-साहित्य को नई चेतना प्रदान की है। उनको पंजाबी का वरिष्ट उपन्यासकार होने का श्रेय प्राप्त है। नानक सिंह के अलावा सुरेन्द्र सिंह नरूला, नरेंन्द्रपाल सिंह और अमृता प्रीतम ने कथा-साहित्य में कई प्रयोग किए। अमृता प्रीतम के विभिन्न उपन्यास प्रेम की समस्याओं से संबंधित है। भारतीय नारी के विभिन्न रूप उनके उपन्यासों में पाए जाते हैं। "डाक्टर देव" और "पिंजर" उनके दो चर्चित उपन्यास हैं। इधर के उपन्यासकारों में मंजीत टिवाणा, दलीय कौर टिवाणा और सुरेंद्रसिंह जौहर का नाम उल्लेखनीय है। अजीत कौर भी आधुनिक जीवन-मूल्यों के प्रभाव से घटित मानव स्वभाव के परिवर्तन की पड़ताल अपने उपन्यासों द्वारा करती हैं।

पंजाबी के साथ विभाजन की विभीषिका सिंधी लेखकों के द्वारा भी व्यक्त हुई है। आजादी के बाद अपना देश छोड़कर बहुत से हिन्दू सिंधी लेखक भारत में आकर बस गए। उनमें से कई लेखकों ने सिंधी में ही देश-विभाजन और उनमें से उभरते हुए मानवीय संबंधों पर कई महत्वपूर्ण कृतियों का सृजन किया। राम पंजवाणी सामाजिक दायित्वबोध से बंधे हुए प्रतिबद्ध उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यास "चांदीअ जो चमको" में जमींदारी शोषण को जिक्र है और इसमें राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय को स्मरण किया गया है। आजादी के बाद सर्वाधिक चर्चित उपन्यासकर गोविंद मल्ही माने जाते हैं। उनका उपन्यास "प्यारजी प्यास" शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने वाला उपन्यास है। अन्य सामाजिक सिंधी के उपन्यासकार हैं-मोहन कल्पना, लाल पुष्प और गुन सामताणी। इन उपन्याकारों ने सिंधी कथा साहित्य को वैविध्य प्रदान करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

कश्मीरी उपन्यासों में भी आजादी के बाद देश-विभाजन की यंत्रणा और सांप्रदायिक विद्वेष के विषाक्त प्रभाव को दिग्दर्शित करने का प्रयास किया गया है। अमीन कामिल के उपन्यास "शटि मंज़ गाश" (अंधियार में प्रकाश) का मूल संप्रेष्य सांप्रदायिक सद्भाव को रेखांकित करना है। इस उपन्यास का केन्द्रीय विचार हिन्दू-मुस्लिम एकता है। इसी प्रकार के उपन्यास अलीमुहम्द लोन के भी लिखे हैं। इधर के नए उपन्यासकरों ने इस हिन्दू-मुस्लिम सद्भाव को अत्यंत कुशलता से चित्रित किया है। वंशी निर्दोस का उपन्यास "एक दौरा" इस सदंर्भ में बहुचर्चित कृति है।

दक्षिण की भाषाओं में आजादी के बाद उपन्यासों का लंबा सिलसिला दिखाई देता है, जिसमें ऐतिहासिक, आंचलिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आदि उपन्यासों की बाढ़-सी आ गई लगती है। तमिल में इन औपन्यासिक प्रयोगों को यदि एक ही व्यक्ति की रचनाओं में देखना हो तो निर्विवाद रूप से वह नाम कल्कि का है। कल्कि ने अपने उपन्यासों के द्वारा तमिल जनता में जन-जागरण की चेतना को लोकप्रिय बनाने में बहुत योग दिया। इनके उपन्यास "मकुटपति", "अमरताएं" और "ओसयमान करटु" ने तमिल भाषी लोगों में अत्यंत लोकप्रियता प्राप्त की। अपनी सिद्धहस्त लेखनी द्वारा कल्कि ने विविध विषयों को कथा का प्रतिपाद्य बनाया। इनके ऐतिहासिक उपन्यास भी जनप्रिय हुए। तमिल के अन्य सर्वाधिक पठित, चर्चित एवं समाहृत उपन्यासकार हैं—शंकर राम, शुद्धानंद भारती, पी०एम० कृष्णन आदि इनके उपन्यास मानवीय शोषण, नारी दुर्दशा, मनुष्य के विभिन्न मानसिक उद्वेलन तथा राष्ट्रीय भावनाओं से संबंधित हैं। तमिल के नवलेखकों की प्रायोगिक क्षमता भी हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। आधुनिक प्रवृथ्तत के सार्थ उपन्यासकार हैं— न० पार्थसारथी, अखिलन, जयकांतन, श्रीमती राजकृष्णन, पद्नाभन, इंदिरा पार्थसारथी, शिवशंकरी, वासंती आदि।

तमिल की भांति तेलुगु उपन्यास में भी स्वतंत्रता के बाद आशातीत वृद्धि हुई। आन्ध्र की जनता ने भी आजादी के पूर्व असहयोग आंदोलन में सक्रिय सहयोग दिया था और स्वतंत्रता संग्राम में धैर्य, साहस तथा शक्ति का परिचय दिया था। आजादी-पूर्व के कई कथाकारों ने अपने उपन्यासों में इन सामाजिक-राष्ट्रीय आंदोलनों का चित्तण अत्यंत मनोयोग से किया है। आजादी के पश्चात् आंध्र प्रदेश की समाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में पर्याप्त अंतर आया है। कांग्रेस के साथ-साथ कई राजनैतिक पार्टियां इस प्रदेश में दिखाई देती हैं। इन राजनैतिक परिस्थितिरयों से प्रेरित कई उपन्यास तेलुगु में लिखे गए। किसान और मजदूर की दैनिक जीवन की समस्याओं का अति यथार्थपूर्ण चित्तण श्री महीधर राममोहन राय ने अपने उपन्यास "होनामालु" (ऊं नमः) और "रथचिक्रालु" (रथ के चक्र) में किया है। आजादी के तुरंत बाद तैलंगाना में हुए जमींदारी प्रथा के विरोध का सशक्त चित्तण श्री वट्टिकोटि अलवास स्वाम ने "प्रजल मनीषि" (जनता का आदमी) नामक उपन्यास में किया है। अलवास स्वामी स्वयं जनता के प्रतिनिधि थे। आम आदमी की वेदना को इन्होंने इस उपन्यास में अत्यंत सजीवता से चित्रित किया है। वस्तुतः तेलुगु उपन्यासकार सामाजिक, अर्थिक, राजनैतिक कुप्रभावों से अछूते नहीं रहे हैं। अधिकांश उपन्यासकारों ने इन प्रभावों को आत्मसात कर कई श्रेष्ट उपन्यासों का सृजन किया है। तेलुगु के कुछ विशिष्ट सामाजिक उपन्यास हैं-श्री उन्नव लक्ष्मीनारायण का "मालपल्लि", श्री कुटुंबराव का "चदुगु" (पढ़ाई) और श्री गोपीचंद का "असमर्थ की जीवन यात्ता"। तेलुगु में ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा भी आज दिखाई देती है। श्री वेदुल सूर्यनारायणचार्य का नाम इस दृष्टि से

विशेष उल्लेखनीय है।

दक्षिण की भाषाओं के उपन्यास साहित्य में सर्वाधिक प्रयोग कन्नढ़ भाषा में दिखाई देते हैं। यों भी आजादी के पूर्व से ही कन्नढ़ में उपन्यास की समृद्धि परंपरा रही है।क कुवेंपु की बहुप्रसिद्ध कृति "मलेगकल्लि मधुमगकु" (पहाड़ियों की दुल्हिनें) आजादी के बाद प्रकाशित हुई। यह एक वृहदाकार उपन्यास है। इसमे जीवन का विस्तार और वैविध्य मिलता है। कुवेंपु का जीवन के प्रति गहन अनुभव इस कृति में उपलब्ध होता है। इसमें मलियानाद के प्राकृतिक परिवेश के विभिन्न रूपों की गाथाएं मिलती हैं। प्राकृति का परिवेश की विविधता के साथ पात्रों का जीवन-चित्रण इस उपन्यास का दूसरा आकर्षण है। शिवराम कारंत भी आजादी के बाद लिखते रहे और उनका बहुचर्चित उपन्यास "मूलजिय कनसुगलु" (गूंगी दादी के सपने) इसी दौरान प्रकाशित हुआ। उपन्यासकार के चिंतन की परिपक्वता और जीवन-दर्शन की गहरी आस्था का स्वरूप जानने की पारदर्शी दृष्टि इस उपन्यास में परिलक्षित होती है। कारंत का यह एक कालजयी उपन्यास है। इसी पर उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है। कन्नड़ उपन्यास के इतिहास में शिवराम कारंत के साथ श्री अ०न०कृष्णराव का नाम भी लिया जाता है। कारंतजी ने लगभग 40 उपन्यास लिखे और श्री कृष्णराव ने 112 । कृष्णराव के उपन्यासों में अनेक सामाजिक समस्याओं को वाणी दी गई है। परिवार, नगर-जीवन, अस्पृश्यता, वैश्याजीवन, नारी-पुरूष संबंध पर उनके कई उपन्यास कन्नड़ साहित्य में चर्चित हैं। इनके उपन्यासों के कारण कन्नड़ में पाठकों की संख्या बुहत बढ़ी। उन दो बहुचर्चित उपन्यासकारों के अलावा समकालीन लेखकों में मास्ति वेंकटेश आयंगार एवं विनायक कृष्ण गोगाक के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आजादी के बाद मास्तिजी के कम ही उपन्यास प्रकाशित हुए, किंतु जो प्रकाशित हुए उनका पाठक समाज में काफी स्वागत हुआ। श्री विनायककृष्ण गोकाक का उपन्यास "समरसवै जीवन" (समरस ही जीवन) आजादी के बाद प्रकाशित हुआ। इस विस्तृत उपन्यास में उपन्यास के अधिकांश पात्र यायावर हैं और जीवन में विकट परिस्थितियों का सामना करते हैं। किंतु इसके केन्द्र में स्वामी दास का चरित्र है। व्यक्ति और परिवेश के बीच समरसता स्थापित करना इस उपन्यास का मूल उद्देश्य है। इधर के समकालीन उपन्यासकारों में अश्वत्थ, एम० आर० श्रीनिवास मूर्ति, निरंजन आर के० रामाराव का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन तमाम कथा प्रयोगों के साथ ऐतिहासिक उपन्यासों की एक स्वस्थ परंपरा कन्नड़ में आज भी दृष्टिगत होती है। मास्ति वेंकटेश आयगंर ने 1949 में "चेन्नवसवननायक" और 1956 में "चिक्कवीर राजेंद्र" नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की। चिक्कवीर राजेंद्र कुर्ग रियासत का अंतिम शासक था। वह दंभी, क्रूर और व्याभिचारी था। उसके अतिचार के कारण जनता में त्राहि-त्राहि मच गई। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने इसका लाभ उठाकर कुर्ग पर धावा बोला और राजा को बंदी बनाकर राज्य पर अधिकार कर लिया। कुव्यवस्था किस तरह शासन का अंत कर देती है। इसका मास्तिजी ने इस उपन्यास में युक्तियुक्त विवरण प्रस्तुत किया है। एक आदमी का कुकर्म जिस प्रकार जन समुदाय का संहार कर सकता है, इसका जीवंत चित्रण इस उपन्यास में है। इसी उपन्यास पर मास्ति वेंकटेश आयंगार को ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ।

कन्नड़ में कुछ उपन्यास लेखिकाएं भी बहुत मशहूर हैं। इनमें त्रिवेणी, एम० एस० पार्वती और अनुपमा निरंजन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आधुनिक उपन्यासकारों में एस० एल० भैरप्पा, लंकेश, चंद्रशेखर कंबार और दलित वर्ग के कुछ लेखक विशेष चर्चित हैं। इन दलित वर्ग के लेखकों में रामचंद्रन, देवनूर महादेव और श्रीमती गीता नागभूषण प्रमुख हैं।

मलयालम उपन्यास साहित्य ने भी स्वतंत्रता के बाद नए क्षितिज छुए हैं। आजादी के पूर्व प्रकाशित तकषि शिवशंकर पिल्ले, केशवदेव, बशीर और एस० के० पोट्टेक्काट्ट ने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह प्रकट किया कि जीवन की यथार्थ घटनाओं को कथा-निर्माण का आधार बनाया जा सकता है। इन उपन्यासकारों के अनुसार जीवन की सच्चाई के साथ प्राणवंत अभिव्यक्ति का अटूट रिश्ता है। तकषि शिवशंकर पिल्लै का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास आजादी के बाद ही प्रकाशित हुआ। उन्हें सन् 1956 में "चम्मीन" पर केरल पुरस्कार तथा 1964 में "एणिप्पिटकल" को केरल साहित्य अकादमी का पुरस्कार और सन 1982 में "कयर" पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ। वस्तुतः तकषि ने मलयालम कथा-साहित्य में कई प्रयोग किए। मोपासां की यर्थाथपरक शैली का अनुसरण करते हुए उन्होंने कई उपन्यास लिखे। दूसरी और तकषि के उपन्यासों में आंचलिकता का चित्रण भी मिलता है। मछुआरों और प्रदेश के कृषक जीवन का इतना सजीव चित्रण अन्यत्र दुर्लभ ही है। तकषि के समकालीन कथाकारों के कुछ प्रसिद्ध उपन्यास भी इस दौरान प्रकाशित हुए। केशव दास का "ओटयिल निन्नुम्", मुहम्मद बशीर का "विड्ढकलुटे स्वर्गम्" (मूर्खों का स्वर्ग) और कई उपन्यास स्वतंत्रता के बाद ही प्रकाशित हुए। तकषि, केशवदेव और बशीर आधुनिक मलयालम उपन्यास के तीन दृढ़ स्तंभ माने जाते हैं। इनकी कृतियों ने मलयालम कथा-साहित्य में एक नई प्रवृत्ति को जन्म दिया। इन बहुविश्रुत कथाकारों के अलावा आधुनिक मलयालम उपन्यासकारों में ई०एम० कोबूर, पद्मनाभ पिल्ले और एम०टी० वासुदेवन नायर के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

आज भारतीय उपन्यास साहित्य की अत्यंत लोकप्रिय विधा के रूप में प्रतिष्ठापित हो चुका है। बीसवीं सदी में उपन्यास ने आशातीत प्रगति की है। सभी भारतीय भाषाओं में विविध कथा प्रयोग हो रहे हैं और कई सुप्रतिष्ठित हस्ताक्षर नए-नए कथा प्रतिमान निर्मित करने में संलग्न हैं। हम यह निसंकोच कह सकते हैं कि समकालीन भारतीय उपन्यास साहित्य विश्व की समृद्ध भाषाओं के समकक्ष ही है और अभी उसमें आशातीत संभावनाएं हैं। ■

संस्कृत के नीति काव्य

—डा॰ किरन शुक्ल
—महेन्द्र सिंह

मनुष्य के हृदय में सदैव दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियां जन्म लेती हैं। एक सद्वृत्ति और दूसरी असद्वृत्ति, परन्तु बुद्धिमान और विवेकी पुरुष सदैव सद्वृत्ति को ही चुनता है। उसे धैर्यपूर्वक विचार करके मन में उत्पन्न हुई अदम्य और कुत्सित इच्छाओं का त्याग करना पड़ता है क्योंकि उसके साधन सीमित होते हैं और इच्छाएं अनन्त होती हैं। एक इच्छा पूरी होने के बाद दूसरी इच्छा पुनः जाग्रत हो जाती है—

इच्छति शतीसहस्त्रं सहस्त्री लक्षमीहते।
लक्षाधिपतथा राज्यं राज्यसथः स्वर्गमीहते।।

अर्थात् इच्छा का कहीं विराम नहीं है अतएव मनुष्य का यह कर्त्तव्य होता है कि वह अपने जीवन को एक निश्चित दिशा की ओर ले जाए क्योंकि अपने जीवन के मूल्यों के प्रति रुझान रखने वाला विवेकशील पुरुष ही सुख, समृद्धि और शान्तिमय जीवन व्यतीत करता है।

वेदों के रूप में आर्य मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने मानव का शाश्वत जीवन दर्शन प्रस्तुत किया है। ऋषियों ने अपने अनुभूतिपूर्ण अन्तःकरणों से बड़े कुतूहलपूर्वक देखा कि प्रत्येक प्रातःकाल सूर्य अपनी रजतरश्मियों के धरती का आंचल संवारता है। संध्या होती है, रात्रि होती है और नभ तारकित हो जाता है। समीर अपनी गति से ही बहता है। नदियां अपना मृदुजल सतत बहाती हैं। बस, उन्हें विश्वास हो गया कि इस दैनिक नियमितता में कुछ व्यवस्था है। प्रकृति की इस व्यवस्था को 'ऋत' की संज्ञा दी गई और यही 'नैतिक व्यवस्था' धीरे-धीरे ऋषियों के जीवन में सत्य बनकर उतरने लगी। ऋत प्रकृति का वह धर्म है जिसके द्वारा निबार्ध रूप से प्रकृति के सारे कार्य व्यापार चलते हैं। ऋतुओं का आगमन, सूर्योदय, दिन और रात्रि आदि सारे प्राकृतिक विधानों की क्रमबद्धता के मूल में त्रस्त है। प्रकृति जिस किसी प्रकार के अतिक्रमण से रिक्त है तथा नियमबद्ध है उसी प्रकर ऋषियों ने अपने आचरण में स्वलन या अनाचार न होने का प्रयास किया। जरा सी त्रुटि हो जाने पर वह देवों द्वारा दंडित होते थे। व्यक्ति के अर्न्तमन में सत्य को स्थान दिया गया तथा बाह्य धर्म को त्रस्त की संज्ञा दी गई।

नीति शब्द का प्रचलन

सर्वप्रथम पद्मसम्भव बह्मा ने त्रिवर्ग संस्थापन और लोगों और लोगों के उपकारसाधन के लिए नीतिशास्त्र का उद्भावन किया। कालिकापुराण में महर्षि और्व ने राजा सगर को नीति सम्बन्धी उपदेश दिया। अग्निपुराण में राम ने लक्ष्मण को नीतिविषयक उपदेश दिये। मनुस्मृति में भी नीति शब्द के प्राचीन प्रयोग मिलते हैं। अतः 500 ई॰पू॰ तक नीति शब्द का उपर्युक्त अर्थ में प्रयोग होने लगा था।

नीति शब्दार्थ

नीति शब्द संस्कृत की प्रापणार्थक 'णीस्' धातु के करणार्थे क्तिन् प्रत्यय संयुक्त करके बना है, जिसके अनुसार इस शब्द का अर्थ है जिसके द्वारा ले जाया जाए अथवा पहुंचाया जाए (नीयते अनया इति नीतिः)

नीति शब्द का सामान्य अर्थ

नीति शब्द की एक अन्य व्युत्पत्ति के अनुसार 'नीयन्तेग उन्नीयन्तेजर्था अत्रानया वा' समग्र कार्यकलाप ले जाने की क्रिया प्रयोजनमयी होने से कुछ और अधिक व्यापक हो जाती है, अतः इस प्रकार समग्र मानव कार्यकलाप का नियमन नीति के द्वारा होता है, जो अपनी व्यापकता में मानव-जीवन को बहुत दूर तक समेट सकता है। चूंकि सारे मानवीय कार्यकलाप चार पुरुषार्थों की दृष्टि से जीवन में प्रवृत्त किये जाते हैं। अतः नीति भी चार पुरुषार्थों से सम्बद्ध रुप से वर्णित है। 'नीति' शब्द का कोषगत अर्थ भी इसी व्यापकता का बोध कराता है जिसके अनुसार नीति में नेतृत्व, देखरेख, आदेश, व्यवस्था, आचरण, आचारविधि, कार्यप्रणाली, ओचित्य, मर्यादा, कूटनीति, व्यवहारकुशलता, बुद्धि योजना, राजनीति विज्ञान, राज्य मर्मज्ञता, राजीनतिक बुद्धि, पवित्रता, नैतिक आचरण, नैतिकता, नीतिदर्शन, नीतिविज्ञान, श्रम द्वारा प्राप्त विद्या, योग्यता, उर्पाजन, दान, भेंट, सम्बन्ध तथा समर्थन आदि समस्त कार्यकलाप आ जाते हैं।

परन्तु सम्प्रति नीति शब्द की स्थूल परिभाषा इस प्रकार मान्य है 'नीयते पुरुषार्थफलाय सर्व जगत् यया सा नीतिः' अर्थात् जो विद्या तरह-तरह की युक्तियों द्वारा इस सारे जगत् को प्रत्येक मानव को उसके प्रधानभूत उद्दृश्यों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की ओर ले चले उसका नाम है 'नीति'।

नीति परम्परागत एवं प्रर्वतमान अर्थ

नीति शब्द सामान्यतः नैयायिक व्यवस्था तथा प्रचलित विधान के लिए प्रयुक्त होता रहा है। अनुचित मार्ग से उचित मार्ग पर ले जाने की क्रिया ही परमार्थतः नीति है। वर्तमान समय में विभिन्न वर्गों के मत एवं दृष्टिकोण को भी नीति कहा जाने लगा है। इसके अतिरिक्त लोकमर्यादा के अनुसार व्यवहारपद्धति, राजविद्या, नीतिविद्या, आचार, धर्मभावना परदुःखनिवारण, कार्य करने की सुष्ठुप्रणाली अथवा उपायादि इस शब्द के प्रवर्त्तमान अर्थ की परिधि में आ जाते हैं।

नीति-पाश्चात्य दृष्टिकोण

बहुधा अंग्रेजी के 'Ethics' शब्द से संस्कृत के नीति शब्द का साम्य बताया गया है जो भ्रामक प्रतीत होता है। 'Ethics' शब्द ग्रीक भाषा 'Ethica' शब्द से बना है।

Ethica/Ethos, जिसका अर्थ रीति व्यवहार अथवा स्वभाव होता है। Ethics शब्द का प्रयोग Moral Philosophy के लिए हुआ है। जीवन का ध्येय क्या है? सुख की प्राप्ति या कल्याण की उपलब्धि? कर्त्तव्य किसे कहते हैं तथा वह कितने प्रकार का होता है? कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निर्णय किस आधार पर किया जाता है? इन प्रश्नों का समुचित विवेचन Ethics में किया जाता है। Ethics में कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निर्णय होता है तथापि वह सैद्धान्तिक होता है। उसमें व्यावहारिकता कम आ पाती है। यह Moral Philosophy अर्थात् एक 'दर्शन' तक ही समिति रह जाता है। जबकि नीति के अंतर्गत Guidance (प्रदर्शन) की प्रक्रिया प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर होती है।

नीति काव्य-परिभाषा

नीति से युक्त काव्य नीति काव्य कहलाता है। हिन्दी साहित्य-कोश में इसकी परिभाषा इस प्रकार दी गई है—"समाज को संतुलित एवं स्वस्थपथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की उचित

रीति से प्राप्ति कराने के लिए जिन विधिनिषेध मूलक सामाजिक, व्यावहारिक, आचारिक, धार्मिक तथा राजनीतिक आदि नियमों का विधान देश-काल और पात्र के संदर्भ में किया जाता है उसे नीति शब्द से अभिहित करते हैं तथा नीति के अंतर्गत आने वाली इस प्रकार की बातों से युक्त काव्य नीति-काव्य है।''

नीति काव्य का वर्गीकरण

नीति काव्य की भावभूति अत्यधिक विस्तृत है। नीति काव्य में धर्म, आचार (ईश्वर, दया, परोपकार, अहिंसा आदि), व्यवहार, (कुल, पड़ोसी, शत्रु, मित्र, स्त्री, पुत्र, माता-पिता, भाई, परिचिता-परिचित तथा बड़े छोटे आदि) राजनीति (राजा तथा उसका विभिन्न वर्गों के प्रति कर्त्तव्यादि) तथा अन्य अनेकानेक सामान्य विषयों (धन, स्वास्थ्य, यौवन, गुण-अवगुण, खेती, व्यापार, भाग्य, ऋण, मूर्खता तथा विद्या आदि) के संबंध में देश-काल और पात्र के संदर्भ में विधि निषेधयुक्त बातों पर प्रकाश डाला गया है।

संस्कृत साहित्य में नीति-साहित्य तो हमें सर्वत्र उपलब्ध होता है। वार्तालाप के प्रसंग में, उपदेश में, आहार-व्यवहार राज्यादि तथा सामान्य जन-जीवन में स्थान-स्थान पर एक न एक नैतिकोपदेश संबंधी वाक्य अवश्य मिल जाता है। अतः विवेचन सौकर्य के लिए नीति साहित्य को दो प्रकार से वर्गीकृत किया गया है:

(1) नीतिपरक ग्रंथ
(2) विशुद्ध नीतिकाव्य

नीतिपरक ग्रंथ वे हैं जो नीति काव्य नहीं हैं परन्तु नीति ग्रंथ के रूप में स्वीकृत किये जा सकते हैं। इनके दो वर्ग किये गए हैं—(क) मिश्रित अथवा गौण नीतिपरक ग्रंथ और (ख) नीतिपरक ग्रंथ (शास्त्रीय)। मिश्रित नीति से तात्पर्य यह है कि जिस स्थान पर काव्य के कथानक को अधिक प्रधानता दी जाए परन्तु नीति से युक्त काव्य गौण अथवा प्रासंगिक रूप में प्रयुक्त हों, जैसे महाभारत। जब कि नीति परक अथवा नीतिप्रधान ग्रंथ वे हैं जिसमें नीति से युक्त सिद्धन्तों का विधिवत् प्रतिपादन हुआ है अथवा जिनमें नीति, शास्त्र के रूप में उपनिबद्ध है जैसे शुक्रनीति, कामन्दकीय नीतिसार आदि।

विशुद्ध नीतिकाव्य वे हैं जो नीति के किसी न किसी पक्ष का स्पष्टतः प्रतिनिधित्व करते हैं तथा उनमें काव्यत्व भी होता है। संस्कृत साहित्य में इस प्रकार के नीति काव्य लगभग पांचवीं शताब्दी से उपलब्ध होते हैं। इन पर आगे क्रमशः विचार किया जाएगा।

नीतिपरक ग्रंथ

नीतिशास्त्र का सर्वप्रथम उद्भावन किस प्रकार से हुआ है, इसका उल्लेख महाभारत के शान्तिपर्व में युधिष्ठिर और भीष्म के वार्तालाप से स्पष्ट होता है—नीतिशास्त्र का अध्ययन करने से निग्रह और अनुग्रह प्रदर्शन पूर्वक लोक रक्षा करने की बुद्धि उत्पन्न होगी, इस शास्त्र के द्वारा जगत के सभी मनुष्य दण्डप्रभाव से पुरुषार्थ फल-लाभ में समर्थ होंगे ऐसा विनिश्चयपूर्वक सर्वप्रथम पद्मसम्भव ब्रह्मा ने त्रिवर्गसंस्थापन और लोगों के उपकार साधन के लिए सार स्वरूप इस नीतिशास्त्र का उपभावन किया है। मनुष्य का नीतिपरायण होना परमावश्यक है। युधिष्ठिर ने जब भीष्मदेव से नीतिशास्त्र का विषय पूछा तब उन्होंने कहा था क सत्ययुग में सृष्टि के कुछ दिनों बाद सभी मनुष्य पाप-पथ पर चलने लगे, यह देखकर देवताओं ने ब्रह्मा की शरण ली। भगवान पद्म संभव ब्रह्मा ने देवताओं को संबोधित करते हुए कहाः 'तुम डरो मत, मैं बहुत शीघ्र ही इसका उपाय कर देता हूं।' यह कह कर उन्होंने **अचिरात् लक्षाध्याययुक्त नीतिशास्त्र** अथवा आचार-संहिता की रचना की। इस प्रकार लक्षाध्याययुक्त नीतिशास्त्र आचार संहिता के तैयार हो जाने पर सर्वप्रथम महादेव ने उसे ग्रहण किया। प्रजावर्ग की आयु को देखकर उन्होंने इस नीतिशास्त्र को संक्षेप में बताया। यह शास्त्र दश हजार अध्यायों में विभक्त किया गया और 'वैशालाक्ष्य' नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाद में भगवान इन्द्र ने उस शास्त्र को पांच हजार अध्याय में बना कर उसका नाम 'बाहुदत्तक' रखा। अनन्तर बृहस्पति ने बाहुदत्तक ग्रंथ को संक्षिप्त करके तीन हजार अध्यायों का एक नीतिशास्त्र बनाया और उसका 'शुक्रनीति' नाम रखा। यही **शुक्रनीति** अल्पायु मानवों के पढ़ने योग्य है। इसको पढ़ने से हिताहित का ज्ञान होता है।

महाभारत में आगत नीतिपरम्परा में कणिक द्वारा प्रयुक्त वाक्य भी अतिशय प्रेरणाप्रद हैं। **कणिक** धृतराष्ट्र के मंत्री का नाम है। जब धृतराष्ट्र ने अपने मंत्री कणिक से परामर्श किया तो उसने नीतिसम्बन्धी अनेक सिद्धन्तों का प्रतिपादन करने के पश्चात श्रृगाल, सिंह, चूहे, भेड़िये और नेवले की कथा का वर्णन किया और अंत में यह परामर्श दिया कि पाण्डवों का विनाश कर देना चाहिए।

सौवीरराज शत्रुञ्जय ने ऋषि भारद्वाज कणिक से धनार्जन इत्यादि के सम्बन्ध में प्रश्न किया और कणिक ने उन्हें उपदेश देते हुए बताया कि राजा को सर्वथा दण्ड देने के लिए उद्यत होना चाहिए और सदैव ही पुरुषार्थ प्रकट करना चाहिए इत्यादि। कणिक के उपदेशों को प्राप्त करके राजा शत्रुञ्जय ने समृद्धि प्राप्त की।

बृहस्पति-नीति के अनेक संदर्भ महाभारत में बिखरे पड़े हैं। शान्तिपर्व के 84 वें अध्याय में इन्द्र और बृहस्पति के सम्वाद रूप में बृहस्पतिनीति का संक्षिप्त विवरण उपलब्ध होता है, इस प्रसंग से देवगुरु बृहस्पति ने इन्द्र को सान्त्वना से युक्त मृदुभाषण का महत्व समझाया है। बृहस्पति की नीतियां कालान्तर में संस्कृत कवियों द्वारा यथाकथंचित ग्रहण की गई। उदाहरणार्थ सान्त्वना वचनयुक्त दान की चर्चा महाकवि भारवि ने 'किरातार्जुनीयम्' के प्रथम सर्ग में की है।

धृतराष्ट्र के शोकविमोचनार्थ विदुर ने उन्हें उपदेश दिया। उन्हें इस देह की अनित्यता बताई। शोक से कुछ (सुख आदि) नहीं मिलता, अपितु शरीर में जलन पैदा होती है तथा शत्रु प्रसन्न होते हैं। इसलिए शोक में चित न लगाओ! हे राजन! जो मनुष्य दूसरे के साथ जैसा व्यवहार करता है, दूसरे मनुष्य को भी उसके साथ वैसा ही बर्ताव करना चाहिए, यही धर्म है। कपटी के साथ कपट का व्यवहार करना चाहिए तथा सज्जन के साथ सज्जनता का व्यवहार करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त शुक्रनीति, नीतिवाक्यामृतम्, नीतिसार (घटकपर), नीतिमंजरी (द्याद्विवेद लक्ष्मीधर), इत्यादि अन्य प्रसिद्ध स्फुट नीतिपरक ग्रंथ हैं।

विशुद्ध नीति काव्य

संस्कृत के विशुद्ध नीतिकाव्य की परंपरा में **भर्तृहरि के शतकत्रय—नीतिशतक, श्रृंगारशतक और वैराग्यशतक** का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके नीतिवाक्यों में अनुभूत सत्य उजागर होता है। अपनी रानी के प्रेम में धोखा खाने के उपरांत भर्तृहरि ने नीतिशतक की रचना की थी। वे कहते हैं कि जो विवेकशून्य होता है उसका सैंकड़ों प्रकार से अधःपतन होता है। मनुष्य का आलस्य से बढ़कर कोई शत्रु नहीं

है और उद्योग से बढ़ कर कोई मित्र नहीं है। उद्योग को करके मनुष्य कष्ट नहीं पाता है। कान की शोभा गुरु के सुने हुए वेद व शास्त्रों से है, कुण्डल से नहीं। हाथ की शोभा दान से है, कंकण से नहीं। दयालुओं के शरीर की शोभा परोपकार से है, चन्दन के लगाने से नहीं। विद्या ही मनुष्य का श्रेष्ठरूप है, विद्या ही गुप्त सुरक्षित धन है, विद्या ही भोग, कीर्ति और सुख देने वाली है, अतः विद्या ही सब धनों में श्रेष्ठ है। परदेश में विद्या ही पूजी जाती है, धन नहीं अतः जो विद्या से रहित है वह साक्षात पशु है।

कौटिल्य-गोत्रीय ऋषि चणक के पुत्र आदर्श ब्राह्मण विष्णुगुप्त ने ढाई सहस्र वर्ष पूर्व भारत के राजाओं को राजनीति सिखाने के लिए अर्थशास्त्र, लघु चाणक्य, वृद्धचाणक्यनीति, चाणक्य राजनीतिशास्त्र आदि ग्रन्थों के साथ व्याख्यात्यमान चाणक्यसूत्रों का भी प्रणयन किया। चाणक्यनीति से एक प्रसिद्ध श्लोक उद्धृत है, जिसमें वे कहते हैं कि कुटुम्ब के निमित एक को छोड़ देना चाहिए। गांव के निमित कुटुम्ब को होड़ देना चाहिए, देश के निमित गांव का परित्याग और अपने लिए पृथ्वी का अर्थात् सब का परित्याग करना उचित हैं।

नीति काव्य की परंपरा में आने वाले अन्य प्रमुख ग्रंथ नीतिद्विषष्तिका (सुन्दर-पाण्ड्य) शिष्यलेखाधर्मकाव्य (चन्द्र), भल्लटशतक, शान्तिशतक (शिल्हण), सिन्दूर प्रकार—

श्रृंगारवैराग्य तरंगिणी (सोमप्रभ), नीतिरत्न (वररूचि), नीति प्रदीप (वेतालभट्ट), मुग्धोपदेश (जल्दण), कलाविलास (क्षेमेन्द्र), शतकात्रय (धनदराज), वैराग्यशतक (अप्पय दीक्षित), रसिकरंजनम् (रामचन्द्र), उपदेश शतक (गुमान), समारंजन शतक (नीलकंठ दीक्षित), वैराग्यशतकम् (गोस्वामी जनार्दन भट्ट), दृष्टान्तकलिकाशतकम् (कुसुमदेव), सुभाषितनीवी (वेदान्तदेशिक), इत्यादि हैं।

श्री रहीम जगन्नीतिशतकम् श्री जगन्नाथविवृ शास्त्री द्वारा किया गया काव्य का एक नवीन प्रयोग है। इन्होंने हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानखाना के दोहों को संस्कृत के नीतिपूर्ण श्लोकों का रूप देने का प्रयास किया है। उदाहरणार्थ रहीम की एक प्रसिद्ध उक्ति

रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिए डारि।
जहां काम आवे सुई, कहां करे तरवारि।।

का रूपांतरण वे इस प्रकार करते हैं—

महानं पुरुष प्राप्य तुच्छं नैव त्यजेनरम्।
सूची करोति यत्कार्य किं तत् खड्गः करिष्यति।।

अब धर्मनीति, अर्थनीति, कामनीति, मोक्षनीति और प्रकीर्णनीति पर विस्तारपूर्वक चर्चा की जाएगी।

धर्मनीति

धर्म स्वयं में एक मान्यता है, विश्वास है, जो मूलतः श्रद्धा और आस्था पर प्रतिष्ठित है किन्तु जब वही धर्म नीति की सीमा में आ जाता है तब एकमात्र अभ्युदाय का साधानं बन जाता है और उसका आधार आदर्श न होकर बहुत कुछ यथार्थ जीवन होता है। नीति धर्म के सम्बन्ध में यथार्थ भूमि पर प्रतिष्ठित होती है और तब धर्म जीवन के साधन के रूप में स्वीकार्य होता है न कि साध्य रूप में। अतएव महर्षि कणाद की धर्म के संदर्भ में 'जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो वह धर्म है। यह उक्ति सर्वथा विचारणीय है। मनुष्य को अपने अभ्युदय की सदैव इच्छा रखनी चाहिए तथा उसके लिए सदैव प्रतत्नशील तो रहना चाहिए परन्तु निःश्रेयस की सिद्धि में वह अपने वर्तमान जीवन में सदैव उस अदृष्ट की कामना करता रहे यह कहां तक उपयुक्त है? व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह आजीनव अपने धर्म का नीतिपूर्वक निर्वाह करे। धर्म स्वयं में एक कृत्य है। अतः जब दृष्ट से फललाभ है तो अदृष्ट की कल्पना नहीं करना चाहिए। इसकी पुष्टि एक अन्य उदाहरण से भी हो जाती है। धर्म प्रत्यक्षतः क्रियान्वित होता है क्योंकि शरीर रक्षा ही धर्म का प्रत्यक्ष कार्य है—धर्मो रक्षति रक्षितः।

धर्म का कोशगत अर्थ

धर्म शब्द का कोशग्रन्थों में बहुत व्यापक और महनीय अर्थ मिलता है, 'धर्म वह है जो स्थापित हो चुका है, जो संभालता है, धर्म, रीति-रिवाज, कर्त्तव्य, व्यवस्था, कानून, न्याय, गुण, स्वभाव, विशेष गुण इत्यादि अर्थों में भी धर्म शब्द का प्रयोग होता है। ऋग्वेद में धर्म का अर्थ धारण करना निर्दिष्ट किया गया है। यास्क ने अपने निरुक्त में धर्म के धारणकर्ता को तत्वरूप हो जाने का उल्लेख किया है। धर्म ज्ञानयुक्त कर्म है तथा धर्म का अनुरोध करने वाला देव हो जाता है। इस प्रकार धर्म की भावना में देत्व का अनुदर्शन ही तद्विपयक नीति का परिचायक समझ पड़ता है।

धर्म-आचरण

विभिन्न ग्रंथों में धर्म के दो स्वरूप हैं। प्रथम है प्रवृत्तिपरक धर्म और द्वितीय निवृत्तिपरक धर्म। प्रवृत्तिपरक धर्म से अभिप्राय है—वे कार्यपद्धतियां जो संसार में विभिन्न प्रकार के अभ्युक्तर्पो के द्वारा, यथोचिताचरण द्वारा जगत के कार्यों में प्रवृत्त करें तथा निवृत्तिपरक से तात्पर्य है, धर्म जो विभिन्न यक्षादि द्वारा सांसारिक बन्धन से निवृत्ति का मार्ग निर्दिष्ट करे। परन्तु उपर्युक्त दोनों प्रकार के धर्मों का एक ही मूल है—शिष्टापूर्वक आचरण या सदाचार। इस संबंध में मनु ने कहा है कि आर्यावर्त प्रदेश में चारों वर्ण, चारो आश्रमों एवं वर्णाश्रम से रहित जाति वाले लोगों के जो निजपरम्परागत प्राचीन सुसंस्कृत आचार या कर्त्तव्य है, उन्हीं को सदाचार की संज्ञा दी गई है।

धर्म में सदाचरण

सदाचरण से ही धर्म की उत्पति होती है। धर्म की स्थिति नेष्टप्राय हो जाती है यदि धर्म के मूल में सदाचरण न विद्यमान हो। कौटिल्यार्थशास्त्र में इस तथ्य का प्रतिपादन किया गया है कि राजा के द्वारा प्रतिपादित सम्यक व्यवहार दर्शन सदैव सदाचार की रक्षा के लिए प्रवृत्त होता है। सदाचार ही कुल का निर्देश करता है—आचारः कुलमाख्याति। ब्राह्मण यदि दुराचरण से युक्त है तो वह अकुलीन हो जाता है। सदाचारी जन का सभी आदर करते हैं तथा दुराचारी व्यक्ति की सभी क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं। भारतीय मनीषियों ने न केवल शारीरिक आचार को ही सदाचरण बताया है अपितु मन में सद्विचारों को धारण करने पर भी सदाचार की संज्ञा दी है। यदि कोई मन से भी किसी निधे बात को सोच ले तो वह भी महन पाप होता है। अतः किसी के प्रति मन से भी दुर्भावना रखना दुराचरण का प्रतीक है।

धर्मोपार्जन के पात्र

सदाचार के पात्र वे ही हो सकते हैं जो समग्र प्राणियों के प्रति समता का भाव रखते हैं। जो व्यक्ति मन से किसी का अहित चिंतन नहीं करते वे स्वर्ग को प्राप्त करते हैं।

धर्म-संचय

मनुष्य को अपने जीवन को नीतियुक्त बनाने के लिए निरन्तर धर्मसंचय करते रहना चाहिए। धर्म की सहायता से दुस्तर अंधकार को पार करता है। परमाणुओं को एकत्र करने से मेरु पर्वत बन जाता है। पुण्यों की परम्परा कोई दिव्य वस्तु नहीं है, धर्म का नित्यप्रति संग्रह करने से ही इस परम्परा का निर्वाह किया जा सकता है।

आत्मज्ञान

धर्म से युक्त मनुष्य के लिए आत्मप्रबुद्ध होना परमावश्यक है। जो व्यक्ति अपनी आत्मा की ध्वनि का वर्जन करता है वह नितान्त क्लेशों का पात्र होता है। आत्मज्ञान ही सुख-समृद्धि का मूलाधार है। आत्मज्ञान के द्वारा ही मनुष्य के त्रिविध-पाप (कायिक, वाचिक और मानसिक) निवृत्ति को प्राप्त होते हैं। आत्मज्ञान को न प्राप्त करता हुआ मनुष्य जींव और परमात्मा में ऐक्य नहीं जानता है तथा वह राग-द्वेष, माया-मोह, अज्ञान, कालुष्य, विसंगति इत्यादि को प्राप्त होकर नाना दुखों को सहता हुआ नष्ट हो जाता है।

इन्द्रिय-निग्रह

यदि मनुष्य धर्मच्युत होता है तो यह सब इन्द्रियों के असंयम से ही होता है। धर्माचरण में इन्द्रियां सर्वथा बाधक होती हैं। इन्द्रियां ही व्यक्ति को धर्म से अव्यापृत करती हैं। इन्द्रियों के वश में चाहे कितना भी विद्वान मनुष्य हो, धर्मच्युत हो जाता है, नष्ट हो जाता है।

प्रमाद-निराकरण

धर्माचरण से ही यथार्थ लाभ होता है उसके ज्ञान मात्र से नहीं। आचार्य सोमदेव सूरी ने इसका प्रतिपादन किया है। धर्म से पाप का निराकरण हो जाता है। जो मनुष्य धर्म का स्वतः आचरण नहीं करता उसकी सभी इच्छाएं विफल हो जाती हैं।

धर्म-लक्षण

धर्म को शास्त्रकार ने दस विशिष्ट गुणों से युक्त बताया है। ये दस गुण धर्म से युक्त व्यक्ति के लक्षण को स्पष्ट करते हैं। ये दस स्वयं धर्म कहे जा सकते हैं। ये समवेत होकर भी धर्म हैं और इनको पृथक-पृथक धर्म कहा जा सकता है क्योंकि हर एक में धर्म का लक्षण घटित होता है। धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध इस क्रम से मनु ने धर्म के लक्षण निर्दिष्ट किए हैं।

धृति

धृति का अभिप्राय है धैर्य। मनुष्य को अपने कर्त्तव्य-पथ पर स्थिर रहते हुए धर्म का निर्वाह करना चाहिए। भर्तृहरिसुभाषित संग्रह में उल्लेख है कि नीति निपुण लोग निंदा करें अथवा स्तुति करें, लक्ष्मी यथेच्छ रूप से आवें अथवा चली जाएं, आज ही मरण हो जाए अथवा युगों बाद, परन्तु धैर्यशाली व्यक्ति इन परिस्थितियों के होने पर भी न्याय के पथ से कभी विचलित नहीं होते।

क्षमा

क्षमा का अभिप्राय है दूसरों की त्रुटियों पर ध्यान न देकर उन पर उपकार करना। चाणक्यनीतिशतकम् में 'मनुष्य का आभूषण रूप है, रूप का आभूषण गुण है, गुण का आभूषण ज्ञान है और ज्ञान का आभूषण क्षमा है' कहा गया है।

दम

दम का अर्थ है दमन करना अर्थात् मन को संयमित करना।

अस्तेय

अस्तेय से अभिप्राय चोरी न करना है।

शौच

शौच का अर्थ है शुद्धता। शौच अर्थात् पवित्रता दो प्रकार से होती है, आभ्यन्तर तथा बाह्य। मन और अन्तःकरण की पवित्रता सद्भानाओं से, दया से, परोपकार से तथा तितिक्षादि गुणों से होती है तथा बहिःशुद्ध परिमार्जनादि से होती है।

इन्द्रिय-निग्रह

कुशल सारथी जिस प्रकार रथ में जुड़े हुए घोड़ों का नियमन करता है उसी प्रकार विद्वान मनुष्य को मन के द्वारा अपनी इन्द्रियों का संयम करना चाहिए। जो मनुष्य सुनकर, छूकर, देखकर, खाकर, सूंघकर, न प्रसन्न होता है, न दुःख करता है वही जितेन्द्रिय कहा जाता है।

धी

शास्त्रोक्त ज्ञान को तथा कर्त्तव्याकर्त्तव्य को निर्धारित करने वाली विवेकमति को धी. की संज्ञा दी गई है।

विद्या

विद्या के द्वारा ही मनुष्य को आत्मज्ञान होता है। बिना आत्मशुद्धि के धर्माचरण करना संभव नहीं है। आमज्ञान धर्म की प्रमुख आधारशिला है।

सत्य

साक्षि से धर्म पवित्र होता है। सत्य से धर्म की अभिवृद्धि होती है।

अक्रोध

क्रोध से रहित होना अक्रोध की स्थिति का परिचायक है। क्रोध में मनुष्य महान अनर्थ कर जाता है। अतः क्रोध मनुष्यों का महान शत्रु है।

अर्थनीति

लोक में अर्थ शब्द का सामान्यार्थ प्रयोजन के रूप में है। शब्द जिसके लिए प्रयुक्त होता है वह उस शब्द का अर्थ कहलाता है। इसीलिए संसार की सारी वस्तुएं पदार्थ कही जाती हैं क्योंकि वे किसी न किसी पद का अर्थ-रूप पदार्थ ही है। भौतिक अभ्युन्नति के लिए अर्थ ही द्वितीय मुख्य पुरूषार्थ है परन्तु वह अर्थ सर्वथा त्याज्य है जिसमें धर्म का स्थान नहीं होता। अर्थ स्वयं में एक साधनमात्र है।

मनुष्य नितान्त धर्म का पालन करता हुआ ही जीवन नहीं व्यतीत कर सकता, उसे अपने भौतिक अभ्युन्नयन के लिए विभिन्न प्रकार के विलास, आमोद-प्रमोद, धन-सम्पत्ति की भी आवश्यकता होती है। ये जीवन के एक महत्वपूर्ण घटक हैं। परन्तु इन सबका विधिवत विनियोग किस प्रकार हो इस प्रकार के प्रसंग अर्थनीति के अंतर्गत आते हैं। व्यक्ति चूंकि समाज में रहता है, अतः उसे पूरे समाज से सामंजस्य करना पड़ता है। इस प्रकार की व्यवहार-पद्धति को भी नीति कहेंगे। राजा समाज को नियंत्रित एवं संचालित करता है तथा राज्य की व्यवस्था का लेखा रखता है। अतः राजा और राज्य से सम्बन्धित सभी प्रसंगों का अध्याहार अर्थनीति के अंतर्गत हो जाता है।

अर्थ-जीविका

मनुष्यों की जीविका को अर्थ कहते हैं और उससे प्राप्त होने वाले साधन को भी अर्थ कहते हैं। यहां साध्य और साधन एक ही हैं। अर्थ के अंतर्गत केवल धन का ही समावेश नहीं है अपितु ऐसे साधन जो मनुष्य की कामनापूर्ति में सहायक होते हैं तथा जिनके प्राप्त करने से समाज पर ऐहिक सत्ता प्रस्थापित होती है, अर्थ के अंतर्गत आते हैं। धीरे-धीरे अर्थ धन के संदर्भ में प्रयुक्त होने लगा।

अर्थ-भूमि

कौटिल्य ने वस्तुओं से अधिक पृथ्वी को मान्यता इसलिए दी है क्योंकि पृथ्वी से ही अन्नादि की उत्पत्ति होती है और पृथ्वी ही सर्वाधिक साधनों की प्रसूत्री है और सब गौण हैं, पृथ्वी मुख्य है।

निर्धन मनुष्य चाहे कितना भी गुणवान क्यों न हो, उसके परिवार के सदस्य उसका आदर नहीं करते। (शुक्रनीति)

अर्थार्जन

हितोपदेश में कहा गया है कि दरिद्रता से मनुष्य को लज्जा आती है। लज्जा से बल क्षीण होता है। निर्बल व्यक्ति का सभी लोक तिरस्कार करते हैं। अपकार होने पर शोक प्राप्त हो जाता है। शोकाकुल मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, बुद्धि भ्रष्ट हो जाने पर मनुष्य का सर्वनाश हो जाता है। इसलिए निर्धनता समस्त आपत्तियों की जननी है।

चतुर्वर्ण के स्वधर्म

राजा का प्रमुख कर्त्तव्य यही है कि वह समस्त प्रजाओं के चारों वर्णों को अपने धर्म में निरत रखे अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि चारों वर्ण अपने-अपने धर्म में रत होकर राज्य के उत्कर्ष के विधायक हों। राजा अपनी प्रजा को स्वधर्म में स्थित रख कर इहलोक तथा परलोक का सुख प्राप्त कर सकता है। कौटिल्य वानप्रस्थाश्रम का निर्वाह करने के अनन्तर ही सन्यासाश्रम का विधान करते हैं। परन्तु मनु एक स्थल पर कहते हैं कि यदि ब्राह्मण चाहे तो जीवन भर ब्रह्मचर्याश्रम में रह सकता है तथा इसके लिए 'नैष्ठिक' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त समाज में परस्पर सहयोग की भावना का विद्यमान होना आवश्यक है। ब्राह्मण अपना कर्त्तव्य ठीक से करे अन्यथा वह दण्ड का भागी होता था। मात्र इतना ही नहीं यदि राजा भी स्वधर्मच्युत होता है, तो वह दण्ड्य है।

राज्य के सप्तांग

राजा, मंत्री, मित्र, कोश, राष्ट्र, दुर्ग, सेना ये राज्य के सात प्रमुख अंग कहलाते हैं। जिस प्रकार शरीर में अवयवों का महत्व होता है उसी प्रकार राज्य में इन सप्तांगों का महत्व है। (शुक्रनीति)

राजा

अर्थ पुरूषार्थ में राजनीति सम्बन्धी काव्य में राजा की सर्वोपरि महिमा गाई गई है। उसके प्रति देवत्व की भावना तथा हर प्रकार के सम्मान एवं आदर की दृष्टि संस्तुत की गई है क्योंकि प्राचीन भारतीय राजनीति में राजसत्ता प्रमुख रही है। गणतंत्र व्यवस्था थी किन्तु विरल, इसलिए नीतिकाव्य या राजनीति-काव्य प्राय: राजस्तुति काव्य रूप हो गए हैं। राजा को प्रकृति अर्थात् प्रजारंजन करने वाला कहा गया है। अतः आवश्यक है कि राजा की समग्र कार्य-पद्धतियां, आचार-विचार, योजनाएं इस प्रकार की हों जिससे प्रजा का सुसंचालन हो सके। कुत्सित राजा के राज्य में अराजकता का प्रादुर्भाव हो जाता है और मात्स्य-न्याय की स्थिति विद्यमान हो जाती है।

उपाय

राजा राज्य तथा समाज को 4 प्रकार की नीतियों द्वारा संचालित करता है। ये साम, दान, भेद और दण्ड हैं।

दण्ड

राजा की शक्ति दण्ड पर निर्भर करती है। आचार्य कौटिल्य दण्ड की पुष्टि करते हैं परन्तु किसी को अनुचित दण्ड देने का सर्वथा निषेध करते हैं। कौटिल्य की दृष्टि में राजा भी दण्ड का भागी होता है चाहे वह अर्थ दण्ड ही क्यों न हो।

राजा के सहायक

राजा यदि राज्य का विधिवत संचालन करने में समर्थ है तो इसका मूल कारण उसके सहायकगण ही हैं। अच्छे सहायकों द्वारा राजा तथा उसका राज्य उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त करते हैं और कुत्सित सहायकों द्वारा अपने धर्म और राज्य से च्युत हो जाता है। राजा के राज्य को चलाने के प्रधान कारण अर्थात प्रकृति 10 हैं— (1) पुरोहित, (2) प्रतिनिधि, (करने योग्य और न करने योग्य कार्यों को जानने वाला), (3) प्रधान (निरीक्षण करने वाला), (4) सचिव (सैन्य-संचालन को जानने वाला), (5) मंत्री (नीतिशास्त्र को जानने वाला और तदनुसार कार्य करने में कुशल), (6) प्राड्विवाक् (लोक व्यवहार तथा शास्त्रोक्त व्यवहार को जानने वाला), (7) पंडित (धर्म के तत्व को जानने वाला), (8) सुमंत्रक (आय और व्यय के कार्यों को जानने वाला), (9) अमात्य (देश और लेख के विषय को जानने वाला) तथा, (10) दूत।

मंत्री

मंत्री का कर्त्तव्य यह है कि कब किन् विषयों में किस प्रकार से संधि, दान, भेद और विग्रह करना चाहिए और उससे क्या फल होगा तथा वह अधिक मध्यम या अल्प होगा, इन सबका विचार कर राजा से निवेदन करे।

मित्र

मनुस्मृति में उल्लेख है कि राजा प्रगतिशील मित्र को प्राप्त करके स्वयं भी उन्नति प्राप्त करता है। धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सन्तुष्ट अमात्य आदि प्रकृति वाला, अनुरक्त, स्थिर कार्यारम्भ करने वाला छोटा भी मित्र श्रेष्ठ होता है।

कोष

कोष ही राष्ट्ररूपी वृक्ष का मूल है। अर्थविहीन राष्ट्र पंखविहीन पक्षी के समान अपना अभ्युत्थान नहीं कर पाता है। राष्ट्र के उन्नायकों को अर्थप्राप्ति, उसकी सुरक्षा और अधिकाधिक अभिवृद्धि के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। परन्तु मनु ने कोष से अधिक मंत्र को स्थान दिया है।

राष्ट्र

राज्य के सम्बन्ध में नीतिवाक्यामृतम् में कहा गया है कि वह धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि करने वाला है। राजा के अधीन वर्तमान चल और अचल सम्पत्ति राष्ट्र होती है। राष्ट्र में ग्राम पल्ली और कुम्भ की व्यवस्था के लिए विभिन्न कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। शुक्रनति में नगर व्यवस्था का विधिवत् उल्लेख किया गया है।

दुर्ग

राजा अन्न की सामग्रियों, अन्न, शूरवीर सैनिक, अस्त्र-शस्त्र एवं कोश से परिपूर्ण दुर्गों को सुसज्जित रखे और ऐसे ही दुर्गों में रहे। इनका मुख्य प्रयोजन राजा द्वारा आत्मरक्षा और शत्रु का उत्पीड़न होता है। युद्ध की सहायक सामग्रियों से युक्त दुर्ग सर्वश्रेष्ठ होता है।

सेना

सेना की सबलता के लिए शास्त्रकारों ने कई युक्तियां बताई हैं। उनमें से प्रमुख 6 हैं— संधि (बलवान शत्रु को मित्र बनाने की क्रिया), विग्रह (शत्रु को पीड़ित या अधीन बनाने की क्रिया), यान (शत्रु के नाशार्थ चढाई करना), आसन (आत्मरक्षार्थ और शत्रु के नाशार्थ एक स्थान पर पड़े रहना), आश्रय (शत्रु से रक्षार्थ राजा का आश्रय लेना) और द्वैधीभाव (गुल्म के रूप में सेना को विभाजित रखना।)

अर्थनीतिपरक कतिपय ग्रंथ

अर्थनीति से सम्बद्ध कतिपय काव्यों का प्रणयन राजाओं को शिक्षा देने के लिए किया गया है। इस दृष्टि से चण्डेश्वर विरचित राजनीति रत्नाकर, वैशम्पायन की नीति प्रकाशिका, कामन्दक का कामन्दकीय नीतिसार, विशाखदत का मुद्राराक्षस इत्यादि उल्लेखनीय ग्रंथ हैं। शुक्रनीति में भी सामान्य अर्थोपयोग की कुछ हृदयस्पर्शी नीतियां मिलती हैं। उदाहरणार्थ एक उक्ति लेते हैं जिसमें कहा गया है कि मैं सबसे अधिक श्रेष्ठ या अधिक ज्ञान से युक्त हूं और धर्म का तत्व यही है 'ऐसा बुद्धिमान मनुष्य को नहीं समझना चाहिए'। 'तिमि' नाम की एक बड़ी मछली समुद्र में होती है उसको निगलने वाली 'तिमिङ्गल' नाम की दूसरी मछली होती है और उसको निगलने वाली और एक मछली होती है उसे 'मिमिङ्गिलगिल' कहते हैं, उसको निगलने वाली 'राघव' मछली होती है एवं इसको भी निगलने वाली सबसे बड़ी मछली होती है। ऐसा समझकर सदा इसी भावना से कार्य करते रहना चाहिए अर्थात् अपने को सबसे बड़ा नहीं समझना चाहिए।

कामनीति

काम-अभिप्राय

'काम्यते इति कामाः' अर्थात् विषयों तथा इन्द्रियों के संपर्क से उत्पन्न होने वाला मानसिक आनंद ही मुख्यतया काम है। बाधारहित तन्मयता के साथ जिससे समस्त इन्द्रियों, स्पर्शन आदि को परितृप्ति और प्राति होती है उसे काम कहते हैं।

काम शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है। इच्छा, प्रवृत्ति, आसक्ति, मदनदेव, दुर्भाव, इन्द्रियों का उपभोग, सुखानुभूति, विविध मनोरंजक कलाएं आदि शब्दों के मूल में कामना शब्द निहित है। अतः उपर्युक्त सभी शब्द काम के अंतर्गत आते हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियां कही गई हैं चक्षु, जिह्वा, नासिका, कर्ण और त्वचा और इनके विषय क्रमशः रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्श तथा इनसे प्राप्त होने वाले मानसिक आनंद को काम कहते हैं, इसके अतिरिक्त इनके जो साधन हैं उन्हें भी काम कहते हैं। इनके अंतर्गत पुत्र, स्त्री, धनधान्य, गृह, चेष्टाएं, आहार, विहार, पेय, अलंकार आदि अभिलषित वस्तुओं का समावेश किया जाता है।

'कामितं कामः' के अनुसार काम का अर्थमन में उत्पन्न हुई दृढ़ इच्छा है, इसे वासना और कामना भी कह सकते हैं।

काम-प्रवृत्ति

काम की ओर मनुष्य की स्वतः प्रवृत्ति होती है। अतः हम ऐसा कहीं भी विधान नहीं पाते हैं कि काम को प्रवृत्त किया जाए क्योंकि यह तो स्वाभाविक वृत्ति है। काम को उच्छृंखल होने से रोका जाए ऐसा सर्वत्र मिलता है। हिन्दू विधि का पवित्र प्रतीक विवाह संस्कार इसी काम को नैतिकता में बांधता है।

काम का समन्वय

ऋषि गण, तपस्वीजन जो तप करते हैं, उसमें भी उनकी कामना निहित रहती है। जिसमें काम नहीं है व न तो धर्म करने की इच्छा करता है न अर्थ की। इस जगत् का आधार काम ही है। मनुस्मृतिकार भी यही स्वीकार करते हैं कि इस संसार में इच्छा के बिना किसी मनुष्य का कोई काम नहीं देखा गया है। मनुष्य जो कुछ भी करता है वह सब इच्छा की चेष्टा है।

काम-पुरुषार्थ

मन, बुद्धि और आत्मा का चरम उत्कर्ष धर्म के अविरुद्ध काम का सेवन करने से होता है। जीवन पद्धति का विधिवत संचालन करने के लिए समान भाव से धर्म, अर्थ और काम का सेवन करना चाहिए।

काम के प्रकार

काम दो प्रकार का होता है—बाह्य और आभ्यन्तर। स्त्री, पुत्र, गृह, धनधान्य, क्षेत्र, भोजनादि जो सुख के साधन हैं ये बाह्य काम कहलाते हैं तथा बाह्य वस्तुओं से दर्शनादि से मन की जो उत्कट लालसा होती है, उसे आभ्यन्तर काम कहते हैं।

स्पर्श

रूप, गंध, शब्द और स्पर्श द्वारा प्राप्त होने वाला सुख ही काम है और ये क्रमशः दृष्टि, जिह्वा, नासिका, कर्ण और स्पर्शेन्द्रिय द्वारा प्राप्त होता है। परन्तु स्पर्शसुख ही सबसे श्रेष्ठ सुख है। स्पर्शसुख द्वारा ही पूर्णकाम का रसास्वादन किया जा सकता है। कोई भी शब्द तब तक मधुर रस का आस्वादन नहीं करा सकता जब तक कि वह हृदय को न स्पर्श करे। इसी प्रकार कोई सुन्दर दृश्य तब तक चरम रस नहीं प्रदान कर सकता जब तक कि वह नेत्रों को न स्पर्श कर ले। अतः सब प्रकार से स्पर्शेन्द्रिय का ही प्राधान्य होता है और इस स्पर्श में इतना अधिक बल होता है कि सुन्दरी स्त्रियों का स्पर्श सद्सद्विचार करने वाले ऋषिमुनियों के मन को भी हरण कर लेता है।

संतोष

कामनाओं की पूर्ति में जीवन का कोई भी पक्ष हो, संतोषपूर्वक व्यवहार करना परमावश्यक है। संतोष के रहने से साधारण परिस्थिति में भी थोड़े वैभव में भी मनुष्य स्वल्प सुख-सामग्री से ही काम के सुख का पूर्ण आनंद प्राप्त कर सकता है।

स्त्रियोचितकाम

स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा आठ गुना अधिक काम कहा गया है। नीतिकार ने तो यहां तक कहा है कि ब्रह्मा भी उस कामवासना को रोकने में असमर्थ हैं जिसका श्रीगणेश प्रेम से उन्माद स्त्रियां कर देती हैं। परन्तु मनुष्य को संयत बुद्धि होकर सदैव व्यवहार करना चाहिए। मनुस्मृति में यह भी कहा गया है कि स्त्रियां जिस प्रकार के पुरुषों का संसर्ग करती हैं वैसी

ही संतान उत्पन्न करती हैं। अपनी संतान की शुद्धि के लिए स्त्री की विशेषकर रक्षा करनी चाहिए।

विषयोपभोग

केवल विषयोभोग की दृष्टि से किया गया कामोपभोग मनुष्य को लक्ष्यभ्रष्ट कर देता है। काम को सीमित करके उपभोग करना चाहिए। कामनाएं उपभोग करने से शान्त नहीं होती अपितु अग्नि में घृत समान उसकी ज्वाला निरन्तर बढ़ती रहती है।

सर्वसामान्य के लिए काम

मनुस्मृति में समावर्तन संस्कार के अनन्तर विवाह का विधान किया गया है। विवाह एक पवित्र संस्कार है और इसका एकमात्र उद्देश्य काम से होने वाली उच्छृंखलता को समाप्त करना तथा अभीष्ट, सुन्दर, हृष्ट-पुष्ट, ब्रह्मतेज से युक्त तथा सज्जनों द्वारा माननीय संतति की उत्पत्ति करना है। अतः एक प्रकार से काम को स्वस्त्री तक परिसीमित कर दिया जाता है और यदि इस पवित्र संस्कार का विधान नहीं होता तो काम का विवेकपूर्ण उपभोग ही नहीं रह जाता। एतदर्थ मनु ने निश्चित विधान किए हैं।

मृच्छकटिक में काम

मृच्छकटिक में काम के प्रति एक अलग ही दृष्टि है। स्त्रियों की कामवासना का यथार्थ वर्णन एक श्लोक में हैं। स्त्रियों के द्वारा झिड़के गए (तिरस्कृत) नीच पुरुषों की कामवासना अधिक बढ़ जाती है। किन्तु सज्जन पुरुषों की कामवासना स्त्रियों द्वारा अपमानित होने पर कम हो जाती है अथवा होती ही नहीं।

भर्तृहरि श्रंगारशतक में काम

भर्तृहरि ने कांता-सौंदर्य तथा उनके विभिन्न हाव-भावों का श्रृंगारशतक में वर्णन किया है। तथा काम की कमनीय परंपरा का नीतिपूर्वक निर्वाह कालान्तर में अन्य कवियों ने भी किया है।

कुट्टनीमतम् में काम

कामनीति की एक और विधा की झलक हमें दामोदर-प्रणीत कुट्टनीमतम् नामक काव्य में मिलती है। कामाचार और वेश्यावृत्ति में लक्ष्यभेद है। कामाचार में रतिसुख प्रधान है जबकि वेश्यावृत्ति में अर्थोपार्जन प्रमुख है। कुट्टनीमतम् में उसी अर्थोपार्जन वैशिक काम का उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत काव्य का वैशिष्ट्य यह है कि एक तरफ तो वेश्याओं के प्रति आकर्षण भी प्रकट करता है तथा दूसरी ओर समाज को सजग भी बना देता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि काम का निरुपण विभिन्न कवियों ने अनेक प्रकार से किया है। कहीं पर काम को स्वस्त्री तक ही सीमित रखा गया है और उस पर एक पुरुषार्थ की दृष्टि रखी गई है जैसे मनुस्मृति, वहीं मृच्छकटिक में काम के संबंध में अलग ही दृष्टि है। भर्तृहरि कांता के कमनीय कुट्टनीमतम नितान्त मौलिक सृष्टि करते हैं। समाज ने इन काव्यों में प्रेरणा ली है और वस्तुतः इसीलिए ये काव्य रचे गए। यही काम सम्बन्धी नीति विभिन्न सामाजिक वर्गों के लिए पृथक-पृथक रूप से प्रेरक रही।

मोक्षनीति

धर्म, अर्थ और काम का समन्वय मोक्ष पुरुषार्थ की ओर प्रवृत्त होता है। मनुष्य जीवन की इतिश्री मोक्ष प्राप्त करने में हैं। मोक्ष जीवन का परम लक्ष्य है। धर्म, अर्थ और काम इसके साधन हैं। मुक्ति प्राप्त करना 'परमपुरुषार्थ' है।

'मुच्यते सर्वेर्दुः खेसबन्धनैर्यत्र स मोक्षः' इस व्युत्पत्ति के आधार पर जिस परमपद को प्राप्त करके जीव आध्यात्मिक आदि सम्पूर्ण दुःखबन्धनों से मुक्त हो जाता है और आन्तयन्तिक सुख प्राप्त करता है उसे मोक्ष कहते हैं।

मोक्ष को निर्वाण भी कहते हैं। शोकोत्पन्न कायिक, वाचिक और मानसिक संतापों के शमन को निर्वाण कहते हैं। निर्वाणावस्था का विदुरनीति में एक स्थल पर उल्लेख किया गया है—जो न दूसरे से पराजित होता है, न दूसरों को पराजित करना चाहता है, निन्दा और प्रशंसा दोनों में समान स्थिति में रहता है, वह निन्दा होने पर न दुखी होता है और न प्रशंसा होने पर प्रसन्न होता है। यही द्वन्द्वातीत स्थिति कहलाती है। द्वन्द्वातीत पुरुष सुख-दुःख से ऊपर हो जाता है यही निर्वाणावस्था कहलाती है। इसे ही शास्त्रों में ब्रह्मभाव की प्राप्ति कहा गया है।

आत्मज्ञान

आत्म-तत्व के ज्ञान से मनुष्य का यह जन्म सार्थक होता है। अज्ञानवश ही मनुष्य कर्म करता है और योनियों में भटकता रहता है। मुक्ति दो प्रकार की होती है वर्तमान देह के छूटने पर प्राप्त होने वाली मुक्ति का सद्यःमुक्ति कहते हैं और ब्रह्मलोक में पहुंचकर वहां के भोगों का अवसान हो जाने पर ब्रह्म के साथ जो मुक्ति प्राप्त होती है उसे क्रम मुक्ति कहते हैं।

मोक्ष और ज्ञान

मोक्ष का सर्वप्रधान कारक ज्ञान होता है। ज्ञान को विद्या भी कह सकते हैं। ज्ञान के समान इस संसार में कुछ भी पवित्र नहीं है। ज्ञानाग्नि ही समस्त कर्मबन्धों को भस्मसात कर देती है। अतएव ज्ञानाग्नि से प्रबल और कुछ नहीं है।

मोक्षार्थी के कार्य

मनु ने मनुस्मृति में निर्दिष्ट किया है कि मोक्षार्थी तीन ऋण (देवऋण, ऋषिऋण और पितृऋण) को पूरा करके ही मन को मोक्ष में लगावे, उपर्युक्त तीनों ऋणों को पूरा किये बिना मोक्ष का सेवन करने वाला नरक हो जाता है।

द्विज के कर्त्तव्य

विधिपूर्वक वेदों को पढ़कर, धर्मानुसार पुत्रों को उत्पन्न कर और शक्ति के अनुसार अनुष्ठान कर द्विज मोक्षसाधन सन्यासाश्रम में मन को लगावे। द्विज बिना वेद का अध्ययन किये तथा बिना पुत्रों को उत्पन्न किए और अग्निष्टोम आदि यज्ञों का बिना अनुष्ठान किये मोक्ष को सन्यासाश्रम के ग्रहण द्वारा चाहता हुआ नरक को जाता है।

ब्रह्मज्ञान

ब्रह्मविषयक ज्ञान ही सर्वश्रेष्ठ कहा गया है वही सब विद्याओं में प्रधान है। इस कारण ब्रह्मज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति होती है। ब्रह्मविषयक ज्ञान के ही सम्बन्ध में भर्तृहरि का अद्वैताविषयक श्लोक उल्लेखनीय है कि पहले आत्मा-परमात्मा में कोई विभेद नहीं था परन्तु बाद में आत्मा और परमात्मा में वैभिन्नय कैसे हो गया?

मोक्ष की प्राप्ति के लिए कर्म

सांसारिक सुख और मोक्ष की प्राप्ति के लिए कर्मों का करना आवश्यक

है। ये वैदिक कर्म दो प्रकार के होते हैं—पहला स्वर्गादि सुखसाधक संसार में प्रवृत्ति कराने वाला ज्योतिष्टोमादिरूप प्रवृत्त कर्म और दूसरा निःश्रेयस साधक संसार से निवृत्ति कराने वाला प्रतीकोपासनादिरूप निवृत्त कर्म। इस लोक में या परलोक में इच्छापूर्वक किया गया ज्योतिष्टोमादिरूप कर्म संसार प्रवृत्तिसाधक होने से 'प्रवृत्तकर्म' कहा जाता है और इच्छारहित निष्कामभाव से ब्रह्मज्ञान के अभ्यासपूर्वक किया गया कर्म संसार निवृत्ति साधक होने से 'निवृत्त कर्म' कहा जाता है। प्रवृत्त कर्म का सेवन कर देवों की समानता अर्थात् स्वर्ग प्राप्त होता है और निवृत्त कर्म का सेवन करता हुआ पंचभूत अर्थात् पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश का अतिक्रमण करता हुआ अर्थात् पुनर्जन्म रहित होकर मोक्ष पाता है। सम्पूर्ण चराचर जीवों में आत्मा को तथा आत्मा में सम्पूर्ण चराचर जीवों को देखता हुआ आत्मयाजी ब्रह्मार्पण न्याय से ज्योतिष्टोमादि करने वाला ब्रह्मत्व अर्थात् मुक्ति को प्राप्त करता है।

ब्राह्मण का यह परमकर्तव्य है कि यदि वह मोक्षार्थी है तो अपने कर्म को आलस्यरहित होकर करें, क्योंकि शक्ति से अपने वेदोक्त कर्म को करता हुआ ब्राह्मण परमगति (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

सम्पूर्ण जीवों में स्थित आत्मा को आत्मा के द्वारा जो देखता है वह सब में समानता प्राप्त करके ब्रह्मरूप परमपद मोक्ष को प्राप्त करता है तथा यदि मोक्षपद को प्राप्त करना है तो ब्राह्मण को सावधान चित्त होकर समस्त सत् और असत् को आत्मका में वर्तमान देखें, सब सत् तथा असत् को आत्मा में वर्तमान देखता हुआ वह ब्राह्मण अधर्म में मन को नहीं लगाता है। इन्द्र आदि सब देवता आत्मा अर्थात् परमात्मा ही हैं। सब संसार आत्मक में ही अवस्थित है और आत्मा ही इन देहियों के कर्म-सम्बन्ध को उत्पन्न करता है।

ब्रह्म के चिन्तक में भी विविधताएं हैं अर्थात् उसे अनेक रूपों में कल्पित किया गया है। इस परमपुरुष परमात्मा को कुछ लोग याज्ञिक-अध्वर्यु अग्नि, कुछ लोग सृष्टिकर्ता प्रजापति मनु, कुछ लोग ऐश्वर्यसम्पन्न होने से इन्द्र, कुछ लोग प्राण तथा कुछ लोग शाश्वत, सनातन अर्थात् नित्य ब्रह्म कहते हैं। यह परमात्मा सम्पूर्ण प्राणियों में शरीरों को आरम्भ करने वाली पंचमूर्तियों पृथ्वी, जल, तेज, वायु तथा आकाशरूप पंचमहाभूतों से व्याप्त होकर उत्पत्ति स्थिति और विनाश क्रमशः—जन्म, स्थिति और मरण के द्वारा निरन्तर परिवर्तनशील रथ के पहिये के समान सांसारियों को सर्वदा बनाता रहता है।

गीता में मोक्षनीति

गीता में उपदिष्ट है कि मोक्ष का अधिकारी वही है जिसे सुख-दुःख समान प्रतीत होते हैं तथा जिसे इन्द्रियों के विषय व्याकुल नहीं करते हैं। असत् वस्तु का अस्तित्व नहीं है और सत् का अभाव नहीं है, इस प्रकार इन दोनों का ही तत्व ज्ञानी पुरुषों द्वारा देखा गया है।

शोक करना व्यर्थ है, इस भावना का परिपोषण मनुष्य को सांसारिक बंधनों से मुक्त करता है। जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है और मरने वाले का जन्म निश्चित होता है अतः अपरिहार्य प्रयोजन में शोक करना उचित नहीं हो। सांसारिक वेदनाओं से नितांत क्लांत मन को एक आश्रय मिल जाता है लोग व्यर्थ में ही शोक किया करते हैं तथा कर्म से च्युत हो जाते हैं। यदि वैराग्य ग्रहण करना है तो कर्म में रति रखना चाहिये। मोक्ष की वस्तुस्थिति कर्म में ही है कर्म का त्याग करके हाथ पर हाथ रखकर कुछ भी सुलभ नहीं है।

योगारूढ़ पुरुष वह है जो इन्द्रियों को भोगों में आसक्त नहीं होता, जो कर्मों में आसक्त नहीं होता तथा सर्वसंकल्पोंका त्यागी होता है। यह कल्याण का हेतु है। अतः मनुष्य को चाहिये कि अपने द्वारा अपना संसार-समुद्र से उद्धार करे और आत्मा को अधोगति में न पहुंचाए क्योंकि यह जीवात्मा स्वयं अपना शत्रु है और स्वयं मित्र है।

ईश्वर में सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण से होने वाले भाव विद्यमान रहते हैं, किन्तु गुणों के कार्यरूप सात्विक, राजस और तापस इन तीनों प्रकार के भावों से अर्थात् रागद्वेषादि विकारों से और सम्पूर्ण विषयों से यह सब संसार मोहित हो रहा है। इसलिए इन तीनों गुणों से परे ईश्वर के अविनाशी तत्व को नहीं समझता है क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुद त्रिगुणमयी ईश्वर की योगमाया अत्यन्त दुस्तर है, परन्तु जो पुरुष ईश्वर को ही निरंतर भजते हैं वे इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार से तर जाते हैं। जो, पुरुष ॐ ऐसे एक अक्षररूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थस्वरूप ईश्वर का चिन्तन करता हुआ शरीर का त्याग कर जाता है, वह पुरुष परमगति को प्राप्त होता है।

भर्तृहरिवैराग्यशतक में मोक्ष-नीति

मनुस्मृति में मोक्षधर्म का प्रतिपादन एक नितांत सैद्धान्तिक रूप में किया गया है। मनुस्मृति में आत्मा और परमात्मा के साक्षात्कार में ही सार्थकता है तथा मोक्षार्थी को संयत होकर कर्म करना चाहिये। यही गीता का भी उपदेश है। परंतु कालान्तर में भर्तृहरि ने अपने आराध्यदेव शिव में अपना सर्वस्वार्पण करने में ही अपनी इतिकर्तव्यता मान ली है। भर्तृहरि की शरणागति अनेक कुतूहल पुंजोपेत हैं। यह संसार मिथ्या है, मृगमरीचिका है। संसार में अनुलिप्त होने पर वितृष्णा उत्पन्न होती है। वितृष्णा में ही मोक्ष की परमगति है तथा इसे उन्होंने विविध श्लोकों से उद्घाटित किया है।

इस संसार में वैराग्य में ही जीवन की सार्थकता है। ज्ञान सत्पुरुषों का अहंकार, मद आदि को दूर करता है, कुछ लोगों के लिए वह अहंकार मद आदि का कारण बनता है। एकान्त स्थान संयमी व्यक्तियों के लिए मुक्ति का साधन होता है और विलासी व्यक्तियों के लिए वासना का कारण हो जाता है।

भर्तृहरि इस संसार की क्षणभंगुरता पर खिन्न हैं तथा वह ब्रह्म को बुद्धि से हीन कहते हैं:-

इस संसार का सृजन करके विधाता ने किंचित् त्रुटियां की हैं। यह बड़े दुःख की बात है और ब्रह्मा की बुद्धिहीनता है कि गुणों के कोष तथा सारी पृथ्वी के रत्नरूप मनुष्य की सृष्टि की ओर फिर उसे क्षणभंगुर बना दिया। मनुष्य पल भर में बच्चा रहता है, पल में जवान होकर विलास का रसिक हो जाता है। क्षण में एकदम ऐश्वर्यशाली हो जाता है। नट की तरह बुढ़ापे से जीर्णशीर्ण होकर यमराज भी नगरी के पर्दे के पीछे चला जाता है।

उपर्युक्त उद्धरणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि मोक्षार्थी को प्रेरित करने के दो मार्ग होते हैं। हक तो वह जो भर्तृहरि ने अपनाया। भर्तृहरि ने जीवन की वितृष्णाओं से दुःखी होकर, नितांत विरक्त भाव से विभिन्न उद्गार व्यक्त किए जिनमें जीवन की अधिकतम कटुता दृष्टिगोचर होती है। भर्तृहरि वैराग्यशतक में जीवन के विभिन्न भोगोपभोग और साथ ही साथ उनसे विरक्ति भी दर्शायी गई है। जिसके फलस्वरूप एक जुगुप्सा मिश्रित विरक्ति का भाव होता है। उदाहरणार्थ-कामदेव मरे हुए को भी मारता है क्योंकि कुतिया का सम्भोग करने के लिए वह कुत्ता भी ऐसा

करता है जो दुर्बल, काना, लंगड़ा, कनकटा, पूछरहित है, जिसके फोड़ा हो गया है, जिसके मवाद भरे शरीर में कीड़े पड़े हैं जो भूखा और बूढ़ा हो गया है और जिसके गले में हुई हांडी का घेरा पड़ा है।

भर्तृहरिशतक के कतिपय श्लोक जीवन के बहुत निकट हैं। जीवन के सुखों का उपभोग करते-करते एकाएक उनमें सांसारिक नश्वरता का आभास होने लगता है। दूसरे शब्दों में ये श्लोक व्यक्ति को जीवन के बहुत निकट पहुंचाकर उसे जीवन से नितांत विरत रहने का संदेश देते हैं।

जीवन के जल की लहरों की तरह चंचल होने पर आदमियों के लिए सुख कहां? क्योंकि आदमियों की आयु सौ वर्ष की निश्चित की गई है। उसकी आधी तो रात सोने में चली गई। बचे हुए पचास वर्षों का एक भाग बचपन के अज्ञान में और दूसरा वृद्धावस्था की कठिनाईयों में गया। जो बाकी बचा वह रोग, वियोग, दुःख, दूसरों की गुलामी, कलह, हर्ष, शोक, हानि, लाभ आदि अनेक प्रकार के क्लेशों में बीतता है।

भामिनी विलास में वैराग्य

१७ वीं शताब्दी में पण्डितराज जगन्नाथ द्वारा विरचित भामिनीविलास मानक ग्रंथ का शान्तविलास मोक्षपरकनीति का विधिवत् परिचय देता है। इस विलास में कुल ४६ श्लोक हैं तथा उक्त श्लोकों में एक अन्य अर्थ ध्वनित होता रहता है यही इनका वैशिष्ट्य है।

भर्तृहरि के समान पण्डितराज भी सांसारिक भोग विलासों से उपमुक्त समझ पड़ते हैं। सांसारिक ऐश्वर्यों के सुलभतम उपभोगों का निरन्तर भोग करते-करते भक्त कभी-कभी ईश्वर के नाम का जाप करने के लिए उद्वेलित हो जाता है। अग्रिम पंक्तियों में यही भाव है। ऐ मेरे जीव! बार-बार संसार में भ्रमण करते हुए तुमने कितनी ही बार द्राक्षा का स्वाद लिया और शक्कर खूब खायी, पर्याप्त दूध पिया, स्वर्ग जाने पर अमृत भी पिया, रम्भा का अधर भी काटा फिर भी सच-सच बताओ कि कहीं 'कृष्ण' इन दो अक्षरों की मधुरता का यह उद्गार दिखायी पड़ा।

क्षेमेन्दरद्र द्वारा प्रणति वैराग्य

क्षेमेन्दरद्र ने वैरागय में ही अभय की स्थिति का समाहार किया है। भोग में रोग का भय है, सुख में क्षय का भय है, धन का मद अधिक होने से राजा का भय है, दासता में स्वामी का भय है, गुण में दुष्ट स्त्री का भय है, मान में ग्लानि का भय है, विजय में शत्रुओं का भय है, शरीर में यम का भय है अतः इस संसार में सभी भययुक्त हैं।

उपर्युक्त विभिन्न प्रकार की मोक्षनीतियों का आकलन करने पर स्पष्ट होता है कि जीवन का अभीष्ट तो एक ही है वह चाहे भक्ति द्वारा सिद्ध किया जाए अथवा वैराग्य द्वारा। मार्ग भिन्न-भिन्न हैं, लक्ष्य एक हैं। तथा उस लक्ष्य को प्राप्त करने में मनुष्य को प्रमाद नहीं करना चाहिये। नीति ग्रंथों का यही सार है।

परकीर्ण नीति

सामान्य जीवन में बहुत से ऐसे व्यवहारपरक प्रसंग हैं जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से किसी एक से विशेष सम्पृक्त न होकर प्रत्येक में कहीं न कहीं चरितार्थ होते हैं। अतः जो धर्मविशेष धर्म के संबंध में संगत हो सकते हैं वे कहीं-कहीं अर्थ-संगत भी हो जाते हैं और कभी-कभी वे काम की कोटि में भी आ जाते हैं।

इन्हें दूसरे शब्दों में 'गुण' भी कहा जा सकता है। गुण शब्द से अभिप्राय किसी वैशिष्ट्य से है अतः उपर्युक्त पुरुषार्थों के गुण भी प्रकीर्ण नीति के अंतर्गत आ जाते हैं। उदाहरणार्थ धैर्य नामक गुण को ही लें। धैर्य धर्म की धुरा है अतः धर्मपूर्वक आचरण करने में धैर्य एक प्रमुख गुण है। जीवन के द्वितीय पुरुकार्थ अर्थ में भी धैर्य का विधिवत् पालन करना पड़ता है। राजा के लिए तथा विधिवत् अर्थोपयोग के लिए धैर्य की निरंतर अपेक्षा बनी रहती है। सामान्य कामभावना, विशेष कामभावना दोनों से युक्त आचरण करने में भी धैर्य का त्याग नहीं किया जा सकता। साथ ही मोक्ष की स्थिति को प्राप्त करने के लिए भी धैर्य-गुण की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार सुस्पष्ट हो गया कि एक ही धर्म या गुण विभिन्न पुरुपार्थों में किस प्रकार सम्पृक्त रहता है।

संस्कृत साहित्य में जीवन के लिए व्यहारपूर्ण श्लोकों का बाहुल्य है और भारतीय मनीपियों ने जीवन के हर पक्ष को इस प्रकार तराशा है कि इन श्लोकों का सहज कथन ही जीवन को एक सक्रियता प्रदान करता है। भारतीय जन-जीवन और संस्कृति की जागरूकता में ये सदुक्तियां नितांत जीवंत रही हैं।

प्रकीर्ण शब्द का अर्थ होता है बिखरा हुआ अर्थात प्रकीर्ण नीति के अंतगर्त विविधात्मक नीतियों का समावेश होता है तथा इन्हें एक निश्चित परिधि अथवा परिसीमा के अंर्तगत नहीं रखा जा सकता है। यद्यपि प्रकीर्ण नीतियां अनंत हैं परन्तु विवेचन-सौकर्य के लिए कुछ विशिष्ट विषयों को ही लिया गया है।

उद्योग

विचारसमर्थ पुरुष को उद्योग नहीं छोड़ देना चाहिए क्योंकि तिल से बिना उद्योग के तेल नहीं निकल सकता। अतः मनुष्य को अम्युन्नति के लिए उद्योग का त्याग नहीं करना चाहिए क्योंकि इसका जीवन में अत्यधिक महत्व है।

विद्या

समस्त घनों में विद्या ही प्रधान घन है क्योंकि उसका कोई व्यक्ति अपहरण नहीं कर सकता है और विद्वान पुरुष जहां जाता है वह उसके साथ रहती है।

धन

धन का मनुष्य जीवन में महन्महत्व है। घन पर ही मनुष्य की अनेक कार्यपद्धतियां निर्भर करती हैं। अभिमान अथवा दर्प, विद्वान, बुद्धि विभ्रम और सुबुद्धि, ये सभी गुण एक साथ समाप्त हो जाते हैं, जब व्यक्ति धन से हीन होता है।

संगति

दुर्जन और सर्प में सपर ही श्रेयस्कर है न कि दुर्जन, क्योंकि सर्प तो समय-समय पर डसता है परन्तु दुर्जन पद पद पर क्षति पहुंचाता है।

प्रियवचन

संस्कृत नीतिकारों ने कार्य सम्पादन कराने की पद्धति को एक नितान्त सुरुचिपूर्ण सूत्र में बाघा है। वल्लभदेव ने भी इसका रोचक उल्लेख किया है। जिसकी हानि चाहते हो उससे सदा प्रिय वचन बोलो जबकि सामान्यतः लोग अप्रिय बोलते हैं। बहेलिए मृग का वध करने के लिए उनको प्रिय लगने वाला मधुरगान अत्यधिक सुमधुर स्वर में गाते हैं।

रूप

लोक में नाना प्रकार के सौन्दर्य की चर्चा हुआ करती है परन्तु यथार्थ रूप तो किंचिद् और ही है, कोयल का रूप उसके स्वर में है, स्त्रियों का रूप उनके पतिव्रता होने में है, कुरूपों का रूप विद्या है तथा तपस्वियों का रूप क्षमा है।

गुण

जिस गुण विशेष के कारण मनुष्य की जीविका चलती हो तथा जिसके कारण उसकी ख्याति और कीर्ति हो, गुणी मनुष्य को उस गुण विशेष की वृद्धि करनी चाहिए तथा उसको प्रकाश में लाना चाहिए। दक्षता, मद्रता, दृढ़ता, क्षमा, क्लेश सहन करने की शक्ति, सन्तोष, शील, उत्साह, ये गुण मनुष्य को शोभित करते हैं।

प्रेम बन्धन

यद्यपि बहुत प्रकार के बन्धन होते हैं परन्तु प्रेम रूपी रज्जु का बन्धन ही दृढ़ बन्धन कहा गया है क्योंकि इसी प्रेम बन्धन के कारण जो भ्रमर लकड़ी तक को काटने में निपुण होता है वही कमल के अन्दर बन्द हो जाने पर निष्क्रिय हो जाता है।

चिन्ता का त्याग

जो नहीं होना है वह नहीं ही होगा, जो होना है वह होकर रहेगा। अतः चिन्ता रूपी विष को नष्ट करने वाली यह दवा क्यों नहीं पीते? उपर्युक्त उक्ति द्वारा मनुष्य के चिन्ता से आक्लान्त मन को एक बहुत बड़ा सहारा मिल जाता है। नीतियुक्त वाक्यों की यही अपनी मौलिकता है, यह छोटा सा श्लोक जीवन के कार्यान्वयन में जितना अधिक सफल होगा उतना कोई बृहद् उपदेश नहीं।

दुःखी व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने से अधिक दुःखी को देखे, सुखी को चाहिए कि वह अपने से अधिक सुखी को देखे और इस प्रकार अपने को शत्रु के समान शोक और हर्ष के अधीन न करे दे।

अनादर

अत्यधिक परिचय से अनादर होता है। समुद्र महत्ता व्यर्थ है जो कि तृणादि जैसी छोटी वस्तु को भी अपने शिर पर धारण करता है अर्थात् जो सारहीन वस्तु है उसको ऊपर तैरने देता है और भारी सारयुक्त वस्तु को डुबो देता है।

स्त्री

स्त्रियों में स्वाभाविक गुण-दोष नहीं होता किन्तु नदियां जिस प्रकार समुद्र से मिलकर खारी हो जाती है उसी प्रकार पति के गुण-दोषों के अनुसार स्त्रियां भी गुणवती हो जाती है।

मित्र

वह मित्र नहीं है जिसके कोप से डर लगता हो अथवा जिससे शंकित होकर व्यवहार किया जाता हो। मित्र वहीं होता है जिसमें पिता के समान विश्वास होता है। अन्य तो संगत हुए अर्थात् साथी मात्र कहलाते हैं।

अतिथि

भारतीय आचार-संहिता का उद्घोष कितना मौलिक है इसकी एक झलक अतिथि संबंधी श्लोक से मिल जाती है। देवगुण प्रसन्न हो जाते हैं, ऋषिगण गाने लगते हैं तथा पितृगण नृत्य करने लगते हैं जिसके घर में अतिथि आता है।

सम्पूर्ण सृष्टि में केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसे स्रष्टा ने विवेक-शक्ति दी है। यह बात और है कि मनुष्य अपनी इस असाधारण शक्ति का प्रयोग कभी-कभी नहीं कर पाता फिर भी यह एक सच्चाई है कि विवेकहीन परिस्थितियों में भी मनुष्य का विवेक उसके अन्तराल में कहीं न कहीं निगृहित अवश्य रहता है। उदाहरणार्थ पुत्र को ताड़ित करने वाले पिता के मन में कहीं न कहीं वात्सल्य अवश्य रहता है, भले ही तामस भावना के कारण वह उसका प्रयोग नहीं कर पाता हो।

इसका अर्थ यह है कि विवेक को उद्बुद्ध करने के लिए तदनुकूल वातावरण और मनोभावों की अपेक्षा होती है अन्यथा यह विवेक अन्य उल्वण मनोभावों द्वारा तिरोहित कर दिया जाता है। नीति इसी विवेक का दूसरा नाम है। नीति का व्युत्पत्तिपरक अर्थ (नीयते अनया इति नीतिः) भी यही संकेत करता है कि मनुष्य का नेतृत्व करने वाले उपदेश ही नीति हैं। दूसरी दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि विवेक ही मनुष्य का नेतृत्व करता है। नीति कहती है, 'अहो दुस्ता बल्वद्विरोधिता' बलवान् के साथ विरोध मोल लेना दुःखमय अन्त वाला होता है। एक बुद्धिमान् व्यक्ति का विवेक भी तो यही कहेगा क्योंकि विवेक का एकमात्र लक्षण है—जो अहित से मनुष्य का निवारण करे और हित से उसका अनुबन्धन करे।

उपर्यक्त व्याख्यान से सिद्ध हो जाता है कि विवेक और नीति परस्पर पर्याय हैं, दोनों में तत्वतः कोई अंतर नहीं है। इस सन्दर्भ में एक स्वाभाविक प्रश्न उठ सकता है, वह यह कि कभी-कभी कोई आप्तवाक्य मनुष्य को गलत कार्य की ओर भी ले जाता है। उदाहरणार्थ 'शठेशाठ्यं समाचरेत्' अथवा 'यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्यः तस्मिन् तथा वर्तितव्यं स धर्मः (महाभारत) तो क्या इन्हें भी नीति माना जा सकता है। क्या ये भी विवेक के ही प्रतिफल हैं? और यदि 'शठेशाठ्यं समाचरेत्' ही नीति है तो 'उदारचरितांना' तु वसुधैव कुटुम्बकम' जैसी नीति का क्या मूल्य होगा? क्योंकि यह एक स्थापित सत्य है कि उपर्युक्त दोंनो वाक्यों की चरितार्थता में मौलिक भेद है। दोनों वाक्य एक ही विवेकवृक्ष की दो शाखाएं नहीं है।

इसका उत्तर यह दिया जाना सम्भव है कि नीति वाक्यों की पृष्ठभूमि एक ही नहीं होती। वस्तुतः शांकर वेदान्त की ही भांति नीतियों के भी दो स्तर हैं। एक तो वे नीतियां जो पारमार्थिक सत्य का उद्घाटन करती हैं और दूसरी वे नीतियां जो व्यावहारिक सत्य का निरूपण करती है। पारमार्थिक अथवा निरपेक्ष (शाश्वत अथवा चिरन्तन) नीति तो यही कहती है कि सम्पूर्ण विश्व बन्धु के समान है, परन्तु हमारा व्यावहारिक सत्य यह बताता है कि हमसे शत्रुता करने वाला व्यक्ति हमारा बन्धु नहीं है इसी उभयविध दृष्टिकोण के कारण नीतियों का प्रतिपादन भिन्न-भिन्न रूपों में हुआ है और इसी कारण संस्कृत नीतिवाक्यों में परस्पर विरोध असंगति और वैषम्य भी परिलक्षित होता है। एक ओर जहां श्रीमदभगवदगीता में पारमार्थिक नीतियों का विवेचन हुआ है वहीं कणिकनीति में व्यावहारिक नीति के दर्शन होते हैं। भगवद्गीता की नीतियां सम्पूर्ण विश्व के लिए है। उनका प्रभाव मानवमात्र के लिए एक जैसा है। वे उपदेश कौरवों तथा पाण्डवों के लिए एक ही देश, एक ही काल और एक ही व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं परन्तु कणिक की नीति केवल दुर्योधन के अभ्युदय के लिए है, उसका संबंध दुर्योधन के अतिरिक्त केवल उन अन्य व्यक्तियों से हो सकता है जो दुर्योधन की ही भांति पापाचरण में निरत हों, बन्धुद्रोही हों, आत्मकेन्द्रित हों और गर्वोन्मद हों।

उपर्युक्त विवेचन से नीतियों की चरितार्थता का विधान सुस्पष्ट हो जाता है। अब इस सन्दर्भ में एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि अपने मूल

उद्गम से लक्ष्य तक पहुंचने में ये नीतियां किस प्रकार का माध्यम अपनाती हैं। क्योंकि छुरे की नोक पर भी नीति का पालन करांया जा सकता है और आंख में धूल झोंक कर भी नीति की परितार्थता सम्भव है। आखिर नीति के प्रयोग का सर्वसम्मत माध्यम क्या है?

इस सन्दर्भ में संस्कृतकाव्यशास्त्रों की सहायता लेना आवश्यक है। आचार्य मम्मट आचार्य विश्वनाथ तथा अन्य अनेक संस्कृत आचार्यों ने भी काव्य-विवेचन के प्रसंग में उपदेश की त्रिविधता का व्याख्यान किया है। केवल यह बताने के लिए कि काव्यसम्मत उपदेश कैसे प्रभावी होता है, आचार्य मम्मट ने काव्य प्रयोजन स्पष्ट करते हुए कहा है—

काव्यं यशसेर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्ता सम्मिततयोपदेशयुजे।।
--(मम्मट - काव्यप्रकाश 112)

प्रस्तुत कारिका में काव्यप्रकाश में प्रायः समस्त टीकाकारों ने कान्तासम्मिततया शब्द की विपल व्याख्याएं की हैं और इसी सन्दर्भ में आचार्यों ने बताया है कि उपदेश तीन प्रकार का होता है - प्रभुसम्मित, मित्रसम्मित और कान्तासम्मित। आचार्यों ने काव्योपदेश को कान्तासम्मित माना है तो क्या नीतियां भी केवल कान्तासम्मित होती हैं?

वस्तुतः यह एक गूढ़ प्रश्न है। सारी नीतियां कान्तासम्मित ही हों ऐसा तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि 'शठेशाठ्यं समाचरेतें' जैसी नीति का समाचरण एक कोमल मनोवृत्ति वाली भार्या भी करे। गोस्वामी तुलसी के रामचरित से यह तथ्य निर्विशंक सिद्ध हो जाता है कि तारा और मन्दोदरी ने अपने पतियों की अनेक नीतियों का विरोध किया था। मारीच को रावण की नीतियां इसलिए माननी पड़ी क्योंकि वह उसका स्वामी था और दूसरी और सुग्रीव को राम की नीतियां इसलिए माननी पड़ी क्योंकि मर्यादा पुरुषोत्तम राम सुग्रीव के मित्र हो चुके थे। इस प्रकार के समरूप उदाहरण सहस्त्रों संख्या में संस्कृतवाङ् मय में उपलब्ध हो सकते हैं जिनसे यही निष्कर्ष निकलता है कि नीतियां प्रभुसम्मित, मित्रसम्मित तथा कान्तासम्मित तीनों ही रूपों में प्रभाव उत्पन्न करती है बल्कि यदि और सूक्ष्म विवेचन किया जाए तो नीतियों के प्रभावी होने के सैकड़ों और भी स्रोत प्ररिलक्षित होते हैं, कभी-कभी उस व्यक्ति की भी नीति हमें माननी पड़ती है जो स्वामी, मित्र और पत्नी-इन तोनों में से कोई भी नहीं होता। वह व्यक्ति शत्रु हो सकता है, चोर हो सकता है, राजनेता हो सकता है। निश्चय ही इन स्थितियों में नीतियों का उद्गम-बिन्दु बदल जाता है। भारत में शंकराचार्य का उपदेश अथवा पश्चिमी देशों में पोप का उपदेश एक विलक्षण विधि से प्रभावोत्पन्न करता है। क्या इसे हम 'धर्मगुरु सम्मत नीति' नहीं कह सकते?

उपर्युक्त व्याख्यान से नीतियों का विशाल क्षेत्र और उनकी प्रभावशालिता का विस्तृत आयाम सुस्पष्ट हो जाता है। वस्तुतः मानव जीवन एक यान के समान है और नीतियां उस यान के लक्ष्य को निर्दिष्ट करने वाली विधियां है। निर्देशक मानचित्र के बिना जैसे कोई वायुयान आकाश की अतल गहराइयों में पथभ्रष्ट होकर नष्ट हो सकता है ठीक उसी प्रकार नीतियों के बिना मनुष्य भी विवेकच्युत होकर विनष्ट हो सकता है। वस्तुतः नीतियां मनुष्य को मनुष्य बनाती हैं। नीतियां मनुष्य के व्यक्तित्व में तिरोहित पशुता को ऊपर नहीं उठने देती। नीतियां मनुष्य की दुष्कामनाओं को मर्यादित करती है, इसीलिए भारतीय साहित्य में नीति नियामक ऋपियों मुनियों की समर्चना प्रस्तुत **की गई है।**

प्रस्तुत स्थल पर संस्कृत के नीतिवचनों के संबंध में एक प्रश्न और उठता है कि संस्कृत के नीतिवाक्य जनसामान्य के मुख से उतना अधिक मुखरित नहीं होते जितना कि हिन्दी तथा उसकी अन्य उपभाषाओं के नीतिवाक्य। संस्कृत के नीतिवाक्यों में प्रायोगिकता का अभाव है। यद्यपि उनमें नितान्त नीतियुक्त तथ्य विद्यमान रहते हैं।

नीति वस्तुतः उपयोगी तभी है जब वह अल्पज्ञजनों के द्वारा भी साधारणतया ग्राह्य हो। संस्कृत के ग्रन्थों की दुरुहता के कारण हर व्यक्ति इस लाभ से वंचित रह जाता है। शास्त्राभिमत नीति से वस्तुतः रचयिता की आत्मतुष्टि तो हो जाती है परन्तु इस प्रकार की रचना स्वान्तः सुखाय ही कही जा सकती है। संस्कृत के नीतिवाक्यों में सामूहिक उद्बोध एवं परिवर्तन का अभाव सा रहता है। नीतिकार को इस प्रकार होना चाहिए कि वह सामूहिक उद्बोध (MASS CHANGE) की उद्भावना से युक्त हो। उसके वाक्य से जनसमुदाय अपनी दुष्प्रवृत्तियों को परिवर्तित करने में सक्षम हो सके। इन नीतिकाव्यों में हृदयग्राहकता, रोचकता सर्वत्र विद्यमान रहती है।

नीति को सामान्य धर्म कह सकते हैं। अर्थात् नितान्त कुकृत्य करने वाला भी नीतियुक्त मार्ग पर लाया जा सकता है। व्यावहारिक जीवन में कई ऐसे क्षण आते हैं जब व्यक्ति हताश होकर जीवन से विमुख हो जाता है, भ्रान्तियों में भटकता रहता है कि अचानक उसको किसी सत्परामर्श, सदुपदेश या सद्वचन से पुनः एक आशा की किरण मिल जाती है और व्यक्ति की चेतना, विवेक पुनः लौट आता है भले ही वह बाद में उद्भ्रान्त हो जाए। इस प्रकार हम देखते हैं कि नीति के बीज रह व्यक्ति के हृदय में विद्यमान रहते हैं तथा किन्हीं परिस्थितियों से अनुकूलन न हो सकने के कारण उन नीति का तिरोभाव हो जाता है, नीतिपूर्णतया समाप्त नहीं हो जाती अतः इसे सर्वदा विद्यमान रहने वाला एक सामान्य धर्म कहा जा सकता है।

संस्कृत की नीतिपूर्ण उक्तियों की व्यावहारिकता के सम्बन्ध में विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि उक्त नीतिवचनों में जीवन के विभिन्न पक्षों से सम्बद्ध विषयों की व्यावहारिकता तो पूर्ण होती है परन्तु उनका प्रयोग जन-सामान्य हिन्दी भाषा में ही करता है। आज सत्य वचन का निर्वाह करने के प्रसंग में सामान्य व्यक्ति गोस्वामी तुलसीदास कृत रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाइ पर वचन न जाई इत्यादि पंक्तियों का ही प्रयोग करता है। उसके उद्गारों में अर्थव वा मरणमस्तु गुगान्तरे वा, न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदंन धीराः इत्यादि पंक्तियां बहुत कम ही आया करती हैं, या यों कहें कि इनकी पूर्णतः आंशिकता ही है। इस प्रकार जहां तक प्रचलन का प्रश्न है, हिन्दी की नीतिपूर्ण उक्तियां ही व्यावहारिकता में हैं। परन्तु उनका स्रोत तो वहीं नीति है जो किसी न किसी रूप में संस्कृत भाषा में विद्यमान है।

वर्तमान यांत्रिक युग में भी नीति से युक्त मान्यताएं भारतधरित्री में निरन्तर नए उपमान धारण कराती आई है। आर्यजनों की भांति आज भी मनुष्य अपने कर्तव्यों की इति श्री कर्म, अर्थ, और काम के विधिवत् विनियोग में मानता चला आ रहा है। शंकराचार्य और मण्डन मिश्र के शास्त्रार्थ के अनन्तर मण्डन मिश्र का अग्निदाह न करवा कर स्वयंकृत पश्चाताप की अग्नि में जलाना क्या भारतीय नीति का एक उत्कृष्टतम प्रतिमान नहीं है?

संस्कृत के नीतिकाव्य तभी अधिक उपयोगी हो सकेंगे जब उनमें जीवन के लिए उद्बोधक मन्त्र हों तथा उनमें 'स्वान्तः-सुखाय' की भावना के साथ 'परजनहिताय' की भावना का आधिक्य हो परजनहिताय के सन्देश द्वारा इस प्रकार के काव्य समूचे विश्व को 'कृणन्तों विश्वमार्यम्' का सा उद्घोष करते हुए नीतिमार्ग पर पहुंचा सकने में सक्षम रहेंगे। ■

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय भारत सरकार

पृष्ठ 21 का शेषांश

दुरुहता की तरफ धकेल देती हैं। जो शब्द अभी प्रचलन में हैं ही नहीं, उन्हें क्लिष्ट करार देकर हेय दृष्टि से देखना कहां का न्याय है, समझ नहीं आता। सरकारी कामकाज की इस नाजुक द्विभाषिक स्थिति में हमें बड़े धैर्य से काम लेना है और यह हमारी परीक्षा की घड़ी है। अप्रचलन की दूरगामीं स्थिति से घबराकर कर हम अगर यूं ही निठल्ले और निष्क्रिय बैठे रहे तो भाषा का विकास रूकना अवश्यंभावी है। और, अगर हम नये शब्दों के गठन से इसलिए कतराते रहे कि अमुक शब्द अप्रचलित है और इस पर दुरुहता का दुशाला ओढ़ा दिया जाएगा तो हम कम-से-कम हिंदी की विकासात्मक दिशा में घातक सिद्ध होते हैं। अंग्रेजी के किसी भी वैज्ञानिक शब्द-संकलन को खोलकर देखिए आपको सैकड़ों हजारों शब्द ऐसे मिलेंगे जो आम भाषा में अप्रचलित हैं और अंग्रेजी लिखते समय लेखक उनका प्रयोग करके भाषा में निखार, प्रांजलता तथा विद्वता लाने के लिए उनका प्रयोग सरकारी नोटिंग-ड्राफ्टिंग में भी करता है। परन्तु, हिन्दी लिखते वक्त नए शब्दों से कतराने की प्रवृत्ति लेखक की नहीं बल्कि पढ़ने वाले की भाषा के प्रति अल्पज्ञता का संकेत भी देती हैं। पढ़ने वाला अध्येता यदि बार-बार शब्दार्थ ग्रहण के लिए कोश आदि देखे (जैसा कि वह अंग्रेजी उद्धरणों के लिए भी करता है) तो स्थिति उतनी जटिल नहीं रहेगी।

इस समय जबकि हरेक क्षेत्र में नये-नये शब्दों और वह भी आयातित शब्दों की भरमार हो रही है......यह कहकर कि ये तो क्लिष्ट शब्द हैं....इस नकारात्मक स्थिति से उबरना होगा। जरा-सी चूक हिंदी के भव्य प्रासाद को धराशायी कर सकती हैं, जिसके लिए नीति-निर्धाण करने के सिद्धांतों की तरफ हमें पर्याप्त सावधान रहना पड़ेगा।

वरिष्ठ हिंदी अधिकारी, राष्ट्रीय सूचना-विज्ञान केन्द्र, ए-ब्लॉक, लोधी रोड, सीजीओ काम्प्लेक्स, नई दिल्ली-110003

सी०-2/32-ए, लारेंस रोड, नई दिल्ली-110035.

* **हिन्दी द्वारा ही सारे देश को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।**

—स्वामी दयानंद

* **राष्ट्र भाषा हिन्दी द्वारा ही भारतीय संस्कृति की रक्षा हो सकती है।**

—पुरुषोत्तमदास टंडन

* **जब तक आपके पास राष्ट्रभाषा नहीं, आपका कोई राष्ट्र भी नहीं।**

—मुंशी प्रेमचंद

* **किसी दूसरी भाषा को जानना सम्मान की बात है, लेकिन दूसरी भाषा को अपनी राष्ट्रभाषा के बराबर दर्जा देना शर्म की बात है।**

—महादेवी वर्मा

*****

पुरानी यादें नए परिप्रेक्ष्य

गांधी जी: व्यक्तित्व के विभिन्न रूप

—डा॰ रामदास "नादार"

30 जनवरी, 1948 भारत ही नहीं, समस्त संसार के लिए एक मनहूस दिन था। इस दिन अमन और शांति के देवता ने सदा के लिए आंखें मूंद लीं। यद्यपि वह देवता शारीरिक रूप से यहां से फिर कभी न आने के लिए चला गया, किन्तु अपने अनुयाइयों के लिए ऐसा मार्ग प्रशस्त कर गया जो उन्हें जीवन में कभी अंधकार में नहीं भटकने देगा।

गांधी जी निस्संदेह भारत ही नहीं, सारे संसार के लोगों के लिए एक विभूति तथा महान पुरुष थे। उनके जीवन से हम अनेक शिक्षाएं ग्रहण कर सकते हैं। यदि हम उनका अनुसरण करें तो स्वयं को एक आदर्श मानव बना सकते हैं। गांधी जी के जीवन की अनेक ऐसी छोटी-छोटी घटनाएं हैं जिनसे उन्होंने बड़ी सीख ली और वे इस उच्च शिखर तक पहुंचे जिस पर साधारण मनुष्य के लिए पहुंच पाना कठिन ही नहीं , असम्भव लगता है। उनके देहावसान पर मानव-जाति का खून के अश्रु बहाना स्वाभाविक ही है।

गांधी जी जब दक्षिणी अफ्रिका में थे तो एक बार अपने किसी मित्र को मिलने गए। यद्यपि उस मित्र से उनका परिचय बहुत घनिष्ठ तथा पुराना था और उन्हें आशा ही नहीं अपितु पूरा विश्वास था कि वहां उनका भली-भांति स्वागत तथा सत्कार होगा, मगर जब गांधी जी उस मित्र के कक्ष में प्रविष्ट हुए तो मित्र ने चपरासी से कहकर उन्हें अपने कक्ष से बाहर निकलवा दिया। इस घटना से गांधी जी बढ़े दुःखी हुए और घर लौटकर अपनी डायरी में ये शब्द लिखे—

> "अब मैं कभी ऐसे फेर में नहीं आऊंगा कि मुझे अपने सिद्धांत को तोड़ना पड़े। मैं कभी मित्रता का अनुचित लाभ नहीं उठाऊंगा।"

महात्मा जी को सांसारिक वस्तुओं और फ्रैशन-प्रस्ती से इतनी घृणा थी जो उनके अपने ही द्वारा दिए गए एक वक्तव्य से प्रमाणित होती है। महात्मा जी अपने एक मित्र के साथ इंगलिस्तान जा रहे थे। उनके इस मित्र को दूरबीन देखने का बड़ा शौक था और उसके पास दो बहुमूल्य दूरबीनें थीं। मार्ग में दोनों के बीच इन पर खूब वादविवाद चला। गांधी जी का मत था कि ये वस्तुएं सादगी के आदर्श के प्रतिकूल हैं। अन्ततः एक दिन बात बढ़ गई और महात्मा जी ने अपने मित्र से कहा, "भई, हमारे बीच इस बात पर झगड़ा रहता है, अच्छा यही होगा कि इन दूरबीनों को सागर की भेंट कर दें"।

उनका यह कहना था कि उनके मित्र ने दूरबीनें समन्दर में फैंक दी जिनका मूल्य सात पौंड था। उनके जीवन की सादगी का यही प्रमाण पर्याप्त है कि उन्होंने आजीवन शुद्ध खादी का प्रचार किया और चर्खा कातने पर बल दिया। काश। हम भारतीय उनके कहे पर चलते और स्वदेशी वस्तुओं से प्रेम करते तो भारत को स्वतंत्रता-प्राप्ति में भी इतनी देर नहीं लगती और स्वतंत्र होने के बाद तो भारत की दशा ही और होती। गांधी जी जहां वेशभूषा में सादगी और शुद्धता के कायल थे, वहां खानपान में भी वे बहुत सावधानी बरतते थे। उनके माता-पिता एक वैश्नव परिवार से संबंध रखते थे। जब गांधी जी को इंग्लैंड भेजा गया तो उनकी माता ने उनसे प्रण लिया कि वहां जाकर वे मांस का सेवन नहीं करेंगे और न ही पर स्त्री की ओर दखेंगे। अपनी माता को दिए प्रण को उन्होंने अक्षरशः निभाया। यद्यपि ऐसा करने में उन्हें अनेक कष्ट उठाने पड़े। वे प्राकृतिक जीवन जीने में विश्वास करते थे। उन्हें मांसाहार से स्वभावतः घृणा थी। वे लिखते हैं "प्रकृति से तादात्म्य प्राप्त करने के लिए जितने प्रयोग एवं त्याग किये जाएं कम हैं। किन्तु खेद है कि आजकल उल्टी गंगा बहती है। हमें तनिक भी लज्जा नहीं अनुभव होती कि हम इस नाशवान शरीर को संवारते तथा सजाते हैं और जीवन के चन्द क्षण बढ़ाने के लिए हज़ारों जानों का खून भी करते हैं। इसका परिणाम हमारा शारीरिक तथा आत्मिक वध है। एक रोग को दूर करने के लिए हम सैंकड़ों अन्य रोग मोल लेते हैं। ऐन्द्रिक-आनन्द की प्राप्ति की चिन्ता में एक दिन आनन्द प्राप्ति की क्षमता ही खो बैठते हैं। ये तमाशे दिन प्रतिदिन हमारी आंखों के सामने घटते हैं किन्तु जो देखना न चाहे, उससे बढ़कर अंधा कोई नहीं"। उनमें न केवल सादगी ही कूट-कूट कर भरी थी बल्कि वे मानवता तथा आध्यात्मिकता की भी प्रतिमूर्ति थे। गीता, कुरान से उन्हें स्वभावतः प्रेम था। जब हम उनका वह फोटो देखते हैं जिसमें वे अपने हाथ में गीता की पुस्तक लिए खड़े हैं तो हमें उनकी आध्यात्मिकता के साक्षात् एवं स्पष्ट दर्शन होते हैं। उनका कोई भी कार्य ईश्वर-इच्छा एवं आदेश के बिना नहीं होता था। वे अपना हर पग सोच विचार कर और परमात्मा से आन्तरिक रूप से आज्ञा लेकर ही उठाते थे। वे सदा आत्मा की आवाज़ का अनुकरण तथा अनुसरण करते थे। इन बातों से प्रकट होता है कि वे कोई

साधारण मानव नहीं थे। अपितु कुछ लोग तो उन्हें केवल इसलिए अवतार मानते हैं कि उनके अधिकतर कार्य साधारण मनुष्य की शक्ति तथा बूते से बाहर होते थे। उनकी ब्रत-फलासफी उनके आध्यात्मिक रूप से ऊंचा उठ जाने को प्रमाणित करती है। उनके ब्रत-दर्शन ने उन्हें सदैव विजयी बनाया। जब कभी उनकी आत्मा के विरूद्ध कोई कार्य होता था तो उसका प्रायश्चित करने के लिए वे ब्रत रख लेते। जब कभी ब्रत के विषय में उनसे पूछा जाता तो वे कहते, "ईश्वर-इच्छा पूरी होकर रहेगी" इससे यह प्रमाणित होता है कि ईश्वर पर उनका अटूट और सच्चा विश्वास था। वे भगवान राम के इतने बड़े भक्त थे कि हर क्षण उनकी ज़बान पर राम का ही नाम रहता था। यहां तक कि अंतिम क्षण भी उनकी ज़बान पर "हे राम — हे राम" के सिवा अन्य कोई शब्द नहीं आ पाया। एक स्थान पर वे लिखते हैं, "मैंने पैरिस के सौंदर्य और वैभव के अनेक आख्यान पढ़े थे। ये वस्तुएं हर सड़क पर दिखाई पड़ती थीं लेकिन गिरजे इन दृश्यों से अलग थलग दूसरी ही शान से खड़े थे। जब भी मनुष्य किसी गिरजे में दाखिल हुआ, वह भूल जाता था कि बाहर कितना कोलाहल है। उसका व्यवहार ही बदल जाता था और जब वह किसी मनुष्य के पास से गुजरता था जो कंवारी की प्रतिमा के आगे घुटनों के बल झुका हो तो उसके हावभाव में गाम्भीर्य और श्रद्धा भर जाती थी। मुझे जो अनुभूति उस समय थी, वह और गहरी होती जाती है कि यह आदर और अर्चना केवल अंध-विश्वास नहीं था, और वे लोग जो कंवारी की प्रतिमा के आगे घुटनों के बल झुके हुए थे, उनके हृदय में सच्ची श्रद्धा का सागर उमड़ रहा था और वे पाषाण को नहीं बल्कि ईश्वरीय सत्ता को पूज रहे थे जिसका जलवा उन्हें इसमें नज़र आता था। मुझे यह विचार आता था कि इस पूजा अर्चना से वे परमात्मा की आभा-प्रभा को घटा नहीं रहे बल्कि बढ़ा रहे हैं"। ये कतिपय उदाहरण तो उनकी आध्यात्मिकता को प्रकट करने के लिए दिए गए हैं किन्तु राजनीतिक दृष्टि से भी वे एक महान राजनीतिज्ञ थे। प्रायः लोगों को यह कहते सुना गया है कि महात्मा गांधी एक सन्त और फकीर थे और राजनीति में वे असफल रहे किन्तु मैं ऐसा नहीं मानता। राजनीति का अर्थ केवल झूठ, चालाकी या धोखा देना नहीं। उनकी राजनीति धर्म तथा नैतिक-मूल्यों पर आधृत थी। गांधी जी की राजनीति की सफलता का यह प्रमाण है कि हम बिना हिंसा का प्रयोग किए अंग्रेजों जैसी साम्राजी-शक्ति से लोहा ले पाए और अपने देश को स्वतंत्र कराने में सफल हुए। जो भी देश स्वतंत्र हुआ, उसे स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए खून की होली खेलनी पड़ी किन्तु भारत ही एक ऐसा देश है जिसने स्वतंत्रता के लिए कोई हिसांत्मक युद्ध नहीं लड़ा और शांतिमय तरीके से आज़ादी प्राप्त की। यह ठीक है कि देश का विभाजन हुआ और साम्प्रदायिक दंगे हुए किन्तु इसमें हमारा दोष हैं, गांधी जी का नहीं। हमने उनकी बात पर कान नहीं धरे और परिणाम स्वरूप उसका कटु फल चखा। गांधी जी ने इन दंगों के विरूद्ध कत्ल होने से कुछ ही दिन पूर्व मरण-व्रत रखा और अपनी जान की बाज़ी लगाई।

महात्मा जी के अहिंसा और सत्य के सिद्धांत ने संसार में एक कीर्तिमान स्थापित किया। यही कारण है कि उनकी मृत्यु पर न केवल भारतवासी ही रोए बल्कि संसार के प्रत्येक देश में उनका सोक मनाया गया और सभी देशों में उनके सम्मान में झण्डे झुका दिए गए। गांधी जी ने एक नया प्रयोग किया और वे इस प्रयोग में सफल भी हुए। उनका यह प्रयोग एक अनोखा तथा अद्वितीय प्रयोग था। राजनीति के क्षेत्र में सत्य और अहिंसा के सिद्धांत इतिहास में पहली बार आज़माए गए।

किसी ने कभी स्वपत्र में भी नहीं देखा था कि वह महापुरूष जिसने सारा जीवन सत्य और अहिंसा के प्रचार तथा प्रयोग में लगा दिया, वहीं सिंहा का आखेट बनेगा और अपने दिल में अरमान लिए देश तथा मानव जाति के लिए एक तड़प संजोए इस प्रकार संसार से चला जाएगा। भारतीयों के मन में उनके प्रति कितना आदर तथा श्रद्धा थी, इसका अनुमान लगा पाना कठिन है उनकी मृत्यु का समाचार सुनकर कौन है जो फूट-फूट कर न रोया हो। हर हृदय चीत्कार कर उठा। हमने अपने बापू को स्वयं गोली मारी। हम ही अपने राष्ट्रपिता के कातिल बनें। हम ही इस जघन्य पाप के उत्तरदायी हैं। इतिहास हमें कभी क्षमा नहीं करेगा। इस पाप का फल हम भुगत रहे हैं और भोगते रहेंगे। इससे बच नहीं सकते।

जनवरी, 1948 में मैं महम में था। गांधी जी की मृत्यु का समाचार जब वहां पहुंचा तो लोग स्तब्ध रह गए और बाज़ारों में निकल आए तथा उनकी दुखद मौत पर चर्चा करने लगे। किसी ने यह खबर फैला दी कि गांधी जी को पाकिस्तान से आए किसी शरणार्थी ने ही कत्ल किया है। इस से लोगों में उत्तेजना फैल गई और मैंने एक जाट को कहते सुना कि यदि कातिल उसके सामने आ जाए, तो वह उसे गोली से उड़ा देगा।

यह सुनकर मैं तो भयभीत हो गया और परमात्मा से प्रार्थना करने लगा कि यह खबर असत्य हो और शरणार्थियों के माथे इस जघन्य पाप का दाग न लगे ईश्वर ने मेरी प्रार्थना सुन ली और गांधी जी का कातिल एक महाराष्ट्रवासी निकला। एक भारतीय होने के नाते मेरा सर आज भी शर्म से झुका है और मेरी आत्मा मुझको बार-बार कोसती है कि हम सब इस पाप के उत्तरदायी हैं। सारा राष्ट्र गांधी जी का कातिल है। हम ही वे अकृतज्ञ लोग हैं जिन्होंने अपने राष्ट्रपिता का वध अपने हाथों किया। प्रत्येक भारतीय इस पाप में शामिल हैं और इसका उत्तरदायी है।

हम दावा करते आए हैं कि देवता भी भारत-भूमि पर जन्म लेने में गर्व अनुभव करते हैं! आज वही भारत-भूमि घृणा तथा विद्वेष का घर बन चुकी थी। हम किसी को मुंह दिखाने के योग्य नहीं रहे थे। अपने पिता को उसके अपने ही एक पुत्र ने गोली का निशाना बनाया था। एक मच्छली सारे जल को गंदा कर देती है। कातिल ने सारे राष्ट्र का सर नीचा कर दिया। हमारी सभ्यता और संस्कृति को बट्टा लगा दिया। हमारे लिए अब अपनी उच्च और गौरवशाली परम्पराओं पर अभिमान करने का कोई कारण शेष न रहा। आने वाली संतति हमें दोषी ठहराएगी और हम पर थूकेगी। हमारे सर सदा के लिए झुक गए हैं।

समय है कि हम अपने पाप का प्रायश्चित करें और गांधी जी के रास्ते पर चलकर अपने आचार, विचार को ऊंचा उठाएं। उनके उपदेशों और शिक्षाओं पर अमल करें। राष्ट्रपिता के भक्त होने के योग्य अपने आपको बनाएं। इसी प्रकार ही गांधी जी की आत्मा को शान्ति मिल सकती है। देश का कल्याण इसी में निहित है। हमें आत्मनिरीक्षण तथा आत्मावलोकन करना है। ■

20/30, मोती नगर, नई दिल्ली-15

नरेन्द्र जी : यादों के दर्पण में

—रिफअत सरोश

आज कल तो "इपटा" का नाम जाना पहचाना है। इन्डियन पीपल्स थियेटर " के नाम ये यह संस्था लगभग पचास साल पहले शुरू की गई थी और इस का सम्बन्ध कम्युनिस्ट पार्टी के सांस्कृतिक विभाग से था। अब तो इपटा का बहुत विस्तार हो गया है। इपटा में क्या, स्वयं कम्युनिस्ट पार्टी में इतनी तब्दीलियां आई हैं कि पुरानी शक्ल की कल्पना ही की जा सकती हैं।" खैर—यह अलग और विवाद का विषय हैं।

"इपटा" (क्लचरल स्कवार्ड) नामक संस्था को बैन कर दिया गया था। यह कम्युनिस्ट पार्टी से सीधी जुड़ी हुई संस्था थी और इसका कार्यालय अंधीरी (पूर्व) मोहन रोड की पांच नम्बर की कोठी में था।

इस भूमिका की आवश्यकता इसलिये पड़ी कि मैंने सब से पहले पं० नरेन्द्र शर्मा को "काऊसजी जहांगीर हाल बम्बई में" कल्चरल स्कवार्ड के एक कार्यक्रम का संचालन करते देखा। यह 1945 की बात है। यह सांस्कृतिक कार्यक्रम था। इस कार्यक्रम में ही मैं ने प्रेम धवन को देखा—जो नाच-नाच कर अपना जोशीला गीत सुना रहे थे। प्रेम धवन (आज फिल्म जगत के विख्यात गीतकार) क० पार्टी के" कुल वक्ती मिमबर थे। और वहां अन्य बहुत से गायक और गीतकार मौजूद थे।

हाल खचाखच भरा हुआ, और मंच के पीछे से संचालक की आवाज़ आती थी। जंची-तुली आजाज़-शान्त भाव, ठैराव, सुरीले शब्द और बात से बात पैदा करने का ऐसा अनोख अंदाज कि जैसे पूरे विविध-कार्यक्रम को एक में पिरो दिया गया हो। और यह तो कहने की आवश्यकता नहीं कि नाच—गाने का वह कार्यक्रम केवल मनोरंजन के लिये नहीं था, बल्कि साम्राज्य की दीवार पर चोट लगाने के लिए था, आजादी की शमा की ज्योति बढ़ाने के लिये था। संचालक महादेय की आवाज़ आती थी तो महसूस होता था कि आज़ादी की मशाल और ऊंची हो गई। एक जोश था उनके शब्दों में—मेरे कानों में आज भी वह गम्भीर तथा जोशीली आवाज़ गूंज रही हैं—और यह मुझे बाद में मालूम हुआ कि उस कार्यक्रम का संचालन पं० नरेन्द्र शर्मा कर रहे थे।

मैं शुरू से ही प्रगतिशील विचारों का आदमी था। नरेन्द्र जी का सम्मान मेरे दिल में उसी दिन से घर कर गया। उनके निकट आने का सौभाग्य बहुत बाद में प्राप्त हुआ। उन्हीं दिनों मैंने आल इन्डिया रेडियो (अब आकाशवाणी) बम्बई के हिन्दुस्तानी विभाग में नौकरी कर ली थी। यह वह ज़माना था जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने कुछ मतभेदों के कारण आल इन्डिया रेडिया के कार्यक्रमों में भाग लेने का निश्चय किया था। आज़ादी से जो चार लोग हमारे हिन्दुस्तानी सैक्शन में (जो बाद में हिन्दी विभाग हो गया) काव्य पाठ करने या वार्ताओं के लिये आते थे, उनमें उल्लेखनीय थे गोपाल सिंह नैपाली, जो फिल्मों में गीत लिखते थे, और डा० मोती चन्द्र तथा रनछोड़ लाल ज्ञानी, ये दोनों "प्रिन्स ऑफ वेल्ज़ म्यूज़ियम" के अधिकारी थे और प्रसिद्ध लेखक भी थे।

देश के स्वतंत्र होने के पश्चात यह बन्द टूटा, और हम हिन्दुस्तानी / हिन्दी विभाग वालों ने हिन्दी के लेखकों, कवियों और कहानीकारों को बम्बई के कोने कोने से ढूंढकर निकाला और उन्हें आमन्त्रित किया। इस समय जो नाम याद आ रहे है वह है धर्म युग के सत्यकाम विधा लंकार, विरेन्द्र, कुमार जैन, किशोरी रमन टन्डन, नवनीत के सम्पादक रतन लाल जोशी, सी० एल० प्रभात, शशी शेखर नैथानी, भीष्म साहनी, आदि। पं० नरेन्द्र शर्मा बड़ी मुश्किल से आये। वे फिल्मों में लिखते थे, और उस समय हिन्दी कवियों की उस पक्ति में थे जिसमें पंत जी, निराला, बच्चन, के नाम आते है। उनके "प्रवासी के गीत" अपनी पहचान बना चुके थे। "आज के पिछड़े न जाने कब मिलेंगे"

नरेन्द्र जी कविता पाठ के लिये आने लगे, फिर उन्होंने एक सुन्दर-रूपक लिखा—"चान्द मेरा साथी"

मैंने जब नरेन्द्र जी को करीब से देखा तो उन का रख-रखाव, बेतकल्लुफ, न होते हुये एक नज़दीकी, बातों की मिठास, उन का शान्त भाव में रचा हुआ मुस्कुराता हुआ चेहरा, साफ सुथरा लिबास—ज्यादातर—सिल्क का कुर्ता—और सफेद पजामा या धोती, गोरा चिट्टा रंग, आवाज़ में ठहराव—कुल मिलाकर नरेन्द्र जी का व्यक्तित्व प्रतिभाशाली था। हम लोगों ने एक कार्यक्रम का आयोजन किया—"कवि और कलाकार" फिल्म जगत से प्रसिद्ध संगीतकारों, कवियों और गायकों को आमन्त्रित किया। नरेन्द्र जी का एक गीत अनिल बिस्वास के संगीत निर्देशन में लता मंगेशकर ने गाया

"युग की सन्ध्या, कृपक वधु सी,
किस का पंथ निहार रही।

अपनी तरह का यह पहला प्रोग्राम था। इस प्रोग्राम में तीन-चार कवि तथा शायर और थे—सब के गीत या गजलें चलती हुई फिल्मी किस्म की थीं—नरेन्द्र जी का साहित्यिक पुट लिये हुये यह गीत अलग ही था। समय गुजरा। आकाशवाणी में एक भारी परिवर्तन आया। डाक्टर केसकर, सूचना तथा प्रसारण मंत्री ने रेडियो को फिल्मी गीतों के भंवर से निकालना चाहा, और मुख्य केन्द्रों पर प्रसार गीत विभाग स्थापित किये गये, और प्रसार गीतों की प्रस्तुति हिन्दी के जाने माने कवियों को सौंपी गई। प्रसार गीतों की धुनें तो बनाते थे संगीतकार, परन्तु गीतों का चयन, कवियों की जिम्मेदारी थी, साथ ही यह भी देखना था कि धुन गीत की आत्का को कुचल न दे। इस योजना के अंतर्गत बड़े वेतन पर बड़े कवियों को रखा गया। लखनऊ में इला चन्द जोशी, इलाहाबाद में पंत जी और बच्चनजी, दिल्ली में उदय शंकर भट्ट, और बम्बई केन्द्र के स्टाफ में आ गये नरेन्द्र जी। इस योजना का और भी विस्तार हुआ और अन्य कार्यक्रमों के लिये भी उच्च कोटि के कवि तथा लेखक स्टाफ में रक्खे गये—परन्तु इस समय हमारा सरोकार नरेन्द्र जी से है।

जब पं० नरेन्द्र शर्मा, जो फिल्म जगत में "नाचो नाचो रे मन के मोर" जैसे सुन्दर गीतों की रचना कर चुके थे, आकाशवाणी, बम्बई में हिन्दी में प्रसार गीत प्रोड्यूसर के पद पर आये तो एक खुशी की लहर दौड़ गई सब के मन में। मैं हिन्दी सैक्शन में 1945 से मुलाज़िम था। (और 1984 को रिटायर हुआ) नरेन्द्र जी के साथ काम करके खूब आनन्द आया। वे बड़े से बड़े अफसर से उसी तरह बात करते थे जैसे अपने विभाग के छोटे कर्मचारियों के साथ करते थे। यूं डा० केसकर और डायरेक्टर जर्नल,

जगदीश चन्द्र माथुर उन के पुराने मित्रों में थे। नरेन्द्र जी के काम करने का ढंग निराला था। उन्होंने अपने मन में ऐसी योजना बनाई थी कि एक सप्ताह में एक गाना रिकार्ड हो जाता था। और गायक और संगीत निर्देशक संगीत जगत के ही लोग होते थे। सरल शुद्ध हिन्दी के गानों का स्वाद चक्खा श्रोताओं ने। मैं औरों की बात नहीं कहता, मगर नरेन्द्र जी ने जिस तनमनयता से गाने तैयार कराये वह उनका ही हिस्सा था। कवि होने के अतिरिक्त उन का फिल्मी अनुभव उन के काम आया। बहुत से कवि तो रेडियो की यह नौकरी छोड़ भागे, मगर नरेन्द्र जी ने अपने काम को, हिन्दी भाषा के प्रचार तथा राष्ट्र हित के लिये किया, और इस चेतावनी के तौर पर स्वीकार करके आकाशवाणी में अपनी अमिट छाप छोड़ी।

नरेन्द्र जी ने आकाशवाणी की गिरती साख को संभाला। यह बड़ी सुखद कहानी है सब जानते है कि पांचवे दशक में "रेडियो सीलोन" भारत के घर-घर में विशेष कर नव-युवक "रेडियो सीलोन" सुनते थे। चटपटे फिल्मी गाने तथा हल्के-फुलके नाटक। बहुत सोच-विचार के बाद आकाशवाणी के डायरेक्टर जर्नल जगदीश चन्द्र माथुर के आग्रह पर नरेन्द्र जी ने "विविध भारती" की योजना बनाई। अंग्रेजी में उस का नाम था "आल इन्डिया रेडियो" वैरायटी प्रोग्राम (ए०आई०वी०पी०)/हिन्दी में नरेन्द्र जी ने उसे "विविध भारती" नाम दिया। अब अंग्रेजी वाला नाम कोई जानता भी नहीं। 1957 के शुरु में इस विभाग का खाका तैयार हुआ। पं० नरेन्द्र शर्मा चीफ प्रोड्यूसर नियुक्त किये गये और यू०पी० के मुख्य मंत्री के बेटे सर्वदानन्द वर्मा सहायक प्रोड्युसर। वह सिर्फ पद के लिये थे। ऐसा आकाशवाणी में अकसर होता है। कार्य भार संभालने के लिए और नरेन्द्र जी की योजना को साकार करने के लिये आकाशवाणी के तीन केन्द्रों से ऐसे असिस्टेन्ट प्रोड्यूसर चुने गये जो घिसे-पिटे पुराने काम-काजी लोग थे और जो सरल भाषा लिख सकते थे। अपनी इस टीम का चयन नरेन्द्र जी ने खुद किया। दिल्ली से सत्येन्द्रशरत और बी० एस० भटनागर, नागपुर से भृंग तपकरी और बम्बई से मैं। एक संकट का समय था। आकाशवाणी के पास नये कार्यक्रम प्रस्तुत करने के लिए पैसा न था। योजना बनी कि आकाशवाणी के सभी केन्द्र अपने-अपने पूर्व प्रसारित कार्यक्रमों की टेप कापियां भेज दें, और फिर हम चारों—नरेन्द्र जी की देख-रेख में उस पुराने माल को कांट-छांट कर नया प्रोग्राम ऐसा बनायें जो सुनने वालों को पसन्द आयें। बम्बई केन्द्र पर इस काम के लिये कोई स्टूडियो न था। वरली में ट्रांसमीटर के साथ एक अधूरा स्टूडियो था—काम चलाऊ। उसमें बहुत ही कम सुविधा थी। नरेन्द्र जी ने हम चारों से अपनी धीमी और ठहरी हुई आवाज में मुस्कुराते हुए कहा कि किसी तरह एक स्टूडियो को आप चारों शिफ्टों में बांट लें। सुबह सात बजे से रात ग्यारह बजे तक यहां काम हो। यह हमारे लिये चुनौती है। आप समझें कि आप के लिये न कोई छुट्टी का दिन है, न सैर-सपाटे के लिये समय, दिन रात मेहनत करके अपना-अपना नया कार्यक्रम बनाना है। हम सब ने नरेन्द्र जी को विश्वास दिलाया कि हमें यह चुनौती स्वीकार है। कोई ओर होता तो इस पाबन्दी को कबूल करने का सवाल ही न था कि बारह घन्टे काम करो, रविवार को भी काम करो। मगर बात थी नरेन्द्र जी की। उन का स्नेह था, उन का हम पर विश्वास था—जिसने हम सब में अनथक काम करने की शक्ति पैदा कर दी। उन की तरफ से हमें पूरी आज़ादी थी। कोई अंकुश न था। हम ने गुदड़ियों में से लाल निकाले। दस टेप सुनते थे तो एक आध काम की चीज मिलती थी। पहली जुलाई 57 को प्रोग्राम शुरू होना था। पं० नरेन्द्र शर्मा ने यह तारीख टाल दी। वे ज्योतिषी भी थे। उन्होंने अधिकारियों से कहा कि 3 अक्तूबर को विविध भारती का प्रथम कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाना चाहिए। अब उनकी बात कौन टालता। आठ घंटे रोज का प्रोग्राम—और एक ही समय पर आकाशवाणी बम्बई तथा मद्रास से प्रसारित होना था। यानि कार्यक्रम कुछ दिन पहले तैयार हो। बम्बई से मद्रास टेप जाने है, फिर कोई बीमार पड़ गया तो क्या होगा। एक सप्ताह के कार्यक्रम तीन अक्तूबर 57 से पहले तैयार कर लिये ये—हर प्रकार के कार्यक्रम—वन्दन वार—भजन और नातों का प्रोग्राम—स्वर-संगम—वाल बाद्य। संगीत—का प्रोग्राम—मन्जूबा" " " अन्य रदेशों के लोक संगीत का कार्यक्रम—व्याख्या सहित, पत्रावली—पत्रों के उत्तर का प्रोग्राम" गजरा—गज़लों और नगमों का कार्यक्रम—हवा महल—नाटिकाओं का कार्यक्रम-यह चन्द नाम याद आ गये" सब नाम नरेन्द्र जी ने रखे—और आज तक चल रहे हैं। और कर्नाटक संगीत का प्रोग्राम अलग। मज़े की बात यह है कि आरम्भ में फिल्मी संगीत को कोई भी प्रोग्राम विविध भारती में नहीं रखा गया। मुकाबला था रेडियो सेलून की मकबूलियत से। मुकाबला हुआ। पहले दिन हमारे प्रोग्राम का कुछ हिस्सा हवा में काट दिया गया। इस पर हमारे इन्जीनियरों ने काबू पाया। और वह प्रोग्राम जो केवल एक वर्ष के तजरबे के तौर पर शुरू किया गया था, उसने ठाठ से अपनी पहली वर्ष गांठ मनाई। नरेन्द्र जी जिन्दाबाद। अब अधिकारियों को अफ्सरी करने की सूझी। रेडियो सीलोन का ज़ोर तो हम तोड़ ही चुके थे। तजरबा कामयाब हुआ तो मंत्रालय ने विविध भारती को अपनी छत्र-छाया में दिल्ली बुला लिया। हम सब-भृग-तुपकरी को छोड़कर-नरेन्द्र जी के स्नेह के दामन से बंधे दिल्ली आ गये। बम्बई से चलते समय एक महीने के प्रोग्राम एंडवास बना दिए थे, ताकि इस उलट फेर का असर विविध-भारती पर न पड़े। यहां फिर नया कुंवा खोदा तब पानी पिया। हमारे हज़ारों टेप अंधा धुंध कवाड़ी के सामान की तरह बोरियों में भर माल-गाड़ी से लाये गये। किसी न किसी तरह इस मुश्किल से गुजरे। अब प्रोग्राम आकाशवाणी के अन्य केन्द्रों से भी प्रसारित किया जाने लगा।

यहां बड़ा स्टूटियो मिला। बैठने के लिये एक कमरे की जगह कई कमरों का दफतर मिला। परन्तु विविध भारती की आत्मा बम्बई ही छोड़ आये। यहां तो ढांचा आया। अब बने-बनाये ढांचे में सामान भरते रहो। निकालते रहो। उच्च अधिकारियों के प्रबंध की रस्सी हमारी गर्दनों को कसने लगी तो हम भी अपनी गर्दन बचाकर काम करने लगे। नरेन्द्र जी ने भी यहां आकर दुखी हो गये थे मगर, समझ से काम लेते थे। हम चारों से नरेन्द्र जी ने वादा किया था कि प्रोग्राम जम गया तो उन्नति आप की ही होगी। मगर सब कुछ उल्टा-पुलटा हो गया। उच्चतम अधिकारियों के चहीते, जिन्हें विविध भारती की क-ख भी न मालूम थी-हमारे सरों पर अफ्सरी करने के लिये आ धमके। एक केन्द्र निर्देशक को मीमो जारी करने का बड़ा शौक था। अब कागज़-बाजी शुरू हुई तो मैंने नरेन्द्र जी से कहा—वे मंदमंद मुस्कारा कर बोले। "रिफ्फत जी! पतझड़ का मौसम है झड़ने दो" अगर पत्तियां झड़ रही हैं"। और कुछ साल बाद नरेन्द्र जी आकाशवाणी से अवकाश प्राप्त करके बम्बई चले गये, मगर अपना लगाया हुआ पौधा विविध भारती यहीं छोड़ गये जो आज घना वृक्ष बन चुका हैं। आज भी विविध भारती-आकाशवाणी की नाक का बाल हैं—और आकाशवाणी को यह सम्मान दिलाने वाले हैं नरेन्द्र जी—पं० नरेन्द्र शर्मा।

शेषांश पृष्ठ 46 पर

आचार्य कृष्ण बिहारी मिश्र :
एक संक्षिप्त परिचय

—कृष्ण बिहारी मिश्र

पं॰ कृष्ण बिहारी मिश्र का जन्म जिला सीतापुर की सिधौली तहसील की गंधौलीग्राम में हुआ। जिस परिवार में उनका जन्म हुआ वह श्रेष्ठ साहित्यिक परम्पराओं के लिए विख्यात था। इनके पितामह श्री नंदकिशोर मिश्र 'लेखराज' का 'गंगामरण' शीर्षक अलंकार ग्रन्थ अत्यन्त प्रसिद्ध है। इनके चाचा पं॰ युगुल किशोर मिश्र 'वृजराज' ब्रजभाषा के उच्च कोटि के कवि थे। उन्होंने गंधौली में एक अच्छा पुस्तकालय भी स्थापित किया जिसमें रीतिकालीन कवियों की रचनाओं का अच्छा संग्रह था। पं॰ कृष्ण बिहारी जी ने पिता पं॰ रसिक बिहारी मिश्र भी एक सुकवि और रीतिशास्त्र के मर्मज्ञ थे।

पूर्वजों की इस प्रकांड विद्वता और मार्मिक सहदयता का उत्तराधिकार कृष्णबिहारी जी को मिला।

मिश्र जी का जन्म श्रावण कृष्ण षष्ठी, संवत् 1987 में हुआ। आपने लखनऊ के कैनिंग कालेज से बी॰ ए॰ और ला कालेज प्रयाग से एल॰ एल॰ बी॰ की उपाधि प्राप्त की। कुछ दिन आपने सीतापुर में वकालत की परन्तु उसमें आपका मन नहीं लगा। सन् 1922 में आप वकालत छोड़कर के प्रसिद्ध पत्र 'आज' में चले गए और एक वर्ष तक उसके सम्पादकीय विभाग में रहे।

वैसे छात्रावस्था से ही इन्होंने कलकत्ते से निकलने वाले 'सम्राट' पत्र में लिखना प्रारम्भ कर दिया था। फिर 'मर्यादा', 'इन्दु' और 'आग' आदि उस समय भी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में आपकी कविताएं, लेख आदि प्रकाशित हुए। उसी समय आपने 'चीन का इतिहास' लिखा और अपने पितामह लेखराज जी के 'गंगामरण' ग्रंथ का सम्पादन किया। इसी बीच आपने कई अंग्रेजी लेखकों की रचनाओं के अनुवाद भी किए तथा एक अंग्रेजी ग्रंथ का भी 'प्रेमीप्रहार' शीर्षक से अनुवाद किया।

'आज' में कार्य करने के कुछ समय बाद आपने उस समय चल रहे साहित्यिक विवाद के लेख 'देव और बिहारी' पुस्तक लिखी। मिश्रबंधुओं ने अपने 'नवरत्न' में देव को बिहारी से श्रेष्ठतर कवि घोषित किया था जिसका विरोध प॰ पक्ष्म् सिंह शर्मा और लाला भगवानदीन आदि कुछ लेखकों ने किया था। कृष्ण बिहारी जी ने अपने इस विद्वतापूर्ण आलोचना ग्रंथ में मिश्रबन्धुओं का जोरदार समर्थन किया। आचार्य रामचन्द्र शुल्क जैसे कवि को भी मिश्र जी की लेखनी का लोहा मानना पड़ा। उन्होंने अपने इतिहास में लिखाः—

"इस पुस्तक में बड़ी शिष्टता, सभ्यता और मार्मिकता के साथ दोनों बड़े कवियों की भिन्न-2 रचनाओं का मिलान किया गया है। इसमें जो बातें कही गई हैं वे बहुत कुछ साहित्यिक विवेचन के साथ कही गई हैं यों ही नहीं दी गई है। यह पुरानी परिपाटी से साहित्य समीक्षा के अन्तर्गत अच्छा स्थान पाने योग्य है।" (आचार्य शुक्ल का हिन्दी साहित्य का इतिहास)

1924 में आपने लखनऊ से निकलने वाली उस समय की श्रेष्ठ पत्रिका 'माधुरी' का सम्पादन कार्य स्वीकार कर लिया। आप और 'उपन्यास सम्राट' प्रेमचन्द जी दोनों ही इस पत्रिका के कई वर्ष तक सम्पादक रहे। इस पत्रिका के साधारण अंक भी अत्यन्त उच्चकोटि के होते थे, विशेषांको का तो कहना ही क्या? यह 'सरस्वती' और 'चांद' जैसी पत्रिकाओं से टक्कर लेती थी। इस पत्रिका से हिन्दी साहित्य को अनुपम समृद्धि प्राप्त हुई।

'माधुरी' में काम करते हुए मिश्र जी ने निजी कर्म से 'साहित्य समालोचक' शीर्षक से एक त्रैमासिक पत्र निकाला जो बाद में द्वैमासिक हो गया। साहित्य समीक्षा के क्षेत्र में इस पत्र का योगदान अविस्मरणीय है। इसमे निराला जी, डा॰ वासुदेव शरण अग्रवाल, लाला भगवान दीन, प॰ श्याम सुन्दर दास आदि मनीषी अपने लेख भेजते थे। इसके साथ ही इस पत्र के 'परिशिष्ट' रुप में प्रत्येक अंक के साथ रीति काल के उसी श्रेष्ठ कवि की एक पुस्तक भी पाठकों को मिलती थी। इस प्रकार कितने ही रीति ग्रन्थ उपलब्ध हो सकें। अपने विषय का यह अद्वितीय पत्र था। निरन्तर आर्थिक घाटे के कारण यह पत्र बन्द हो गया। मिश्र जी ने अपनी सारी कमाई का एक बड़ा अंश इस पत्र के द्वारा साहित्य सेवा में भेंट कर दिया।

1932-33 में माधुरी से त्याग पत्र देकर घर चले आए। इसके बाद आपने 'मतिराम ग्रन्थावली' का सम्पादन किया। इसकी विद्वतापूर्ण भूमिका अपने में एक ऐसी पुस्तक है जिसमें मिश्र जी की प्रतिमा और साहित्य-समीक्षा का श्रेष्ठ रूप हमारे सामने आता है। पर आलोचना केवल व्याख्या नहीं है, उसमें आलोचक कवि की अन्तःप्रवृतियों का मार्मिक उद्घाटन भी होता है। और तत्कालीन अन्य कवियों से तुलना कर उसकी श्रेष्ठता को निरूपित करता है। काव्य भाषा के मूल्यांकन के लिए मिश्र जी ने इस भूमिका में बड़े ही उपयुक्त मानदण्डों की स्थापना की है।

हिन्दी के अनेक पुराने कवियों पर मिश्र जी ने निबन्ध लिखे जिन्हें समीक्षा साहित्य का आधार स्तम्भ माना जा सकता है।

इसके पश्चात् सीतामऊ राज्य जाकर आपने वहां के राजा के अनुरोध पर 'नरनागर विनोद' और 'मोहन विनोद' ग्रथों का सम्पादन किया। मिश्र जी एक श्रेष्ठ वक्ता भी थे। पुस्तकालय के वार्षिकोत्सव पर सहित्य परिषद् के अध्यक्ष पद से दिये गये उनके भाषण का उल्लेख स्वयं बाबू श्यामसुन्दर दास जी ने अपने 'साहित्यालोचन नामक ग्रंथ में किया था।

अवधी के श्रेष्ठ कवि स्वर्गीय पं॰ बन्शीधर शुक्ल के अभिनन्दन समारोह के अवसर पर उस उत्सव के अध्यक्ष पद से आपने जो सारगर्भित व्याख्यान दिया था उसे आपकी विद्वता और लोकभाषा प्रेम का अनुपम उदाहरण माना जा सकता है। सन् 1969 में पूज्यवर आचार्य का स्वर्गवास हो गया।

चरित्र की दृष्टि से वे एक अत्यन्त सरल, विनम्र और निराभ्मान व्यक्त थे। परन्तु अपने सिद्धान्तो पर अटल रहने वाले और कर्तव्य निष्ठ गृहस्थ के रुप में जीवन निर्वाह करने वाले व्यक्ति थे। वे गौर वर्ण और मंझोले कद के थे। उनकी पोशाक धोती और बंद गले का कोट था। जिस पर वे सफेद या काली टोपी लगाते थे। वे हंसोड़ प्रकृति के विनोदी जीव थे और उनमें हाजिर जवाबी का भी गुण था। एक बार बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर

ने पद्माकर कर से अपनी तुलना करते हुये कहा वे परमाकर थे और मैं रत्नाकर हूं तो पण्डित जी ने तुरन्त उत्तर दिया आप ठीक कहते हैं वे पद्माकर थे पर आप रत्नाकर हैं। पण्डित जी का आशय यह था कि उनके काव्य में सब प्रफुल्लित पद्म ही हैं और आपके काव्य में यदि कुछ मोती हैं तो बहुत से संख और घोंघे भी मरे हुये हैं।

पण्डित जी तुलनात्मक समालोचना के धुरन्धर आचार्य और एक सहृदय सहित्यकार थे जिन्होंने हिन्दी समीक्षा में अपनी प्रतिभा से एक सम्मान्नीय स्थान प्राप्त किया। ■

फ्लैट नं० 2, साक्षर अपार्टमेन्ट, ए-3 पश्चिम बिहार-नई दिल्ली

पृष्ठ 44 का शेषांश

शायद विविध भारती की बात बहुत लम्बी हो गई मगर नरेन्द्र जी के साथ यह जिक्र जरूरी था। उन्होंने ने अपनी उम्र के लगभग 15 वर्ष आकाशवाणी में गुजारे। मुझे उन से क्या प्राप्त हुआ! यह एक शब्द में नहीं कहा जा सकता। मुझे हिन्दी तो बचपन से आती है मगर मैंने जब उन्हें अपनी हिन्दी कविता दिखाई तो उन्होंने मुझे कुछ मश्वरे दिये—और फिर मेरी कवितायें—नवनीत और 'धर्म युग' में प्रकाशित हुईं। उनकी बातों में बड़ा रस होता था। उनसे मिलकर उठिये तो लगता था कि आत्म विश्वास बढ़ गया है। आम कवियों या शायरों की तरह उन्हें वक्त-बे-वक्त अपनी कवितायें सुनाने का शौक नहीं था। उनकी गंध में भी खड़ा प्रवाह था। उनका कहना था कि जिन लोगों की शिक्षा उर्दू से आरम्भ हुई, उन की भाषा में रस होता है। कहा करते थे कि मैंने भी तख्ती पर एक मौलवी साहब के आलिफे, बे ले, लिखना पहले सीखा था और बाबू भगवती चरण वर्मा और अमृत लाल नागर भी उर्दू जानते थे। उनकी भाषा में उर्दू का रस था। दिल्ली उनको ज्यादा पसन्द न थी। उनका परिवार खार, बम्बई में ही रहता था। दिल्ली की सरकारी कालोनियों के माहौल से वे खुश नहीं थे। कहा करते थे यहां लोग अपने घर के दरवाज़े पर खड़े-खड़े मिलते हैं। यह दुनियां है। यहां रास्ते अलग होते हैं। तो इस प्रकार जैसे कभी एक साथ मिलकर चले ही ना थे। नरेन्द्र जी बम्बई चले गये। मैं उनके जाने से कुछ वर्ष पूर्व ही विविध भारती से उर्दू मजलिस में आ गया। हम या तो रोज़ मिलते थे, या बरस बीत गये। बम्बई में एक बार एच० एम० वी के दफ्तर में मिले। वे उन दिनों रामयण पर आधारित कई प्रोग्राम लिख रहे थे।

और फिर उन का महान कार्य—महाभारत टी० वी० सीरियल के रुप में सामने आया। सीरियल कहानी का गठन तो उन्हीं का किया हुआ था। उसके सम्वाद राही मासूम रज़ा ने लिखे थे। जाहिर है कहानी तो पहले ही तैयार कर ली गई होगी, प्रस्तुति बाद में शुरु हुई। अभी वह सीरियल चल ही रहा था कि उनके निधन की खबर आई। एक महान कवि, महान लेखक-विद्वान और सच्चा इन्सान इस संसार से उठ गया। नरेन्द्र जी ने अन्तिम समय तक काम किया, जिसका प्रमाण है—महाभारत—मगर क्या वे सचमुच-इस संसार से उठ गये—नहीं। अगर मैं उनके निधन की खबर न सुनता तो वे मेरे मन में इसी प्रकार रहते कि बम्बई में हैं। वास्तव में लेखक कभी मरता नहीं, उस का शरीर मरता है। वह जीवित रहता है अपने पाठकों के मन में, समूचे साहित्य जगत में। आज ज़रा गम्भीरता से सोचो तो महसूस होता है कि उनको इस नोच-खसोट की दुनियां में वह स्थान नहीं मिला जो मिलना चाहिए था। आज रुप को नहीं, बहरुप को याद रक्खा जाता है। कोई बालों की लटें बढ़ा लेता है, कोई रंगीले वस्त्र पहन कर लोगों को आकर्पित करता है कोई दारू पीकर धांदंल करता हैं और विवाद का विपय बन जाता है। कोई अपने समकालीन लेखकों को गालियां देकर मशहूर हो जाता है। मगर पं० नरेन्द्र शर्मा एक आर्दश लेखक और कवि थे, और महान इन्सान। उन पर अभी शोध कार्य होना है। कल जब समय की गर्द छट जायेगी और भविष्य का आलोचक हिन्दी कविता का मूंल्याकन करेगा, तो वह इतिहास के पन्नों से निकालेगा नरेन्द्र शर्मा को—और वह कल'' ज्यादा दूर नहीं समय बड़ी तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। ■

ए०, ८०, सैक्टर २७, नोएडा २०१३०१

□□□

पं० प्रताप नारायण मिश्र: जीवन और व्यक्तित्व

—डा० शान्ति प्रकाश वर्मा

पं० प्रताप नारायण का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक एवं प्रभावशाली था। वे उन्नाव जनपद के बैसवारा क्षेत्र के अन्तर्गत बैजगांव-वेथर में 24 सितम्बर 1856 तदनुसार अश्विवन कृष्णा नवमी, दिन चन्द्रवार सं० 1918 विक्रमी के दिन ज्योतिर्विद पं० संकट प्रसाद मिश्र जैसे, कुलीन एवं सुसंस्कृत ब्राह्मण के घर पैदा हुए थे। अतः प्राचीन परंपराओं एवं साकृतिक आदर्शों का उनके ऊपर प्रचुर प्रभाव पड़ा था। वे आजीवन आर्थिक दृष्टि से असपन्न होते हुये भी जीवन के धनी थे।

मिश्र जी उन व्यक्तियों में से थे जो अपने जीवन का निर्माण अपने हाथों करते हैं। बंधन में रहना और पढ़ना उन्हें रास नहीं आया। इसीलिए उनकी स्कूली शिक्षा अधूरी रह गई थीं। किंतु उनकी ग्रहण शक्ति इतनी तीव्र थी कि वे
हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, उर्दू-फारसी, बंगला, ब्रज, अवधि, बैसवारी आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान सहज ही प्राप्त कर सके। उनकी व्यावहारिक कुशाग्रबुद्धि ने उन्हें सर्वज्ञ बना दिया और विविध भाषा ज्ञान से उन्होंने जन नेताओं, साहित्यकारों और तमाम जनता को प्रभावित करने की शक्ति अर्जित की। उन्होंने अपने आसपास के जीवन तथा समाज पर न केवल सूक्ष्म दृष्टि डाली थी, अपितु वे उनकी भलाइयों-बुराइयों तथा उनके कारणों की गहराई तक से पूर्ण परिचित हो चुके थे। आस्तिक एवं पुरातनवादी होते हुए भी धार्मिक-सहिष्णुता का उनमें अभाव न था। एक सत्यवादी तथा निष्कपट व्यक्ति होने के कारण छल अन्याय तथा अत्याचार को देखकर क्षोभ से वे भर उठते थे। अपने देश-प्रेम, देशहित, समाजसुधार और हिन्दी प्रेम के कारण वे निर्भीकता से अपने विरोधियों पर तीखे प्रहार करते थे। स्वच्छ हृदय होने के कारण ही उन्हें शीघ्र क्रोध आ जाता था, परन्तु अपने सम्पूर्ण आचरण और व्यवहार में वे विनोद-प्रिय बने रहे। उनके आचरण का यह विरोधाभास उनके साहित्य में भी तीखेपन और विनोद प्रियता का कारण बना।

वे सारे जीवन अभावग्रस्त रहे, लेकिन धैर्य और साहस के साथ सम्पूर्ण बाधाओं पर विजय प्राप्त करते चले गये। स्वच्छन्द, चंचल, दबंग और निडर स्वभाव के कारण कहीं टिककर नौकरी न कर सके और अपने पिता के बनवाए चार मकानों के किराये, एकाध ट्यूशन और कभी-कभार नौकरी करके जीविकोपार्जन, साहित्य, समाज और देश सेवा करते रहे। धन का अभाव और अस्वस्थ होने पर भी अपने मासिक पत्र "ब्राह्मण" का वे सम्पादन करते रहे। और बार-वार बन्द होने की नौबत आने पर भी स्वाभिमान की रक्षा के लिये उसे किसी के हाथों बेचा नहीं। उन्हें जो कुछ अनुचित और अन्यायपूर्ण लगा, उसका अत्यन्त निर्भयता के साथ विरोध किया। चाहे इसके लिये उन्हें स्वजातियों धार्मिक-नेताओं और शासकों का विरोध ही क्यों न सहना पड़ा हो। उन्होंने भावी, पत्रकारों के सम्मुख एक श्रेष्ठ पत्रकार के आदर्श उपस्थित किये और साहित्यकारों के सम्मुख उनके कर्त्तव्य हिन्दी के उस प्रारंभिक युग में उन्होंने पत्रकारिता के मानस्तर को विकसित किया और साहित्यिक पत्रकारिता के तो वे अपनी पीढ़ी के सर्वोत्तम प्रति निधि रहे। पत्रकारिता का उद्देश्य, उसकी उपयोगिता एवं कार्यक्षेत्र से संबंधित जितनी सहज एवं सटीक टिप्पनियां उन्होंने अपने ब्राह्मण में लिखीं, वे आधुनिक पत्रकारिता के मार्गदर्शक सिद्धांतों में गिनी जा सकती हैं। हिन्दी का अखिल भारतीय स्वरूप देने वाले और राष्ट्र भाषा के रूप में विकसित करने वाले व्यक्ति में पं० प्रताप नारायण मिश्र का स्थान भारतेन्दु के पश्चात सर्वोपरि गिना जाता है। उनके बहुमुखी और विराट व्यक्ति ने उन्हें अपने जीवनकाल में और बाद में ख्याति की ऊचांइयों पर बिठा दिया।

सामाजिक, राजनैतिक, और साहित्यिक विचारधारा में वे भारतेन्दु से पूर्णतः प्रभावित थे। उन्हें सर्वगुण सम्पन्न मानते थे और विचार धारा की दृष्टि से वे उनके नेतृत्व और अवदान को स्वीकार करते थे। उन पर अगाध श्रद्धा और भक्ति रखते थे। कभी-कभी उनके चरण बंदन भी करते थे। उन्हें पूज्य पाद कहते थे। किन्तु फिर भी वे भारतेन्दु से अधिक उग्र एवं क्रान्तिकारी थे। भारतेन्दु के निधन पर उनकी 'शोकाश्रु' कविता और 'रक्ताश्रु' नामक लेख अपने श्रद्धेय के प्रति अगाध श्रद्धा का द्योतक है अपने "ब्राह्मण" में हरिश चन्द्र सम्वत का उल्लेख और अर्द्धचन्द्र का चिन्ह अंकित कर और उनके प्रेमधर्म का प्रचार और प्रसार का प्रयत्न करके उन्होंने उनके प्रति अगाध निष्ठा का परिचय दिया है किन्तु अनेक स्थलों पर मिश्र जी अपने कार्यों और विचारधारा में भारतेन्दु जी से बिल्कुल अलग और इक्कीस दिखाई पड़ते हैं।

भारतेन्दु जी नगर में जन्में थे और उनका अधिकांश साहित्यिक अवदान भी नागरिक जीवन से ओत-प्रोत था जबकि मिश्र जी ग्रामीण अंचल में पैदा हुये थे और उनका व्यक्तित्व और कृतित्व ग्रामीण जीवन की मनोरम झांकियों से भरा-पड़ा है। मिश्र जी की भाषा विनोद प्रिय, अधिक चुटीली और मुहावरा बहुल है। मिश्र जी मुहावरों के सम्राट हैं। भारतेन्दु जी जितने अधिक सम्पन्न थे मिश्र जी उतने ही अधिक विपन्न। भारतेन्दु जी जहां अंग्रेजी राज को सुख का साज घोषित करते हुये कहते हैं:-

> "अंग्रेज राज सुख साज सुने बहुभारी" पै धन विदेश चलि जात,
> यहै अतिख्वारी

वहीं मिश्र जी को भारत की धरती और धन का हरण करने वाले अंग्रेज और अंग्रेजी राज पर कतई विश्वास नहीं। वे कहते हैं:-

> "जिन, धन, धरती हरी, सो करिहै कौन भलाई बन्दर काके मीत,
> कलन्दर केहिके भाई"

इसी प्रकार जहां भारतेन्दु जी मात्र हिन्दी की ही उन्नति को देश की उन्नति का मूल मानते हैं:—

> "निज भाषा उन्नति, अहै,
> सब उन्नति को मूल।"

वही मिश्र जी जनता को कल्याण के लिये एक सम्पूर्ण नारा देते हैं और देश को एक सूत्र में बंधने का आह्वान करते हैं:—

> "चहुह जो साचों निज कल्याण,
> वौ मिलि सब भारत संतान!

जपौ निरंतर एक जबान,
हिन्दी, हिन्दू हिन्दुस्तान।।"

मिश्र जी के जीवन और साहित्य में ग्रामीण जनता के प्रति अपार प्रेम दिखाई पड़ता है। ग्रामीण बोलियों, कहावतों, मुहावरों का सर्वाधिक प्रयोग कर वे पाठकों के परमप्रिय बन गये थे। उनकी कविताओं में 'बुढ़ापा' 'हरिगंगा' "पितु मातु सहायक स्वामि सखा" आदि आज भी ग्रामीण अंचल में चाव से गाई और सुनी जाती है। उनकी कविता "ब्रैडला स्वागत" को विदेशी हिन्दी विद्वान फेड्रिक पिंकाट महोदय ने इतनी पंसद की थी कि उसका अंग्रेजी अनुवाद कर इंग्लैंड से प्रकाशित होने वाली "इंडिया" नामक पत्रिका में मार्च 1989 में प्रकाशित करवाया था।

शिक्षित और आशिक्षित जन समुदाय में मिश्र जी को जितनी लोक प्रियता मिली, तत्कालीन रचनाकारों में इतनी व्यापकता किसी अन्य को नहीं मिल पाई। भारतेन्दु मण्डल का कोई भी रचनाकार उनकी इस उंचाई को छू नहीं पाता। इन्हीं गुणों के कारण मिश्र जी अपने समय के सर्वाधिक अभिनन्दनीय व्यक्ति बन गये थे। उनका साहित्यिक प्रभामंडल इतना प्रकाशमान था और व्यक्तित्व इतना विराट था, कि देश और विदेश के अनेक सम्मानित शिखर पुरुष, उनके मित्र और मुरीद थे। पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, पं० मदन मोहन मालवीय, कालाकांकर नरेश, राजाराम पाल सिंह जैसी विभूतियां उससे मिलने कानपुर आया करतीं थीं। राजा रामपाल सिंह के हिन्दी पत्र "हिन्देस्थान" में मित्रता के कारण ही मालवीय जी के आमंत्रण पर डेढ़ वर्ष तक उन्होंने सम्पादकीय विभाग में काम किया था। अनेक राजे-महाराजे उनके दर्शनों के अभिलाषी थे। द्वितीय भारतेंदु प्रति भारतेन्दु के संबोधनों द्वार उनकी वंदना करते थे। पं० बालकृष्ण भट्ट और बाबू बाल मुकुन्द गुप्त ने मिश्र जी को भारतेन्दु का सच्चा उत्तराधिकारी स्वीकार किया था, और हिन्दी साहित्य का दूसरा भारतेन्दु घोषित किया था।

मिश्र जी वैसवारे की जिस धरती पर पैदा हुये थे, उसके सम्पूर्ण आचार विचार, व्यापार व्यवहार जीवन और सामाजिक दृष्टि तत्कालीन अवस्था तथा समस्याओं पर उन्होंने पर्याप्त प्रकाश डाला है। वे उस क्षेत्र के सामाजिक राजनैतिक तथा साहित्यिक नेता और प्रतिनिधि थे। उनके व्यक्तित्व को याद कर आज भी जन समुदाय आत्म-विभोर हो जाता है।

भारतेन्दु के पश्चात् मिश्र जी ही हिन्दी साहित्य के ऐसे सूत्रधार थे जो जनता द्वारा, प्रकाश को द्वारा, मित्रों द्वारा, तथा स्वयं के द्वारा उपेक्षित होने के बाद भी सहजभाव से साहित्य समाज और देश की सेवा करते रहे।

साहित्यिक अवदान

मिश्र जी ने हिन्दी गद्य और पद्य दोनों में ही लिखा है और दोनों ही क्षेत्रों में उनकी साहित्यिकता, कल्पना प्रवणता, और ज्ञानात्मकता का चमत्कार दृष्टिगत होता है। किन्तु परिमाण की दृष्टि से उनका गद्य साहित्य पद्य की अपेक्षा अधिक है। वे मुख्य रूप से गद्यकार हैं। और गद्य में भी निबंधकार कवि रूप उनका गौण है।

मिश्र जी का अधिकांश साहित्य उनके मासिक-पत्र, "ब्राह्मण" में ही प्रकाशित होकर सामने आया। उनका "ब्राह्मण" 15 मार्च 1883 ई० में होली के दिन प्रकाशित हुआ। और एकाध वर्ष को छोड़कर उनके जीवन काल तक उन्हीं की देखरेख और सम्पादकत्व में प्रकाशित होता रहा। इसके प्रकाशन में उन्हें अनेक प्रकार की आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वे इसका सम्पादन करते, प्रकाशन सामग्री जुटाते, ग्राहक बनाते, घाटे पर घाटा उठाकर ऋण का बोझ झेलते, कभी-कभी तो आठ-आठ महीने तक जब ग्राहक चन्दा न भेजते तो दुःखी होकर वे लिखतेः—

"आठ मास बीते जजमान,
अब तो करौ दच्छिना दान। हरिगंगा।
मांगत हमका लागै लाज;
पै रुपया बिन चलै न काज। हरि।
तुम अधीन ब्राह्मण के प्रान,
ज्यादा कौन बकै जजमान। हरि।
हंसी खुशी से रुपया देव,
दूध पूत सब हमते लेव। हरि"

इन्हीं सारी कठिनाइयों के कारण वे लेखन, प्रकाशन और सम्पादन की अनेक योजनाएं बनाकर भी उन्हें पूरा न कर सके। इसका प्रमाण उनकी अनेक अपूर्ण कृतियों की उपलब्धि और अनेक घोषणायें हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में "ब्राह्मण" उस युग के महत्वपूर्ण पत्रों में परिगणित होता था और मिश्र जी के उसमें व्यक्त विचारों को पर्याप्त महत्व भी प्राप्त होता था। उनकी अब तक उपलब्ध मौलिक और अनूदित कृतियों की संख्या साठ के आस पास है। अनुलब्ध साहित्य की संख्या भी 15-20 से कम नहीं।

परिमाण की दृष्टि से मिश्र जी ने सबसे अधिक निबंधों की रचना की है। उनके अब तक प्राप्त निबंधों की संख्या 276 हैं, ये निबंध देश, समाज और धर्म संबंधी है। तथा इनके विषय जीवन के व्यापक क्षेत्र का स्पर्श करते हैं। 'त' 'ट' 'दो', भौ, जैसे अक्षरों से लेकर शरीर के अंगों, विविध प्रकार की समस्याओं, एवं धर्म और दर्शन के गूढ़ विषयों तक पर, उनकी लेखनी समान रूप से चली है। निबंधों की इस व्यापकता ने उन्हें उस युग के अग्रणी निबंधकारों में महत्व पूर्ण स्थान दिलाया है।

साहित्य की श्रीवृद्धि में जहां मिश्र जी ने 'कलिकौतुक' एवं "भारत दुर्दशा" जैसे रूपकों के द्वारा एक ओर तत्कालिक स्थिति का सुन्दर चित्रण किया है, वहां प्रयोग की दृष्टि से भी उन्होंने नूतनता प्रदान की है। "हठी हमीर" उनका ऐतिहासिक नाटक है। इस प्रकार उन्होंने राजनैतिक और ऐतिहासिक तीनों ही प्रकार के आठ नाटकों की रचनाकर नाट्य साहित्य की श्रीवृद्धि की है। उसके क्षेत्र का भी विस्तार किया है। कलिकौतुक रूपक के पात्र तो सर्वथा जनसाधारण के व्यक्ति है। एक छोटे से रूपक में समाज के विभिन्न वर्गों का चित्रण मिश्र जी की व्यापक दृष्टि का परिचायक है। अपने प्रहसनों में उन्होंने सामाजिक समस्याओं को सामने रखा है।

मिश्र जी के प्रश्नोत्तर या आलाप सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक समस्याओं को लेकर लिखे गये हैं। उनके लिखे दस प्रश्नोत्तरों द्वारा सामाजिक समस्याओं को सामने रखा गया है।

समालोचनाः- मिश्र जी का समालोचन-साहित्य अधिक न होते हुये भी निर्भीक आलोचना पद्धति का परिचायक है। तटस्थ भाव से गुण-दोष विवेचन को मिश्र जी ने समालोचना का आदर्श माना है, और जहां भी समालोचना में तटस्थता खंडित देखी वहीं वे समालोचना की समालोचना करने बैठ गये। हिन्दी क्षेत्र में उस समय इस महत्वपूर्ण आदर्श की प्रतिष्ठा करने वाले एक मात्र मिश्र जी ही थे।

गद्य साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए ही उन्होंने बंगला भाषा के लगभग 20 ग्रंथों का हिन्दी में सफल अनुवाद किया। इस महत्वपूर्ण अनुवाद-साहित्य को उन्होंने तीन दृष्टि कोणों से प्रस्तुत किया। इतिहास-भूगोल आदि के ग्रन्थ उन्होंने ज्ञानात्मक साहित्य से गद्य साहित्य

को समृद्ध करने के लिये। नाटको, कहाँनियों आदि के द्वारा साहित्य संबंधी नई दृष्टि प्रदान करने के लिए तथा स्कूली-पाठ्य-पुस्तकों का अनुवाद हिन्दी गद्य के प्रचार-प्रसार के लिए अनुवाद के लिए बंगला से बंकिम बाबू के सात उपन्यासों तथा अन्य चौदह कृतियों को उन्होंने राष्ट्रपति देशहित की भावना से चुना है। अपने सीमित साधनों और आर्थिक कठिनाइयों के होते हुए भी मिश्र जी द्वारा इतनी अधिक गद्य कृतियों का सृजन उनकी प्रतिभा, लगन और कठोर परिश्रम का ही परिणाम है।

गद्य का स्वरूप निर्माण

मिश्र जी के समय में हिन्दी खड़ी गद्य का साहित्य में प्रयोग ही चल रहा था। साहित्य की विविध विधाओं में गद्य का यह प्रवर्तन-काल था। अतः एक ओर तो हिन्दी गद्य में साहित्य का सृजन हो रहा था। और दूसरी ओर इसके स्वरूप के निर्माण के साथ शब्द भण्डार को भरने का भी प्रयत्न चल रहा था। भारतेन्द्र के पथ का अनुसरण करने के कारण मिश्र जी भी तत्मस और तद्भव पदावली का संतुलन बनाए रखना चाहते थे। और सामान्य जनता में प्रचलित और ज्ञात देशज तथा विदेशी शब्दों से भी उसे सम्पन्न करना चाहते थे। उर्दू, फारसी और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का बहिष्कार उन्हें प्रिय न था। वे इनके मूल उच्चारण के अनुरूप ही लिखने का प्रयत्न करते थे।

गद्य के स्वरूप निर्माण में मिश्र जी का योगदान बहुत अधिक है। उन्होंने मुहावरों और कहावतों को प्रचुर संख्या में प्रयोग कर हिन्दी में गद्य को संवारने का प्रयत्न किया। भारतेन्दु युग में इनका अधिक प्रयोग किसी भी अन्य गद्य-लेखक ने नही किया।

मिश्र जी के सम्पूर्ण गद्य के स्वरूप को ध्यान से देखा जाय तो उसके दो रूप हमारे सामने आते है। एक से तत्सम और तद्भव पदावली से सम्पन्न हिन्दी का रूप दिखाई पड़ता है। इसमें प्रायः सुचाल शिक्षा, शैव सर्वस्व तथा कुछ महत्वपूर्ण निबन्ध लिखे गये हैं। गद्य का दूसरा रूप उनके प्रहसनों, प्रश्नोंत्तरों तथा कुछ निबन्धों में दिखाई पड़ता है। इन विषयों का सम्बन्ध भी सामान्य जनता से है। अतः गद्य के इस रूप को आंचलिक शब्दावली सम्पन्न सार्वजनिक गद्य का रूप कहा जा सकता है। सूक्तियों और उद्धरणों से भी उन्हेंने गद्य को सजाने का प्रयास किया है, जो गद्य के स्वरूप में चार चाँद लगाते है। इस तरह शब्दावली, वाक्य रचना, कहावतों और मुहावरों के समावेश, यत्र-तत्र अलंकारों और सूक्तियों के प्रयोग से उन्हेंने हिन्दी गद्य के विविध स्वरूपों को प्रस्तुत कर अपनी-अपनी रुचि के अनुसार अपनाने का भार परवर्ती लेखकों पर छोड़ दिया है।

गद्य शैलियों के विविध प्रयोग

मिश्र जी की गद्य शैलियों के प्रयोगों पर ध्यान दिया जाय तो यह कहा जा सकता है कि उन्होंने सार्वजनिक विवेचनात्मक, विवरणात्मक और ललित शैलियों का प्रयोग किया है। मिश्र जी की देन केवल गद्य निर्माण की ही दिशा में नहीं है, शैली-प्रयोग की दिशा में भी उनका प्रचुर योगदान लक्षित होता है। रूप शैली की दृष्टि से उन्होंने रूपकों, नाटकों और प्रहसनों के सृजन में नई शैली का समावेश किया है। उनके रूपक लघु रूपक है। भांड की उन्होंने नवीन अवतारणा की है। भारत दुर्दशा लास्य रूपक है। और संगीत शाकुन्तल गीतिनाट्य। नान्दी पाठ और भरत वाक्य तथा प्रस्तावना आदि के सम्बन्ध में उन्होंने नई शैली अपनाई है। भारत दुर्दशा नाटक प्रतीकात्मक तो है ही उसका नायक भी भारत है और उसके कथन भारत के अपने कथन है कलि-कौतुक या अन्य प्रहसनों के नायक साधारण जनों से ही लिये गये है। गद्य पद्य मिश्रित सम्वाद और पात्रानुसारीय भाषा उनके नाटकों की विशेषता है।

तद्भव, तत्सम, उर्दू गर्भित, व्यास, समास, मुहावरेदार, लोकोक्ति सम्पन्न, अनुप्रासमयी शैलियों के प्रयोग, भाषा-शैली पर उनके प्रचुर अधिकार की द्योतक है। मणिप्रवाल और आंचलिक शैलियों के प्रयोग तो सर्वथा नूतन प्रयोग है। अवधि तथा ब्रज-भाषा में एक-एक पूर्ण निबंध लिखकर उन्होंने जनभाषा और जनशैली को अपनाने का संकेत दिया है। आज हिन्दी गद्य में आंचलिक साहित्य जिस दिशा में बढ़ रहा है, उसके प्रर्वतक के रूप में प्रताप नारायण जी को सहज ही प्रतिष्ठित किया जा सकता।

मिश्र जी हिन्दी गद्य को उसकी बहुविधता और बहुरंगिता में चार-चाँद लगाकर प्रस्तुत करना चाहते थे। उनकी प्रतिभा और उनका व्यक्तित्व प्रत्येक प्रकार की रचना में इसीलिए स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगता था। देशहित और समाज सुधार संबंधी उनके अपने दृष्टि कोण थे आचार और धर्म सम्बन्धी उनकी अपनी निष्ठाएं थी। इसीलिए वे जो कुछ लिखते थे, इन दृष्टिकोणों और निष्ठाओं का समावेश उनमें सहज ही हो जाता था। इसीलिये उनके निंबधों के विषय विषयी प्रधान माने गये हैं और आत्म व्यंजक निबंध कारों में उन्हें सर्वश्रेष्ठ घोषित किया गया है। मिश्र जी का सम्पूर्ण साहित्य उनका अपना होते हुये सर्व-साधारण का है। उस युग में जब हिन्दी के गिने चुने लेखक और गिने-चुने पाठक तथा प्रेक्षक होते थे, उन्होंने हिन्दी को लोकप्रियता प्रदान की। उनके गद्य के मनोरम स्वरूप के कारण ही राधाकृष्णा दास, बाल मुकुन्द गुप्त "हरि औध" आदि रचनाकार उनके अनुयीय बने और उनके प्रभाव को स्वीकार किया है। और उनकी भाषा-शैली तथा भावों का अनुसरण किया है। बालमुकुन्द गुप्त तो उन्हें अपना गुरु मानते थे। उनके "शिवशंभु के चिट्ठे" में मिश्र जी की व्यंग्यात्मक शैली का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। इसी प्रकार हरिऔध जी ने अपने साहित्य में मुहावरों के प्रयोग पर बल दिया। परवर्ती रचनाकारों में सरदार पूर्णसिंह, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि भी उनसे प्रभावित थे, मिश्र जी के 'मनोयोग' निबंध आचार्य शुक्ल के मनोभावों से सम्बद्ध निबंध परवर्ती है। उनको नहीं भूलाया जा सकता।

मिश्र जी देश हितैषी, समाज सुधारक, और सदाचार प्रतिष्ठापक के व्यक्तित्व से सम्पन्न थे। अपने दृष्टिकोणों की अभिव्यंजन उन्होंने साहित्य के माध्यम से उसे सजीव एवं रोचक बनाकर विनोदात्मक शैली में की है। उन्होंने देश और समाज को भी बहुत कुछ दिया है। हिन्दी साहित्य को भी दिया है। और गद्य के स्वरूप तथा शैली निर्माण में उनका योगदान इतना अधिक और महत्वपूर्ण है कि आज का कोई भी निबन्ध कार उनकी देन को अस्वीकृत नही कर सकता। ■

सी 4/72 बी० फेज-2 अशोक विहार, दिल्ली-52

विश्व हिंदी दर्शन

यात्रा के अन्दर भी होती हैं कुछ अन्तर्यात्राएं

—शंकर दयाल सिंह

अपने आपको मैं एक यायावर मानता रहा हूं। यायावरी कोई पेशा नहीं है लेकिन उसके पीछे कुछ ऐसी अनुभूतियां छिपी होती हैं जो भुलाये नहीं भूलतीं। जीवन भर किसी न किसी रूप में वह कुरेदती रहती हैं, मुस्कानें बिखेरती रहती हैं, आंखों के आगे उन दृश्यों को सजीव बनाती हैं जिनसे हमने कभी अपने आपको जोड़ा हो तथा किसी न किसी रूप में हमें उन क्षणों के साथ जोड़ देती हैं। ऐसी ही हमने एक यात्रा की 13 से 26 जुलाई 1993 तक। एक ऐसी यात्रा जिसमें मेरे पांव भारतीय विमान सेवा के एक विशेष विमान पर रहे और जिस देश की धरती पर ये पांव पड़े, वह रैड कार्पेट की गुद्‌गुदी तलबों को सहलाती रही। जिस नगर में हमने प्रवेश किया, उसमें एक पहचान बनी और जिन्दगी के हिस्से आयी सुनहली धूप, रूप, रस और गंध बनकर हमारे अन्दर बस गई।

अब यहीं रुक जाइये, बात स्पष्ट कर दूं तब मैं आगे बढ़ूं। भारतीय गणतंत्र के प्रथम नागरिक महामहिम डा० शंकर दयाल शर्मा के साथ विदेश राज्य मंत्री और तीन सांसदों की टोली में एक मैं भी शामिल था जिसने चौदह दिनों में सात देशों की धरती को छुआ। इरान, उक्रेन, टर्की, हंगरी, ब्रिटेन, यूनान तथा कुछ क्षणों के लिये बहरीन। इस यात्रा का नाम कुछ भी दिया जाये लेकिन थी वह "सद्‌भावना यात्रा" जिसकी शान-शौकत अपने ही ढंग की रही। उस विवरण में मैं बहुत ज्यादा नहीं जाना चाहता, लेकिन जरूर चाहूंगा कि इस अप्रतिम यात्रा का साक्षी आपको भी बनाऊं, कारण हमारी यह यात्रा भारत के साथ उन देशों की मैत्री और सद्‌भाव द्योतित करती है।

"राजदूत" की गोद में हवा के पेंगे पर

दिल्ली के पालम हवाई अड्डे से हम भारतीय वायु सेना के जिस विमान से विदा हुए उसका नाम था—"राजदूत"। बैठते ही सामने हस्ताक्षरों तथा सुझावों वाली एक विशेष पुस्तिका सुनहले फ्रेम के साथ दिखाई देती है। उठाता हूं तो पाता हूं कि यह एक दुर्लभ दस्तावेज है। उसमें उन विशेष यात्रियों की शुभकामनायें, सुझाव तथा हस्ताक्षर दर्ज थे, जिन्होंने इस विमान से कभी यात्रायें की थीं। मैं हैरान रह जाता हूं—डा० राजेन्द्र प्रसाद से लेकर पं० जवाहर लाल नेहरु तक और इरान के शाह पहलवी से लेकर चाउ एन लाई तक इस विमान के यात्री रह चुके हैं। सबों के हस्ताक्षर दर्ज हैं, जिनकी संख्या सौ से ऊपर होगी। मेरी आंखें उत्सुकतावश ढूंढने लगती हैं कि इस भारतीय विमान से यात्रा करने वाले किसी यात्री ने हिन्दी में भी हस्ताक्षर किया है या नहीं। मुझे खुशी होती है कि उस पूरी पुस्तिका में तीन हस्ताक्षर मुझे हिन्दी के भी मिल जाते हैं—जवाहरलाल नेहरु, इंदिरा गांधी तथा अटलबिहारी वाजपेयी के। चौथा हस्ताक्षर निश्चय ही डा० शंकर दयाल शर्मा का हुआ।

यह शोध मैंने इसलिए भी प्रारंभ किया क्योंकि मैंने पाया कि अनेक राष्ट्राध्यक्षों ने अपने राष्ट्र की भाषा में ही हस्ताक्षर किए हैं और नीचे कोष्ठक में अंग्रेजी में उनके नाम दिए हैं। मेरी आंखें सहज रूप से अपनी राष्ट्रभाषा की तलाश हर जगह करती रहती हैं और जहां कहीं उसे पाता हूं तो स्वाभाविक प्रसन्नता होती है।

जब श्रीमती विमला शर्मा ने जहाज पर ही रहना उचित समझा

हमारा पहला पड़ाव था तेहरान। ईरान में खुमैनी साहब के आदेशानुसार महिलाएं बिना पूरा तन ढके किसी भी सार्वजनिक स्थल पर नहीं निकल सकती हैं। यही कानून विदेशियों पर भी लागू होता है। पहले ही हमारे

दूतावास ने यह खबर हमें पहुंचा दी थी कि जिन महिलाओं को तेहरान हवाई अड्डे पर उतरना हो, वे या तो बुरका का प्रयोग करें या फिर पूरे बदन ढंकने की व्यवस्था करके ही उतरें।

तेहरान हवाई अड्डे पर जब उतरने की बारी आई तो हमारे दल की एक सदस्या श्रीमती सत्या बहन, इस अवसर के लिए बनाई गई पूरे बांह की चोली तथा मौजा आदि पहनने लगीं। दो-तीन महिलाओं ने भी ऐसा ही किया, लेकिन राष्ट्रपति जी की पत्नी श्रीमती विमला शर्मा प्लेन से नहीं उतरीं। हालांकि भारतीय दूतावास की अनेक महिलाएं बुर्का पहनकर उनसे मिलने आई तथा उन सबों ने कई अतिरिक्त बुर्कों की भी यवस्था की, थी। उनका अपना कानून था और यहां हमारा अपना भी ताना-बाना था।

उक्रेन, भारत और हिन्दी

सोवियत-संघ के विघटन के बाद उसके जो गणराज्य पूरे राष्ट्र का दर्जा ले चुके हैं, उनमें उक्रेन का विशेष महत्व है। एक तो आणविक हथियारों का बहुत बड़ा जखीरा उसके पास है और दूसरी बात यह है कि सोवियत संघ का 70 प्रतिशत जहाजी बेड़ा उक्रेन के कालासागर तटों पर अभी भी है। इनके अतिरिक्त बंटवारे में पांच लाख के करीब थल सेना उक्रेन के हिस्से में पड़ी है। फिर भी अनेक बातों को लेकर रूस तथा उक्रेन में विवाद बने हुए हैं और तनाव की स्थिति है, जिसकी चर्चा वहां के राष्ट्रपति ने अपने राष्ट्रपति जी से जब की, तो डॉ० शंकर दयाल शर्मा जी ने मुस्कुराकर कहा-दो भाइयों के बीच जब बंटवारा होता है तो ऐसी अनेक बातें आती हैं, यह हम सबों का तजुर्बा है, अतः इसमें बेहतर यही है कि बिना किसी और को कहे या बीच में लाए स्वयं दोनों भाई मिलकर फैसला कर लें।

कीव पहुंचने पर राष्ट्रपति जी ने अपना पहला भाषण हिन्दी में दिया। वहां के विश्वविद्यालय ने राष्ट्रपति जी को मानद उपाधि दी, उसके बाद उक्रेन के छात्रों ने हिन्दी में मनोरंजन कार्यक्रम पेश किया तथा कवी और ओडिसा में सैकड़ों भारतीय छात्र मिले जो वहां इंजीनियरिग तथा मेडिकल की पढ़ाई कर रहे हैं। पूछने पर पता चला कि जो छात्र यहां से जाते हैं पहले उन्हें रशियन भाषा सीखनी होती है, तब उन्हें जो भी शिक्षा दी जाती है वह उसी भाषा में। एक शब्द भी अंग्रेजी का व्यवहार नहीं होता है।

ऐसी स्थिति में मुझे बार-बार अपने देश का रोना याद आता रहा कि भला हिन्दी में तकनीकी और उच्च शिक्षा कैसे संभव है? ऐसे लोग जरा देख आएं एक बार उक्रेन। वहां के नेताओं ने जो भी बातें अपने राष्ट्रपति जी से कीं वे सभी रशियन या उक्रेनियन भाषा में दुभाषिया के द्वारा। जबकि अपनी ओर से अंग्रेजी का ही बोलबाला था।

होटलों की दुनिया और गरिमामय यात्री

यात्रा का महत्वपूर्ण पड़ाव टर्की, जहां अंकारा में हम हिल्टन होटल में ठहराए गए और इस्ताम्बूल में मिल्टन में। राष्ट्रपति जी से लेकर यात्री दल के सभी सदस्य। मैंने पाया कि दोनों होटलों में आमजन आ जा रहे थे तथा दुनिया के अनेक देशों के यात्री ठहरे हुए थे। केवल हमारे लिए कुछ सुरक्षा व्यवस्था रखी गई थी। वहां का आम जीवन यथावत था।

अंकारा तथा इस्ताम्बुल में जिन जगहों में हम देखने - घूमने गए, वहां आम दर्शकों के लिये वे स्थल बंद भी नहीं किए गए थे। चाहे वह कोई म्युज़ियम हो या फिर गिरिजाघर या मस्जिद।

इन दोनों बड़े शहरों में काफी भारतीय मिले तथा दोनों जगहों में हिन्दी पढ़ाई की व्यवस्था है। हर जगह मुस्तफा कमाल अतातुर्क की जो महात्मा गांधी के समान ही वहां के राष्ट्रपिता माने जाते हैं, छाप दिखाई देती हैं। उनके चित्र हर जगह दिखाई देते हैं तथा उनकी मूर्तियों से पूरा देश पटा है। जबकि भारत मे अभी तक यह विवाद बना ही हुआ है कि इंडिया-गेट के पास गांधी जी की मूर्ति लगेगी या किसी और की।

आंखो में बस गई है वह तस्वीर

पूरी यात्रा के दौरान जो छवि आंखों में बस गई है, वह है टर्की की प्रधानमंत्री तांसु चेल्लर की तस्वीर। राजनीति में आने के पहले वह अर्थशास्त्र की प्रोफेसर थीं। अमेरिका में उन्होंने उच्च शिक्षा ली और वहां पढ़ाया भी तथा उसके बाद वह जब अपने देश में आई तो यहां भी प्राध्यापिका का कार्य किया। इस कार्य से उन्हें लगाव है, तभी तो प्रधानमंत्री बनने के बाद भी उन्होंने अपना "प्रोफेसर" संबोधन नहीं छोड़ा है।

देखने में मोहक, बातचीत करने में मधुर, वस्त्र-विन्यास में आधुनिक कार्य करने में सुदक्ष तथा अत्यन्त प्रभावोत्पादक चेल्लर को जो भी देखेगा, वह देखता ही रह जायेगा। 46-47 वर्ष की आयु में उन्हें यह गरिमामय पद मिला, जिस पर श्रीमती इंदिरा गांधी, मारग्रेट थैचर और श्रीलंका की श्रीमती भण्डारनायके को हम देख चुके हैं। लेकिन उनके संदर्भ में जो बातें भुलाने वाली नहीं हैं, उसे मुझे वहां के एक पत्रकार ने बताया। पहली बात यह कि उन्होंने जब शादी करने की सोची तो अपने पति के सामने यह शर्त रखी कि मैं आपका सरनेम नहीं लूंगी। आपको मेरा सरनेम लेना होगा। नतीजतन उनके पति ने बाकायदा कोर्ट में जाकर अपनी पत्नी का सरनेम "चेल्लर" ग्रहण किया।

दूसरी बात जो बहुत ही जरखेज है वह निश्चित रूप से हर पाठक तक पहुंचाना चाहूंगा। जिन दिनों उनके प्रधानमंत्री होने की बात चल रही थी और वह किसी होटल में ठहरी हुई थीं और वहां के स्विमिंग-पूल में स्नान करने के बाद उसी ड्रेस में "सनबाथ" ले रही थीं कि किसी ने होटल की खिड़की से उनकी तस्वीर ले ली और दूसरे दिन वह अर्धनग्न तस्वीर टर्की के प्रमुख पत्र में मुखपृष्ठ पर आई। इसे श्रीमती चेल्लर ने जब देखा तो वह सीधा उस अखबार के दफ्तर में गई तथा संपादक के सामने अखबार खोलकर फूट-फूटकर रोने लगीं और बोलीं-आपको टर्की की जनता को मेरा यही चेहरा दिखलाना था? मैं यदि प्रधानमंत्री बनूंगी तो अपनी योग्यता या कर्मठता के बल पर या अपनी इस तस्वीर के बल पर। यदि आपको इस प्रकार की विकृत तस्वीर ही छापनी थी तो अनेक चेहरे इससे भी विकृत अवस्था में मिल जाते। यह मेरे लिए ही नहीं टर्की की जनता और पत्रकारिता के लिये दुख और शर्म की बात है कि उनका जो प्रधानमंत्री होने वाला हो, उसे इस रूप में दर्शाया जाये।

दूसरे दिन उस अखबार ने प्रमुखता के साथ उनसे इसके लिए मुखपृष्ठ पर माफी मांगी। कुछ ही दिनों बाद श्रीमती तासु टर्की की प्रधानमंत्री बनी।

टर्की का जिक्र छिड़ा है तो लगे हाथों यह भी बता दूं कि मुस्तफा कमाल पाशा ने राष्ट्रपति पद संभालते ही पहला काम यह किया कि एक

सप्ताह के अंदर अंग्रेजी को विदा कर तुर्की भाषा में सभी कार्यों की शुरुआत की तथा तुर्की जो फारसी लिपि में लिखी जाती थी उसकी लिपि रोमन कर दी। इस प्रकार उन्होंने उस लिपि को प्रचलित भी किया तथा वैज्ञानिक आधार भी दिया।

एक महत्वपूर्ण बात देखने में यह आई कि इस्ताम्बुल में "आया सोफिया गिरिजाघर" जो दुनिया के सबसे बड़े गिरिजाघरों में माना जाता है उसे आटोमन राजाओं ने टर्की में कब्जा करने के बाद तोड़कर मस्जिद बना दिया, मुस्तफा कमाल उतातुर्क ने अपने जमाने में उसे म्युज़ियम का रूप दे दिया। काश! ऐसी ही दृढ़ता कुछ हमारे यहां भी हुई होती।

हमारी पहचान गुरूदेव, गांधी, नेहरू

जिन देशों में गया वहां हमारी पहचान के सबसे बड़े स्रोत गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी और पं॰ जवाहरलाल नेहरू हैं। उक्रेन हो, टर्की हो या हंगरी, हर जगह इन तीनों की भरपूर चर्चा रही और किसी रूप में उन देशों में इनकी छाप वर्तमान है। गुरूदेव और जवाहरलाल लगभग हर जगह गए लेकिन भौतिक रूप से न पहुंच कर गांधी का संदेश हर जगह पहुंचा।

भारतीय प्रेमियों की कमी नहीं है दुनिया में

हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट जिसकी गिनती यूरोप के खूबसूरत नगरों में होती है वहां हुई उस गोष्ठी को कभी नहीं भूल सकता। राष्ट्रपति जी की पहल पर अपने राजदूत ने हंगरी के अनेक विद्धानों, अनेक साहित्यकारों, इतिहासकारों, पुरातत्वविदों और भारत में रूचि रखने वाले लोगों की एक संगोष्ठी जलपान पर बुलाई। उसमें लगभग पचास हंगरी के बुद्धिजीवियों ने भाग लिया जिनमें दो भू॰पू॰ प्रधानमंत्री, दो भारत में रह चुके राजदूत तथा दो युवा संसद सदस्य भी थे। उनका भारत-प्रेम, हिन्दी प्रेम तथा भारतीय साहित्य-संस्कृति में रूचि देखकर मैं अचंभित रह गया। उनमें से कई लोगों ने वेद, उपनिषद, रवीन्द्र साहित्य, प्रेमचंद साहित्य आदि के अनुवाद, हंगेरियन भाषा में किए थे। दोनों संसद सदस्यों ने अपने विजिटिंग कार्ड दिए। उनके कोने में चर्खा चलाते हुए गांधी की तस्वीर थी। भारत में भी मैंने ऐसी चीज़ नहीं देखी थी। संकोच से मैं नतमस्तक था। कहां वे, कहां हम?

डा॰ इवाअरादी और डा॰ मारिया एंग्सीन जैसी महिलाओं ने शुद्ध एवं परिष्कृत हिन्दी में भाषण देते हुए राष्ट्रपति जी से कहा कि हंगरी में भारतीय साहित्य और संस्कृति का एक अच्छा केन्द्र खुलवा दें एवं संस्कृत-हिन्दी की भरपूर पुस्तकें यहां भिजवा दें।

केवल राष्ट्रपति का ही नहीं, पूरे राष्ट्र का सम्मान

यात्रा का गौरवमय क्षण वह था, जब इंगलैंड और यूरोप के ही नहीं बल्कि दुनिया के गौरवमयी विश्वविद्यालय कैम्ब्रिज ने राष्ट्रपति डा॰ शंकर दयाल शर्मा को "डाक्टर ऑफ ला" की मानद उपाधि से सम्मानित किया। यह गौरव उनका नहीं बल्कि पूरे भारत का कहा जायेगा, क्योंकि डा॰ राधाकृष्णन और पं॰ जवाहरलाल नेहरू के बाद डा॰ शंकर दयाल शर्मा तृतीय भारतीय हैं जिन्हें यह गौरव हासिल हुआ है। जो प्रशस्ति पत्र वहां पढ़ा गया उसमें साफ ढंग से कहा गया कि यह सम्मान राष्ट्रपति के नाते नहीं कैम्ब्रिज के एक भूतपूर्व छात्र तथा अध्यापक और विद्धान के नाते डा॰ शंकर दयाल शर्मा को अर्पित किया जा रहा है।

जिस शालीन और गौरवमयी परम्परा का अभिषेक करते हुए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने अपने छः सौ वर्षों के रस्मों के अनुरूप डा॰ शंकर दयाल शर्मा को वह उपाधि दी वह देखते ही बनता था। जिस समय कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सीनेट हाल में औपचारिक अथवा अनौपचारिक समारोह हो रहा था, उस समय वहां की दीवारों पर न्यूटन, डार्विन, मेकाले, मिल्टन, स्पेंसा, आरे पिट जैसे विश्वविख्यात विभूतियों की तस्वीरें जो इस विश्वविद्यालय के प्राचीन छात्र रहे हैं, साक्षी बनकर इस दृश्य को देख रही थीं।

उस समय कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय पर यूनियन जैक और कैम्ब्रिज झंडे के साथ ही भारत का तिरंगा फहर रहा था। दूसरी ओर शायद पहली बार एक ऐसे व्यक्ति को यह गौरव हासिल हो रहा था जो गांधी टोपी लगाए खादी के चूड़ीदार पायजामा पहने तथा शेरवानी में गांधीवादी चेतना का दूत बनकर इसे ग्रहण कर रहा था।

इतिहास की सिसकियां और संस्कृति का गौरव

एक दिन और एक रात का ठहराव यूनान की राजधानी एथेंस में हुआ। बार-बार मुझे सुकरात, प्लेटो और अरस्तु याद आते रहे। दार्शनिकों की भूमि, कवियों-कलाकारों की भूमि। शिल्पकारों और वास्तुकारों की भूमि। वीरों और सुंदरियों की भूमि। यहां का इतिहास मुखरित है और भूगोल स्तब्ध। हम प्रायः बुद्ध और अशोक पर इतराते हैं कि वे ईसा के चार सौ, पांच सौ, छः सौ वर्ष पूर्व भारत की धरती पर अवतरित हुए और उन्होंने हमें गौरव दिया, लेकिन उस भूमि को याद कीजिए जहां ईसा के दो हजार, छः हजार वर्ष पूर्व के अनेक अवशेष, कलाकृतियां तथा दस्तावेज यथावत सुरक्षित हैं।

संग्रहालयों में घूमते हुए रह-रहकर मेरी आंखें उन दृश्यों को देखकर चौंधिया जाती थी जहां ईसा के दो हजार, तीन हजार वर्ष पूर्व की बनी पुरुषों की मूर्तियां नग्नावस्था में थीं, वहीं महिलाएं वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित। इसका अर्थ यह हुआ कि उस जमाने में यूनान के पुरुष ज्यादा मोहक और सुंदर थे और स्त्रियों को अपने सौंदर्य को दिग्दर्शित करने के लिए परिधानों तथा आभूषणों का सहारा लेना पड़ता था।

यूनान की चप्पे-चप्पे भूमि के नीचे इतिहास की सिसकियां हैं। एक जमाना था जब यूनान और भारत दुनियां में दो ही ऐसे देश थे जिनके पास सभ्यता, संस्कृति और विद्धता का अक्षय कोश था। आज ये सारी बातें मलवों के बीच दबी पड़ी हैं। वर्तमान युग में ज्ञान पीछे हो गया, विज्ञान आगे बढ़ गया।

यात्रा का हर क्षण और हर पल जीवित दस्तावेज होता है। खासकर मैं एक ऐसी यात्रा में शामिल था, जिसकी गंभीरता और भव्यता का क्या कहना?

सच में यादों से अलग कभी न होगी वह यात्रा। बार-बार मन में यही बात आती है कि राष्ट्रपति जी के साथ जो गौरवपूर्ण यात्रा मैंने की वैसी यात्रा तभी संभव है जबकि मैं स्वयं कभी राष्ट्रपति बन जाऊं। ■

15, गुरूद्वारा रकाब गंज रोड, नई दिल्ली-110001.

फीजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि

—डा॰ विमलेश कान्ति वर्मा

विश्व में हिंदी भाषा भाषियों की संख्या विशेषज्ञों ने 70 करोड़ बताई है तथा संख्या की दृष्टि से हिंदी भाषा भाषियों का स्थान तीसरा माना है। हिंदी, बहुभाषा भाषी भारत में देश की संपूर्ण जनसंख्या के 42.95% व्यक्तियों द्वारा मातृभाषा रूप में बोली जाती है तथा संपूर्ण देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तथा कामाख्या से कच्छ तक समझी जाती है। किंतु हिंदी भारत के बाहर भी करोड़ों लोगों द्वारा बोली जाती है। हिंदी भाषी केवल भारतीय ही नहीं विश्व के अनेक देशों के नागरिक हैं जिनमें प्रवासी भारतीय तथा अनेक विदेशी भी हैं। हिंदी उनके मध्य विचार विनिमय की भाषा है। हिंदी को वे अपनी अस्मिता से जुड़ा हुआ मानते हैं तथा उसकी सुरक्षा तथा विकास के लिए निरन्तर तत्पर भी है।

विदेशों में बसे हुए प्रवासी भारतीयों की संख्या आज लगभग दो करोड़ है। डॉक्टर जगत मोतवानी ने विदेशों में बसे भारतीय मूल के व्यक्तियों की संख्या उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार एक करोड़ बीस लाख से लेकर दो करोड़ तक मानी है। डा॰ प्रकाश जैन (1989) ने प्रमुख देशों में बसे भारतीय मूल के व्यक्तियों की संख्या एक करोड़ पचास लाख बताते हुए कहा है कि यदि विश्व के प्रत्येक देश में बसे हुए भारतीयों की गणना भी कर ली जाए तो संख्या बहुत अधिक हो जाएगी। इन प्रवासी भारतीयों में अधिकांश भारतीय आपस में हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं तथा भावात्मक दृष्टि से हिंदी से जुड़े हुए हैं। वे हिंदी का अपनी बोलचाल में प्रयोग करते हैं सामाजिक-सांस्कृतिक अवसरों पर हिंदी का व्यवहार करते हैं, हिंदी में पत्र-पत्रिकाएं निकालते हैं तथा हिंदी में साहित्यिक सर्जना भी करते हैं। परिणाम स्वरूप विदेश में हिंदी की नई भाषा शैलियां विकसित हुई हैं; अनेक हिंदी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं जिनमें हिंदी की कविताएं, कहानी तथा लेख आदि प्रकाशित होते हैं। फीजी, मारिशस, लंदन आदि देशों में तो स्तरीय हिंदी साहित्य की रचना भी आज हो रही है।

प्रवासी भारतीयों के अतिरिक्त विदेशी भी हिंदी में रूचि रखते हैं। वे भारत की आत्मा को समझने के लिए हिंदी को प्रमुख माध्यम समझते हैं। यही कारण है कि विश्व के अनेक प्रमुख विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन अध्यापन प्रारंभिक स्तर से लेकर उच्च स्तर या शोध स्तर तक होता है। अमेरिका, जर्मनी, इंगलैंड, आस्ट्रेलिया तथा जापान के तो अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा तथा साहित्य का अध्ययन उच्च स्तर पर अनेक विदेशी करते हैं।

भारत के बाहर हिंदी तीन रूपों में पहुंची। भारत से अनेक मजदूर गन्ने के खेतों में काम करने के लिए ब्रिटिश एजेंटों द्वारा ब्रिटिश उपनिवेशों में ले जाए गए। फीजी, मारिशस, सूरिनाम, त्रिनिदाद, गयाना तथा दक्षिण अफ्रीका में भारतीय शर्तबंदी प्रथा के अधीन वे बहला फुसलाकर ले जाए गए थे जिन्हें गिरमिटिया की संज्ञा दी गई। प्रवासी भारतीयों में इस वर्ग के भारतीयों की संख्या सबसे अधिक है तथा हिंदी की जड़ें विदेशों में जमाने तथा हिंदी को सुरक्षित रखने तथा सुदृढ़ करने में इनका सबसे बड़ा हाथ है। ये भारतीय जो ब्रिटिश उपनिवेशों में कभी मजदूर के रूप में पहुंचे थे। आज देश के सुशिक्षित, सम्पन्न, प्रतिष्ठित नागरिक हैं तथा उद्योग, व्यापार, शिक्षा तथा राजनीति में इनका बड़ा हाथ है। दूसरे वर्ग में उन भारतीयों की गणना है जो विदेश में शिक्षा, व्यापार तथा अन्य प्रयोजनों से गए और वहां बस गए। इस वर्ग के भारतीय भी हिंदी को भारतीयता का पर्याय मानते हुए प्रयत्नशील हैं कि उनके बेटे और बेटियां हिंदी भूल न जाएं। वे हिंदी सीखना चाहते हैं तथा हिंदी के विकास के लिए प्रयत्नशील हैं। तीसरे वर्ग में वे विदेशी हैं जिन्होंने भारत आकर या अपने देश में रहकर हिंदी सीखी। यहां हिंदी भाषा अध्ययन उनका मूल ध्येय न होकर भारतीय साहित्य, दर्शन, संस्कृति, धर्म, समाज का अध्ययन उनका ध्येय है तथा हिंदी उस ध्येय को प्राप्त करने का साधन। भाषा का अध्ययन किसी देश की संस्कृति को समझने का सबसे सशक्त माध्यम है और बाद में प्रायः यही माध्यम एक ध्येय भी बन जाता है।

फीजी में भारतीय सबसे पहले 15 मई 1879 को लेवनीदास जहाज से पहुंचे। इस जहाज़ में 463 व्यक्ति थे जो गन्ने के खेतों में काम करने के लिए शर्तबंदी प्रथा के अंतर्गत बहला फुसलाकर लाए गए थे। इसके बाद तो 11 नवम्बर 1916 तक 87 जहाज़ों द्वारा हजारों भारतीय फीजी द्वीप पहुंचे[1] कई तो जहाज़ के कष्टों से, कई संक्रामक रोगों के फैल जाने से रास्ते में ही चल बसे थे। एक सूचना के अनुसार लेवनीदास जहाज में ही 495 मजदूर थे। पं॰ तोताराम सनाढ्य के अनुसार यह संख्या 481 थी किंतु 463 मजदूर ही फीजी पहुंचे। मार्ग के दारूण कष्ट का वर्णन तोताराम जी की अप्रकाशित पुस्तक 'फीजी का इतिहास' में विस्तार से किया गया है।

फीजी पहुंचे भारतीयों में अधिकांश पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा पूर्वी बिहार के थे। इन क्षेत्रों की भाषा अवधी तथा भोजपुरी सामान्यतः है। फीजी पहुंचे 85,439 प्रवासी भारतीय निम्नलिखित प्रांतों से गए थेः—[2]

क्षेत्र का नाम	संख्या	प्रतिशत
पश्चिमोत्तर प्रांत	21,131	46.5
अवध	13,207	29.0
बिहार	4,771	10.5
मध्य प्रदेश	2,802	6.2
पंजाब	828	1.8
राजस्थान	733	1.6
बाहरी उपनिवेश	640	1.4
नेपाल	398	0.9
बंगाल	150	0.3
पश्चिमी भारत	120	0.3
मद्रास	76	0.2
अन्य क्षेत्र	81	0.2
अनिश्चित	502	1.1

ज़िलों के अनुसार फीजी गए भारतीयों की स्थिति निम्नलिखित थीः—

बस्ती	6415	14.12
गोंडा	3589	7.90
फैजाबाद	2029	5.13

सुल्तानपुर	1747	3.85
आज़मगढ़	1716	3.78
गोरखपुर	1683	3.70
इलाहाबाद	1218	2.68
जौनपुर	1188	2.61
शाहाबाद	1128	2.48
गाजीपुर	1127	2.48
रायबरेली	1087	2.39
प्रतापगढ़	894	1.97
बाराबंकी	769	1.69
गया	765	1.68
बहराइच	750	1.65
रायपुर	744	1.64
बनारस	672	1.48
पटना	644	1.42
लखनऊ	613	1.34
कानपुर	583	1.28
उन्नाव	536	1.22
आगरा	549	1.20
मिर्जापुर	527	1.60
जयपुर	473	1.04

उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि जो भारतीय मजदूर फीजी गए उनमें अधिकांश संख्या हिंदी प्रदेश के भारतीयों की थी जो अवधी या भोजपुरी भाषा का प्रयोग करते थे। कालान्तर में गुजरात, पंजाब, मद्रास आदि अन्य कई प्रांतों से भी भारतीय फीजी पहुंचे जिनकी भाषाएं अलग-अलग थीं वे अपनी भाषाओं का प्रयोग भी करते थे किंतु चूंकि अधिकांश भारतीय जो शर्तबंदी में गए थे प्रधानतः किसान थे, गन्ने के खेतों में काम करते थे और उत्तर प्रदेश या बिहार के थे वे हिंदी का ही व्यवहार करते थे इसलिए भारतीयों के मध्य आपसी वार्तालाप में हिंदी को ही प्रधानता मिली।

आज फीजी में भारतीयों का एक बड़ा वर्ग रहता है उसमें दक्षिण भारतीय, पंजाब प्रदेश के लोग, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश के भारतीय हैं। गुजराती भाषा भाषी सामान्यतः व्यापारी वर्ग के हैं, दक्षिण भारतीय प्रायः सरकारी कर्मचारी हैं तथा पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के व्यक्ति अधिकांशतः कृषक हैं। चूंकि आज फीजी में हिंदी भाषा भाषी संख्या में सबसे अधिक हैं तथा उनकी संख्या बहुलता प्रारंभ से ही थी इसलिए स्वाभाविक भी था कि हिंदी भाषा सभी भारतीयों के बीच अभिव्यक्ति का माध्यम बनती। अन्य भारतीय भाषाओं ने हिंदी को अपनी शब्दावली से समृद्ध किया। फलतः फीजी में भारतीयों के मध्य बोली जाने वाली हिंदी अवधी हिंदी का रूप है जिस पर प्रधानतयाः भोजपुरी तथा भारतीय भाषाओं के प्रभाव के साथ काई बीती तथा अन्य भाषाओं (अंग्रेज़ी) का भी प्रभाव है। फीजी के मूल निवासी काई बीती हैं, स्वाभाविक है कि काई बीती भाषा के भी उसमें शब्द होते। अंग्रेजी, फीजी में शिक्षा की भाषा है, शिक्षितों तथा शासकों की भाषां है। एक समय वहां अंग्रेज़ शासक थे फिर आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड जो फीजी के पड़ौसी देश हैं वहां की भाषा भी अंग्रेजी है इसलिए अंग्रेजी को देश में बड़ा सम्मान मिला। अंग्रेज़ी भारतीयों ने सीखी और अंग्रेजी ने हिंदी को प्रभावित किया।

फीज़ी में बसे भारतीयों की आपसी व्यवहार की तथा बोलचाल की हिंदी अलग है जबकि औपचारिक अवसरों पर वे परिनिष्ठत हिंदी का व्यवहार करते हैं। चूंकि बोलचाल की हिंदी प्रारंभ में किसानों तथा मजदूरों की भाषा थी, कई भाषाओं का उस पर प्रभाव था, आज भी फीजीवासी भारतीय अपनी बोलचाल की हिंदी को टूटी-फूटी बिगड़ी हुई और भ्रष्ट कहते हैं तथा विशेष औपचारिक अवसरों पर वे अपनी सहज स्वाभाविक फीजी हिंदी का प्रयोग न कर शुद्ध परिष्कृत संस्कृत शब्दावली प्रधान हिंदी का प्रयोग कर अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं। आज किसी भी भारतीय को देखकर वे संस्कृत प्रधान हिंदी में बोलने का प्रयास करते हैं। शुद्ध भाषा का मोह तथा परिष्कार की यह बात भारत से गए पंडितों ने उन्हें समझाई है। परिणामतः फीजी में हिंदी के दो स्वरूप विकसित हो रहे हैं। पहला रूप बोलचाल की हिंदी का है जिसे वे 'फीजी बात' या 'फीजी हिंदी' कहते हैं। दूसरा रूप संस्कृत शब्दावली प्रधान हिंदी का है। यह दूसरा रूप शिक्षा, प्रसारण का रूप है जिसका प्रयोग विद्यालयों में होता है, फीजी रेडियों में होता है, समाचार पत्रों में तथा औपचारिक अवसरों पर भाषाओं में, सामाजिक व सांस्कृतिक उत्सवों में होता है। दूसरा हिंदी का रूप खड़ी बोली का है जबकि पहला रूप अवधी का है। फीजी वासी भारतीय साहित्यिक रचना में खड़ी बोली हिंदी का प्रयोग करना चाहता है। उसकी दृष्टि में खड़ी बोली में रचना करने से ही उसकी रचना को साहित्यिक मान्यता मिल सकती है।

हर देश में व्यक्ति अपनी भाषा में अभिव्यक्ति चाहता है। फीजी की संस्कृति एक सामासिक संस्कृति है जिसमें काई बीती, भारतीय, आस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैंड के निवासी हैं तथा इनकी भाषा काई बीती (फीजियन), हिंदी तथा अंग्रेज़ी है। जैसा कि पहले की कहा जा चुका है, अंग्रेजी शिक्षितों, सम्पन्न व्यक्तियों तथा शासकों की भाषा रही है इसलिए कुछ भारतीयों ने भी अंग्रेज़ी में साहित्य लेखन किया पर ऐसे भारतीय संख्या में बहुत कम रहे तथा जनवर्ग में उनकी रचनाओं का प्रचार न हो सका।

आज भी फीजी का भारतीय समुदाय हिंदी में ही भावाभिव्यक्ति चाहता है। हिन्दी में ही कहानी कविताएं लिखता है। उसकी इन रचनाओं का प्रकाशन वहां के समाचार पत्रों में होता है। छपाई महंगी भी बहुत है, हिंदी का संबंध चूंकि रोज़गार और प्रतिष्ठा से जुड़ा हुआ नहीं है इसलिए हिंदी के बड़े पाठक समुदाय के होते हुए भी हिंदी पुस्तकों के ग्राहक नहीं हैं। परिणामतः हिंदी रचनाओं का प्रकाशन या तो वहां के हिंदी पत्रों में होता है जो संख्या में बहुत थोड़े हैं या फिर रेडियो फीजी के साहित्यिक कार्यक्रमों के माध्यम से उनका प्रसारण होता है। समग्रतः हिंदी लेखक का जीवन संघर्ष का जीवन है।

फीजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि पर्याप्त व्यापक है। फीजी में दो प्रधान द्वीप हैं—वीतीलेऊ तथा वनवालेऊ। वीतीलेऊ द्वीप में संस्कृति तथा साहित्य का प्रधान केन्द्र सूवा-फीजी की राजधानी है। वनवालेऊ द्वीप में प्रधान साहित्यिक केन्द्र लम्बासाहो दोनों केन्द्रों में भारतीय बड़ी संख्या में रहते हैं और हिंदी में साहित्य लेखन करते हैं। वीतीलेऊ में सूवा के अतिरिक्त बा, नांदी, लौटोका, नौसोरी तथा सिंगातोका भी हिंदी लेखन के अच्छे केन्द्र हैं। इन नगरों में हिंदी प्रेमी लेखकों ने हिंदी समिति तथा हिंदी केन्द्र बनाए हैं जो वहां के प्रतिष्ठित लेखकों के निर्देशन में गोष्ठियां, सभाएं तथा प्रतियोगिताएं आयोजित करते हैं जिनमें हिंदी कार्यक्रम होते हैं, कवि और लेखक अपनी रचनाएं सुनाते हैं। फीजी वासियों में अपनी भाषा हिंदी के प्रति विशेष मोह है। वे हिंदी को अपनी अस्मिता से जोड़ते हैं तथा

उनका दृढ़ विश्वस है कि अपनी भाषा की प्रतिष्ठा और सुरक्षा के माध्यम से ही वे अपनी संस्कृति को जीवित और सुरक्षित रख सकते हैं।

आज फीजी में हिंदी लेखक कविता, कहानी, लेख, संस्मरण, यात्रावृत्त, नाटक आदि सभी विधाओं में साहित्य रचना कर रहे हैं। उनकी रचनाएं वहां के हिंदी पत्रों में या तो प्रकाशित हो पाती हैं या फिर रेडियो फीजी से प्रसारित होती हैं। इन विधाओं में भी सबसे अधिक रचनाएं काव्य रचनाएं ही हैं। प्रस्तुत निबंध फीजी के प्रमुख हिंदी कवियों की एक छटा आपके सामने प्रस्तुत करेगा। ये रचनाएं फीजी में प्रकाशित छोटी-छोटी पुस्तिकाओं तथा हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के पुराने अंकों से संग्रहीत की गई हैं।

फीजी में बसे प्रवासी भारतीयों की ये काव्य रचनाएं संभवतः काव्य शिल्प की दृष्टि से चाहे विद्वानों को आकृष्ट न कर सकें, उनमें भाषागत अशुद्धियां तथा दंद संबंधी व्यतिक्रम भी मिलें किंतु भारत से हजारों मील दूर बैठे प्रवासी भारतीय किस प्रकार अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हैं इसकी एक बानगी ज़रूर देखने को मिलेगी। सुख-दुख की ये भावाभिव्यक्तियां उसके मन की निर्मलता को स्पष्ट करने वाली मन की सहज अभिव्यक्ति हैं। इनमें सुधार की आवश्यकता भाषा की दृष्टि से निश्चय ही है पर ये रचनाएं इसी रूप में भी फीजी वासियों के मन को मोहने वाली हैं। वे इन कविताओं को बड़े भाव-विभोर होकर सुनते हैं और अपने भावों को हिंदी में लिखकर संतोष कर अनुभव करते हैं।

काशीराम कुमुद

काशीराम कुमुद की गंणना फीजी के प्रतिष्ठित हिंदी साहित्यकारों के मध्य होती है। कुमुद जी सिंगातोका निवासी थे। वे हिंदी के अच्छे विद्वान, कर्मठ सेवी तथा सूझ बूझ वाले संपादक थे। उन्होंने 'प्रवासिनी' पत्र की स्थापना की तथा लंबे समय तक उसका संपादन किया। कुमुद जी ने कविताएं तथा कहानियां दोनों लिखी हैं। उनकी रचनाएं भारत की 'चांद' पत्रिका में भी प्रकाशित हुई हैं। इसकी भाषा बोलचाल की भाषा, सहज तथा प्रवाहमयी है। वे जीवन पर्यन्त हिंदी सेवा में लगे रहे तथा सन् 1987 में उनका देहावसान हो गया।

काशीराम कुमुद की भाषा शैली उनकी कविता 'हिंदी-बिखा' में देखिए—

शर्त में जिसने जीवन को उत्सर्ग किया,
हम उन्हीं के श्री चरणों में शीश झुकाते हैं,
हम रक्त बिन्दुओं से सींच सींच, हिंदी बिखा पनपाते हैं।।

हम फीजी के नन्दन कानन में,
सर्व जाति के तरुण-तरुणियों में,
गांव-गांव में झूम झूम कर,
हिलमिल जल वर्ष अंत में—

निज स्नेहांजलि चढ़ा चढ़ा कर, भक्ति भाव दर्शाते हैं।
हम रक्त बिंदुओं से सींच सींच हिंदी बिखा पनपाते हैं।।

फिर हिंदी साहित्य सम्मेलन की,
हम महफिल साज सजाते हैं,
बन उनके संहचर हम,
अपना रस भीना राग झंकाते हैं।।

उसी लतिका की स्वर लहरी को, फिर गीतों में गाते हैं।
हम रक्त बिंदुओं से सींच सींच हिंदी बिखा पनपाते हैं।।

अभी अभी तो किसलय ही है,
किसलय से कलियां होंगी,
कलियों से फिर फूल-फूल में,
मीटी रंग रलिया होंगी।

इसीलिए तो बिंधे "कुमुद" मधुर बने मंडराते हैं,
हम रक्त बिदुंओं से सींच सींच हिंदी बिखा पनपाते हैं।।

काशीराम कुमुदः हिंदी बिखा

कमला प्रसाद मिश्र

लोटोका निवासी पं० कमला प्रसाद मिश्र फीजी के हिंदी कवियों में सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। मिश्र जी की शिक्षा दीक्षा भारत में हुई तथा भारत में रह कर उन्होंने हिंदी संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। मिश्र जी भारत सरकार द्वारा अपनी हिंदी सेवाओं के लिए पुरस्कृत भी हुए। उन्होंने विपुल काव्य साहित्य की रचना भी की है। उनकी भाषा शुद्ध परिष्कृत संस्कृत शब्दावली प्रधान हिंदी है। मिश्र जी की कविता की बानगी देखिए—

बेड़म्बा में उस दिन वह व्यक्ति।
पकड़ कर सहसा मेरा हाथ।
सुनाने लगा कहानी- एक,
वेदना और व्यपा के साथ।
लग रहा है सुंदर रंगीन
देडम्बा सागर तट अभिराम।
यहीं पर आती थी प्रेयसी,
कभी मुझसे मिलने हर शाम।
इसी तट की लहरों के पास,
मिला करते थे हम दिन रात।
नहीं होता है या विश्वास,
कि यह है बीस साल की बात।
किंतु उस सागर तट पर आप,
खड़ा है यह देखों होटेल।
ठहरना एक शाम भी यहां ।
हो गया है पैसे का खेल।
और वह जगह जहां हर शाम,
सुनाते थे हम दिल की साध।
लाग है सम्मुख नोटिस आज,
वहां जाना है अब अपराध।।

कमला प्रसाद मिश्रः देडम्बा तट

एक गिरमिटिया छुरी लेकर बाहर निकल रहा था
क्रोध में उसके नयन से अंश्रु का सागर बहा था
साथियों के पूदने पर क्रोध से उसने कहा था—
यह नहीं साहब कुलम्बर, जंगली यह जानवर है
हम सबों के कष्ट का इस पर नहीं कोई असर है
देश में है राज इनका न्यय से इनको न डर है
यह अंधेरी कोहरी, उनके यहां दीवालियां हैं
मैं कभी रोया, बजाने झट लगे ये तालियां हैं
इस छुरी से चोख ज्यादा साहबों की गालिया हैं

हैं मुझे बर्दाशत, पाऊं नित्य आधी रात खाना
है मुझे बर्दाशत आधी रात सूखा गीत खाना
पर नहीं बर्दाशत मुझसे साहबों से लात खाना

कमला प्रसाद मिश्रः एक गिरमिटिया मजदूर

महावीर मित्र

महावीर मित्र 'बा' निवासी हिंदी कवि हैं जिन्होंने अपनी सरल सहज बोलचाल की भाषा में कविताएं लिखकर जनमन रंजन किया है। वे अच्छे फाग गायक थे तथा उन्होंने फाग, झूमर, चौताल आदि लोकशैलियों में पर्याप्त काव्य रचनाएं की हैं। मानव फाग वसंत नाम से इनका एक काव्य संग्रह भी प्रकाशित हुआ है।

महावीर मित्र मुख्यतः किसान थे। कम पढ़े लिखे थे पर रवाध्याय में उनकी रूचि थी। 1987 में उनकी मृत्यु हो गई। उनकी कविता का स्वरूप देखिए—

सबके लिए शुभ हो, कार्तिक अमावस्या की शाम।।
देख रहा हूं जिसके पास ज्यादा होता है धन,
लगा हुआ है काम क्रोध मद लोभ दुर्व्यसनों में मन।
न भूल जाए मानो धर्म, करना ही हित का काम,
सबके लिए शुभ हो कार्तिक अमावस्या की शाम।।
हे पाठक गण! हर्ष मनाओं दीपमाला के हैं मेले,
हट जाएगा 'महाबीर' दुख दारूण सकल झमेले।
नर जीवन को अमर बनाओ सदा करो आराम,
सबसे लिए शुभ हो कार्तिक अमावस्या की शाम।।

श्री महाबीर मित्र —दीपावली का आगमन

बाबू हरनाम सिंह 'हरनाम'

बिसारु ग्रामवासी स्कूल प्राध्यापक बाबू हरनाम सिंह 'हरनाम' मित्रों के बीच 'मास्टर जी' नाम से जाने जाते हैं। पहले तो स्कूल में अध्यापन का काम किया किंतु बाद में किसान के रूप में ही जीवन बिताने का निश्चय किया। किसानों के प्रतिष्ठित नेता हरनाम सिंह ओजस्वी वक्ता थे तथा हिंदी के प्रमुख लेखक तथा कवि के रूप में प्रख्यात रहे। हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रधान ने इन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषिक से सम्मानित भी किया। इनका स्वर्गवास 1985 ई० में हुआ। पं० हृदयनाथ कुंजरू प्रवासी भारतीयों की दयनीय स्थिति देखने के लिए फीजी गए थे। उनकी विदा के अवसर पर 'हरनाम' ने हृदयनाथ जी' शीर्षक एक कविता लिखी थी। कविता का एक अंश उदाहरणार्थ प्रस्तुत है—

होते विदा हो हम से पर दिलं में याद रखना।
प्रवासियों के हित की कुछ ख्याल करते रहना।।
सत्कार आपका हम कुछ भी न कर सके हैं।
अपराध सब हमारी हिरदै से साफ करना।।
सेवा में भेंट के हम उपहार दे रहे हैं।
दो बिंदु आसुंओं के स्वीकार इन को करना।।
सुन करके हम सबों की दुख दर्द की कहानी।
गो दर्द को हमारे उपचार करके हरना।।
गुरबत में हम किस तरह जीवन बिता रहे हैं।
खुद आपने है देखी जीना है या मरना।।
गम ख्वार हो रही है हस्ती कृषि जनों की।
इन बेकसी के खातिर कुछ कष्ट आप सहना।।
हिरदै के नाथ हो तुम हिरदै का हार बन कर।
हरनाम के हृदय पर आय कुंजरु भी रहना।।

हरनाम सिंह हरनामः हृदयनाथ जी

महेन्द्र चन्द्र 'विनोद'

उर्दू, हिंदी तथा अंग्रेजी भाषाओं के ज्ञाता महेन्द्र चन्द्र 'विनोद' लेखक कवि और पत्रकार के रूप में फीजी में विख्यात हैं। श्री विनोद 1982-1986 तक फीजी के सर्वाधिक महत्वपर्णू हिंदी साप्ताहिक 'शांतिदूत' के संपादक रहे तथा अनेक हिंदी लेखकों को उन्होंने प्रोत्साहित किया। उनका मार्गदर्शन किया तथा फीजी में हिंदी के विकास में सक्रिय सहयोग दिया। वे फीजी हिंदी साहित्य समिति को कोषाध्यक्ष पद पर भी रहे। मूलतः महेन्द्र चन्द्र जी कृषि विज्ञान के विशेषज्ञ है तथा लंबे समय तक फीजी कालेज आॅफ एग्रीकल्चर के प्रिंसिपल भी रहे। वहां के अवकाश प्राप्त कर वे शांतिदूत के संपादक बने। उन्होंने कविताएं तथा लेख आदि तो लिखे ही उनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान 'शांतिदूत पत्रिका' मे नियमित रूप से 'थोरा हमरो भी तो सुनो' स्तम्भ के अंतर्गत फीजी हिंदी में देश तथा समाज की समस्याओं पर व्यंग्य लिखा जो पाठकों के मध्य विशेष लोकप्रिय हुआ। उनकी शैली प्रभावपूर्ण, तीखी तथा व्यंग्य प्रधान है। विनोद जी ने फीजी में हिंदी पत्रकारिता को विशेष प्रतिष्ठा दी है। उनकी काव्य रचना की बानगी के लिए उनकी कविता 'मृदु रागिनी-प्रवासिनी' की कुछ पंक्तियां उद्धृत की जाती है।

हिंदी ही हिंद शान है, हिंदी बिना अपमान है।
ध्यान में हिंदी किये, बढ़ते कुमुद जी आप हैं।
हो सहायक ईश्वर तेरा जो सब जगत का बाप है।।

सहयोग दूं मैं आपको, सहयोग देते हैं सभी।
बोल-बाला हो तेरी, अब प्रवास में 'प्रवासिनी'।।

प्रवासिनी खिलती रहे, बढ़ती रहे चलती रहे।
गुण से भरे सुंदर बने, हंसती रही बसती रहे।।

आठों पहर चर्चा करे विनोद ऐ 'प्रवासिनी'।
दुख नाशिनी, सुख दायिनी, सद्भाविनी, मृदु-रागिनी।।

महेन्द्र चन्द्र विनोदः मृदु-रागिनी प्रवासिनी

ज्ञानीदास

तारा, ज्ञान, झंकार आदि पत्रिकाओं के संस्थापक तथा संपादक ज्ञानीदास फीजी में हिंदी के जागरूक समर्थक माने जाते हैं। वे कुशल कवि, सूझ बूझ वाले संपादक तथा अच्छे गद्य लेखक हैं। वे नसीनू स्थित तारा प्रेस के स्वामी हैं तथा भारतीय उपनिवेश फीजी, फीजी गल्पिका, गुप्त शक्तियों तथा मृदुला आदि कृतियों के लेखक हैं। ज्ञानीदास कबीरपंथी हैं तथा कबीर पंथ महासभा के तत्वाधान में उन्होंने हिंदी के प्रसार प्रचार में अमूल्य सहयोग दिया है। ज्ञानीदास एक संवेदनशील कवि हैं। एक कविता की कुछ पंक्तियां उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं जिसे कवि ने भारतीयों के फीजी में आने के सौ वर्ष पूरे होने पर गिरमिटियों की प्रशंसा में लिखा है—

बीत गए सौ वर्ष द्वीप के, भारतीय फीजी आए।
कर्मण्य, कर्मनिष मानव को इस भूमि पर लाए।।
यूरोप में जब विलासिता की धधक रही थी ज्वाला।
निकल पड़े थे गोरे भरने को परदेशों में प्याला।।

पराधीन था भारत बेबस, उस पर उनकी आंख गड़ी।
मजबूरों से लाभ उठाये, शोषणता की धास बढ़ी।।
भांति भांति के प्रलोभनों से भारतीयों को भरमाया।
और शर्तबंदी में जकड़े उनको फीजी तक लाया।।
गिरिमिटिये कस लिए कमर, सबने अपना सुख दुख बांटा।
चट्टानों कोचूर चूर-चूर कर दिया, बन जंगल को काटा।।
भर दिया उपज से फीजी को, हर तरह से देश आबाद किया।
रखी लाज भारत मां की, चाहे खुद अपने को बर्बाद किया।।
फीजी को चमन बनाने में हमने भी नहीं कसर छोड़ी।
सर्वस्व निछावर कर डाला, दोदों की बात नहीं तोड़ी।।
देख यहां की दलित अवस्था, 'जानी' जान है अकुलाये।
हाय मुनष्य के महापतन के अभी तक है धन दाये।
बीत गये सौ वर्ष देश के भारतीय जन फीजी आए।।

ज्ञानीदास : बीत गए सौ वर्ष

ईश्वरी प्रसाद चौधरी

ईश्वरी प्रसाद चौधरी फीजी शुगर केन ग्रोवर्स कौंसिल के एक सम्मानित सदस्य रहे हैं, किसानों के प्रभावशाली नेता तथा हिंदी के एक प्रतिष्ठित लेखक हैं। उन्होंने कविता के साथ कहानी और निबंध भी लिखे हैं तथा उनकी रचनाएं भारत की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में छपी भी हैं। 1987 ई० में चौधरी जी का निधन हुआ। फीजी के राष्ट्रीय सांस्कृतिक पेष 'नगीना' पर लिखी उनकी कविता की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं।

तरल तरंगित मादक पेय।
सघन विपिन का कल्पमूल यह चिन्ता हरण अचूक अजेय
मधुर सोमरस यह फीजी का शांति प्रदायक सुखकरं पेय
तरल तरंगिता मादक पेय।
जब भी निशा व्यथा से लंबी कटना हो जाती दुखार
साथ यही हंस हंस कर देता लुटा स्वतः अपना घरबार
मूक प्यार से अधर सुधा बन ममता स्नेह अपरिमित देय
तरल तरंगिता मादक पेय।
यह प्रशांत का निज उत्पादित, जगता शीत तराई कूल
दुग्ध फेन सम स्वाद तिंक्त कटु, ऊषा शीत में सम अनुकूल
फीजी की यह देन विश्व को शान्त चिन्तना इसका ध्येय
तरल तरंगिता मादक पेय।

ईश्वरी प्रसाद चौधरी: नगीना

रामानारायण

रामानारायण का जन्म फीजी के बीतीलेऊ द्वीप के 'बा' नगर में हुआ। हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन भारत सरकार की छात्रवृत्ति पर भारत में रहकर किया। फीजी के शिक्षा मंत्रालय में उच्च हिंदी अधिकारी के रूप में हिंदी पाठ्यक्रम एकक से लंबे समय तक जुड़े रहे। उन्होंने हिंदी की अनेक पाठ्य पुस्तकें तैयार करीं। हिंदी शिक्षण तथा हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण का आयोजन तथा संयोजन भी किया। जीवन पर्यन्त वे हिंदी के एक सशक्त, सक्रिय समर्थक रहे। फीजी में हिंदी के प्रचार प्रसार में उनका बड़ा योगदान है। आकर्षक व्यक्तित्व के धनी, सौम्य, मधुर भाषी तथा शालीन रामानारायण ने हिंदी के अनेक नाटकों में अभिनय किया, कवि सम्मेलनों में स्वरचित कविताएं सुनाई तथा शासकीय स्तर पर हिंदी अध्ययन तथा अध्यापन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया।

रामानारायण ने अधिक नहीं लिखा पर उनकी कविताएं हिंदी प्रेमियों को बड़ी पसंद आती थीं। हिंदी लेखकों में वे विशेष सम्मानित व्यक्ति थे। फीजी में हिंदी दिवस राष्ट्रव्यापी स्तर पर मानने में उनकी बड़ी सक्रिय तथा महत्वपूर्ण भूमिका रही है। रामानारायण एक मेधावी कवि थे। उनकी लंबी कविताएं—सागरिका, मंथरा, गिरमिट उच्चकोटि की पद्य रचनाएं है। रामानारायण द्वारा लिखित 'हां मैं मंथरा हूं' कविता की कुछ पंक्तियां उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं—

हां मैं वही मंथरा हूं
मानस की उपहासित पात्र
कितने युग बीते
पर मेरा दर्द न कोई पहचान सका।
मानस तो सब पढ़ते है
पर मानस का मर्म न कोई जान सका
गर्वोक्ति कहोगे इसके तुम मेरी
चुप न रहूंगी पर अब मैं
कह डालूंगी सबसे
अपनी चोट गहरी
मैं न होती तो बतलाओ
कौन जानता राम को
दशरथ के पुत्र भर
रह गए होने इतिहास में
यह मैं हूं कि जिसने बनाया
राम को जन जन का राम
तभी तो जग गुनगुनाया
पतित पावन सीताराम।

रामानारायण: हां मैं मंथरा हूं

सलीम बख्श

श्री सलीम बख्श ने यूनीवर्सिटी ऑफ साउथ बेसिफिक में पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में काम करते हुए अपनी कविताएं तथा कहानियां लिखकर हिंदी की सेवा की है। फीजी में गिरमिट प्रथा पर उन्होंने शोध कार्य किया तथा अनेक महत्वपूर्ण निबंध लिखे। सलीम बख्श का हिंदी और उर्दू दोनों ही भाषाओं पर अच्छा अधिकार है। उनकी कविताओं में अरब फारसी शब्दों की बहुलता है। सलीम बख्श की एक कविता 'आखिरी समय' से कुछ पंक्तियां उदाहरणार्थ प्रस्तुत की जाती है।

उन लम्हों का कसम है अब तुमको
कभी याद न मुझको तुम करना
गर भूल से याद आ जाऊं कभी
प्रिय! भूलने की कोशिश तुम करना
मेरी याद में न कोई फूल खिले

न जूही चमेली या बेला उगे
न लहद पे मेरी मिट्टी ऊंची हो
न कोई काम का मेरे कुतबा लगे

फिर नाजुक हाथों से तुम ऐसा करना
तुम ऐसा करना! हमवार मिट्टी कर देना
बस सब्ज़ घासोन को रहने देना
और मेरी कब्र पर उन्हें उगने देना

फिर दिल से भुला देना मुझको
न कोई निशान कहीं रखना
इस पर भी गर याद आ जाऊं कभी
तुम खुशी से मुझको भुला देना।

सलीम बख्शः आखिरी समय

अनुभवानंद आनन्द

अनुभवानंद की गिनती भी फीजी के साहित्यकारों में सम्मानपूर्वक की जाती है। उनकी दो रचनाएं गुलाबी आंचल (उपन्यास) और काव्यकुंज (काव्य संग्रह) प्रकाशित हुई हैं तथा चर्चित भी रही हैं। अनुभवानंद व्यवसाय की दृष्टि से अध्यापक रहे हैं, हिंदी और अंग्रेजी पर उनका अच्छा अधिकार है। उनकी कविता की बानगी के लिए होली विश्व मनाये की पक्तियां उद्धृत हैं।

वसुधा स्वर्ग बना लो मिल कर, डर में प्यार बसाये
मनाये।।
लटक उठी संस्कृति की ज्योति, उदय हुआ अपना
वेदना युक्त हुआ मानव, खिल उठा मन-उपवन।
नियति के गतिरोध करेंगे, एकता शेष है केवल।
आज मानवता ढूंढ चुका है, स्नेह भरा एक दर्पण।।
सूख रहे जीवन बगिया को, फिर से आज सजाएँ होली विश्व
मनाये।।

अनुभवानंद आनंदः होली विश्वननाएं

पं० हरीश शर्मा

हिंदी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पर समान रूप से अधिकार रखने वाले पं० हरीश शर्मा व्यवसाय से एडवोकेट हैं। फीजी की राजनीति में भी उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है तथा वे देश के उपप्रधान मंत्री भी रह चुके हैं। फीजी की सनातन धर्म सभा के सक्रिय सदस्य है। तुलसी उन के प्रिय कवि हैं। शर्मा जी मानस पर व्याख्या भी देते हैं। मधुर कंठ के धनी शर्मा जी ओजस्वी वक्ता है तथा जन समुदाय को बांधे रखने की उनमें अद्धभुत शक्ति है। फीजी में हिंदी के विकास तथा प्रचार में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। इंदिरा गांधी की मृत्यु पर 'श्रृद्धा के दो फूल' उनकी कविता शांतिदूत में प्रकाशित हुई है जिसका अंश उद्धृत किया जा रहा है—

नेहरू के बाद शास्त्री जी छोड़े भारत मइया को।
इंदिरा तुरंत साहिल बनकर ली हाथ में देश की नैया को।।
कभी रूप चंडी का लेकर कभी जवाहर का जौहर।
भारत की बलि वेदी पर सब कुछ कर दी माँ न्योछावर।।
मानक की कुटिल क्रूरता पर शर्म को भी लज्जा आई।
जब हृदय हीन बेटों ने अपनी माँ पर गोली बरसाई।।
काली स्याही से रँगा वेश, सिर झुका कलंकित टीकों से।
नहीं कलंक धुलेगा यह तेरे भी रूधिर के छीटों से।।
हम दूर बसे फीजी वासी चरणों में शीश नबाते हैं।
माता तेरे कृत्यों पर हम श्रृद्धा से फूल चढ़ाते हैं।।

हरिश्चन्द्र शर्माः श्रृद्धा के दो बोल

बलराम वशिष्ठ

सिंगातो का निवासी बलराम वशिष्ठ की फीजी में हिंदी के विकास तथा प्रचार प्रसार में सक्रिय तथा उपयोगी भूमिका रही है।

बाबू कुँअर सिंह

परिमाण की दृष्टि से बाबू कुँअर सिंह ने पर्याप्त रचनाएं की है। वे अपने को राष्ट्र कवि भी कहते हैं तथा लम्बे समय से काव्य रचना कर रहे हैं। उनकी रचनाएं यदा कदा शांतिदूत में प्रकाशित होती रहती हैं। इनकी कविताओं में लयात्मकता है तथा दंद बद्ध होती है। इंदिरा गांधी की मृत्यु पर श्रृद्धांजलि स्वरूप प्रकाशित उनकी कविता की कुछ पंक्तियाँ देखिए—

फूलो से गोदी भर दी है
आकाश और धरती कांपी
खिलखिलाती उठी गोदी मां की।
भारत के पूत सपूतों का
इतिहास पढ़ो जगजीवन का
भकती सकती तन मन धन का
इंद्रा माता ने अर्पण की
ऊंच नीच गोरे काले
भू के जितने हैं मत वाले
धरती माँ जिन जिन को पाले
आँखों से मोती छलकी
राष्ट्र कवि कुँअर सिंह कहे
गुण की गणना जो गुण गहे
ज्यों घी निकले जब दूध मथे
प्रभु पीर हरो अपने जन की

-बाबू कुँअर सिंह : श्रीमती इंद्रा गांधी

सुखराम

साधारण किसान परिवार में पले बढ़े सुखराम हिंदी के अनन्य भक्त हैं और मर्म स्पर्शी कविता लेखन में कुशल हैं। हिंदी के प्रचार प्रसार में सक्रिय हैं। 'हिंदी, पर लिखी उनकी कविता देखें;

हिन्दी हमारी मातृभाषा, हिंदी हमारा धर्म है।
हिन्दी हमारी संस्कृति, हिंदी हमारा कर्म है।
भारत की प्राचीन भाषा, हिंदी को प्रणाम है।
अन्य भाषा की तरह हिंदी का बड़ा नाम है।।

फूले फले हिंदी भाषा यही मेरा अरमान है।
हिंदी को न भूलें हम जब तक तन में प्राण है।
कोई उंगल न उठाये हम भारतीयों पर कभी।
प्राचीन भाषा हिंदी मिटने नहीं पाये कभी।।

उठो जागो अभी, हे मेरे वतन के लाल।
अनपढ़ को पढ़ाओ हिंदी, कर दो तुम कमाल।
घर घर ओ गाँव गाँव में हो हिन्दी का प्रचार।
अमर रहे हिंदी भाषा 'सुखराम' कहे पुकार।।

सुखरामः हिंदी हमारी मातृभाषा

राम अवतार गुप्त

जोसोरी निवासी राम अवतार गुप्त की कविताएँ भाषा और दंद की दृष्टि से अन्य कवियों की तुलना में श्रेष्ठ है। साधारण शिक्षा प्राप्त होते हुए भी इनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग मिलता है।

तेरे विमल विशाल बदन में छिपी विश्व की है माया।
प्रकृति नटी के रंगमंच पर नाट्य कृत्य है दिखलाया।।

कहीं कृषकगण तरस रहे हैं, मचा हुआ है हाहाकार।
अनावृष्टि ने छीन लिया है इन दुखियों का सब अधिकार।।

माताएं हैं कहीं सिसकती कहीं बिलखते शिशुगण आज।
सुनकर जिनकी करूण पुकारें विचलित होता सभ्य समाज।।

देव चक्र चल रहा विश्व में जग पर रूठे हैं करतार।
करूणामय यह विनय हमारी कर दो शांत सकल संसार।।

-राम अवतार गुप्तः हमारी विनय

अक्षैबर सिंह

कवानांगासाऊ सिंगातोका निवासी अक्षेबर सिंह का नाम फीजी के हिंदी सेवियों में एक प्रतिष्ठित नाम है। अक्षेबर सिंह पेशे से किसान हैं किंतु कविता लेखन मे विशेष रूचि प्रारंभ से ही रही। सरल सहज भाषा में हास्य व्यंगपूर्ण कविता लेखन उनकी विशिष्टता है। दीवाली पर जुआ खेल कर सारी कमाई गवां देने वाले व्यक्ति की क्या स्थिति होती है इसका वर्णन अक्षैबर सिंह की कविता भाग्य परीक्षा में देखिए।

दीपमलिका गई ओर गई अमावस की ज्वार
लेकिन भयवा अभी नहीं टूटा जुये का तार
दारू मुर्गा और नंगोने का है खूब बहार
जिसका पासा चला उसकी की चलती है खीच।
जिसका पासा गिरा बैठ कर आँखे रहा है मींच।
जो जीता सो रम से अपना गला रहा है खींच।।

मुश्किल से मिलती हारे को एक नंगोने की प्याली।
घर लौटे तो लाज लगे है जेब हुआ बिल्कुल खाली।
जूता टोपी तक हारे हैं, बिगड़ जायेगी घरवाली।।

फली दिवाली जिसको वह तो बजा रहा है ढोल।
मातम मना रहे हैं घर में जिसकी नकली पोल।
भाग्य परीक्षा का मौका है भयवा गांठी खोल।।

अक्षेबर सिंहः भाग्यपरीक्षा

अमरजीत कँवल

फीजी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार जोगिन्दर सिंह कंवल की पत्नी अमरजीत कँवल की लोक साहित्य तथा लोक टोलियों में विशेष रूचि है उनकी मातृभाषा पंजाबी है किंतु हिंदी पर भी उनका अच्छा अधिकार है। इनकी कविता की कोई अलग से प्रकाशित पुस्तक देखने में नहीं आई किंतु हिन्दी पत्रिकाओं में उनकी कविताएं निरंतर प्रकाशित होती रहती है। उनकी कविताओं में लोक शब्दावली का पर्याप्त प्रयोग है गिरमिटियों के जीवन पर भी उन्होंने पर्याप्त लिखा है।

सुन लेहु हमरा संदेशुआ रे लोगो
भुलाए नाहीं देना कभी कोई गिरिमिटिया
पैदा भये जब ईह दुनिया माँ आय के

घरुआ छुड़ाय काले पानी भेज दीना जो
फूटे लेख फोड़े मिट्टी देख आर काटिया
खेतुआ माँ मैया रोय, कोठरी माँ बेटुवा
आँसू सेन आँख खोले देख आर काटिया।

'हाय-हाय' दिन जाये, 'रोय-रोय' रेन जाय
काली॰ कोठरिया माँ सोय गिरमिटिया
रावण जो कोई आ के सीता का हर लीना
खेत न 'लखन' कोऊ वेहाल 'हे राम' सेप गिरमिटिया

अमरजीत कँवलः कितु जाए राघा

जोगिन्दर सिंह कँवल

बा निवासी श्री जोगिन्दर सिंह कँवल व्यवसाय से अध्यापक है। कई वर्ष का बा स्थित खालसा कालेज के प्रिंसिपल रहे और वहीं से अवकाश मुक्त हुए। श्री कँवल फीजी के प्रतिष्ठित हिंदी गद्य लेखक हैं। गिरमिट जीवन तथा फीजी की समस्याओं को लेकर गई उपन्यास उन्होंने लिखे। सबेरा, धरती मेरी माता, करवट, सात समन्दर पार मेरा देश मेरे लोग उनकी प्रसिद्ध गद्य कृतियाँ है। इनकी कविताओं का संग्रह 'यादों की खुशबू' नाम से प्रकाशित हुआ है। फीजी में हिंदी संबंधी गतिविधियों में उत्साह पूर्वक मान लेते रहे हैं। कँवल साहब की मातृभाषा पंजाबी है किंतु हिंदी तथा उर्दू पर भी अच्छा अधिकार है। उनकी रचनाओं में पंजाबी तथा उर्दू का प्रभाव स्पष्ट झलकता मिलेगा। यादों की खुशबू से एक कविता के अंश प्रस्तुत हैं जिसमें गिरमिटिया बाबा का चित्रण है—

जुट गया था यह भारतीय लाल
सी॰ एस॰ आर॰ कम्पनी के लिए
खेत बनाते संवारते
टूटने लगी हड्डियाँ
होने लगा बुरा हाल
हल की जगह आप हल बनकर
बैल की जगह आप बैल बनकर
भूमि को गहरी खोदता रहा
मिट्टी ढोता रहा
मिट्टी पाटता रहा
मिट्टी को मैदे जैसी
महीन बनाने के लिए
उसमें अपना पसीना निचोड़ता रहा
फौलादी हाथों से
छने आटे भी बनाता रहा
सारा जीवन मिट्टी का गोला बनकर
कम्पनी के खेतों में रेंगता रहा
जिस मिट्टी में काम करता करता
मिट्टी से मिट्टी हुआ था
आज लेटा है उसी में
मिट्टी का ढेर बनकर
गाँव का दादा
बूढ़ा गिरमिटिया बाबा

-जोगिन्दर सिंह कँवलः यादों की खुशबू

विजयेन्द्र सुधाकर

फीजी हिंदी साहित्य समिति के अध्यक्ष श्री विजयेन्द्र सुधाकर फीजी में हिंदी के प्रचार प्रसार में सक्रिय हिंदी सेवी विद्वान है। वे मुख्य रूप से अध्यापक हैं। प्रायमरी स्कूलों में, नसीनू टीचर्स कालेज में उन्होंने अध्यापन

किया। एक लंबे समय से वे हिंदी में कविताएं, निबंध लिखते रहे। फीजी के साप्ताहिक समाचार पत्र 'शांतिदूत' में 'हिंदी शिक्षण' पर कई पाठ लिखे जो फीजी में हिंदी भाषा सीखने वालों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। सौम्य, शालीन, अद्भुत संगठनकर्त्ता तथा हिंदी के प्रतिबद्ध विद्वानों में सुधाकर जी का नाम लिया जाता है।

राघवानंद शर्मा

राघवानंद शर्मा का नाम हिंदी प्रेमियों में सम्मानित नाम है। वे जागृति पत्र के संपादक रहे, सूचना प्रसारण मंत्रालय के 'फीजी वृत्तांत' तथा 'शंख' पत्रिकाओं के संस्थापक संपादक भी थे। उन्होंने कई वीडियो फिल्म भी बनाई जिनमें दीवाली अति चर्चित भी रही। संपादक होने के अतिरिक्ति राघवानंद अच्छे कवि भी हैं। उनकी भाषा शुद्ध व्याकरण सम्मत प्रवाहमयी है।

हे पूर्वजो हमारे, खुशहाल हम न होते।
अगर यतुम इस धरती पर आए न होते।

वीरां पड़ा था फीजी, सिसकती थी खेतियाँ
मुश्किल से खिंच रही थीं, शासन की डोरियाँ
रोती रही यह धरती, भर करके हिचकियाँ
तुम को बुला रही थी देकर दुहाइयाँ

गन्ने यहाँ लहलहाए न होते
अगर हल तुमने चलाए न होते

बिगड़ चुकी थी हालत, मुश्किल था संभलना
आसां नहीं था फीजी के नक्शे का बदलना
निश्चित था इस देश का गर्क में मिलना
मंजिले-ए-मकसूद से जा दूर फिसलना

फिसल जाता यदि तुम उठाए न होते
उठाने को कांधा लगाए न होने।
रमणीक देश फीजी हर्गिज न कहाता
जंगलों का टापू जंगल ही दिखाता
निज मुल्क से अगर, जो तोड़ के नाता
बनते नहीं तुम इसके भाग्य विधाता

गगन चुंबी महल पर सर उठाए न होते
ईंट महलों के यदि तुम जुटाए न होते।

हर गाँव में रामायण की गूँज सुनाना।
घर घर पे हनुमान के झंडे फहराना।
भारतीयों का शान से भारतीय कहाना।
फख्र से हर काम में अपने सर को उठाना।।

शायद हमारे नसीब यें न होते।
जड़ मजबूती से अगर तुम जमाए न होते।।

राघवानंद शर्माः अगर तुम इस धरती पर आए न होते

सरस्वती देवी

सरस्वती देवी ने भारत मे रहकर हिंदी, संस्कृत और अंग्रेजी का अध्ययन किया और उच्च शिक्षा प्राप्त कर फीजी आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित विद्यालयों में अध्यापन कार्य किया। कविता लेखन में प्रारंभ से ही रूचि रही। इनको अनेक कविताएं फीजी की पत्र पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। उनकी कविता 'रेवा नदी' से बानगी के लिए कुछ पंक्तियां प्रस्तुत की जा रही हैं।

यह रेवा बहती जाती है
पर्वत माला से निकल निकल
यह चलती है बल खाती। यह रेवा......
तट पर कुछ खड़े शिकारी हैं
हाथों में बंसी भारी है
थामे है हाथों में डोरी
किस्मत उनकी क्या लाती है। यह रेवा......
इसके तट पर सब आते हैं
हँसते और नहाते हैं
गोरे काले नर-नारी
सबके दिल को यह आती है। यह रेवा......
रेवा की सुंदर हस्ती है
रेवा की मादक मस्ती है
इसका जल है मद सा मादक
जिसमें यह नित मदमाती है। यह रेवा......

-सरस्वती देवीः रेवानंद

कल्लू

नई तासीरी रेवा निवासी कल्लू धर्म प्रचारक कवि और लेखक हैं। समाज सुधार के कार्यों में उनकी गहरी रूचि है। हिंदी तथा संस्कृत भाषाओं का इन्हें अच्छा ज्ञान है। कल्लू ने कई सुंदर कुण्डलियाँ लिखी हैं। इनके विषय भी समाज सुधार ही है—

घर घर दीपक जले, घर आँगन उजियार।
कल्लू बुरा न मानिये, मन मंदिर अँधियार।।
मन मंदिर अँधियार वृथा तब दीपक जाले।
कैसे हो कल्याण बता जब मन हैं काले।।
कह कल्लू कविराय बड़े हैं पदवी वाले।
धर्म कर्म को छोड़ बने हैं पंडित आले।।

कल्लूः कल्लू की कुंडलिया

ए ए शमीम

ए० ए० शमीम साहब की गणना फीजी के अच्छे शायरों के बीच होती है। शमीम साहब ने उर्दू, अरबी, फारसी, हिंदी का अध्ययन किया है। वे रेडियो नाटक कहानी लेख और कविताएं लिखते हैं तथा मुशायरों में भी भाग लेते हैं। समाज कार्यों में इनकी रूचि है। इनकी कविता के विषय प्रायः दार्शनिक होते हैं। इनकी भाषा में अरबी फारसी शब्दों की बहुलता होती है इसलिए सामान्य पाठक के लिए वे दुर्बोध होते हैं। शमीम साहब की कविता का एक उदाहरण देखिए—

भले कामों का दुनिया में भला अंजाम होता है।
यह वह शोला है जो आखिर चिरागे शाम होता है।।

अगर तू जिन्से इंसा है तो इस बाजार में हरदम।
हर एक सौदे से तेरा ही निरांतर दाम होता है।।

तहम्मुल, बुर्दबारी और सरापा नर्म गुफ्तारी।
यही हथियार है जिनसे कि दुश्मन राम होता है।।

हम हिंदू है कि मुस्लिम है कि गोरे हैं कि हैं काले।
सभी जन्नत में जाते हैं जो फैजे आम होता है।।

शमीम अंधे जमाने की रविश जाने तो क्या जाने।
कभी मशहूर होता है कभी बदनाम होता है।

-ए० ए० शमीमः भला अंजाम

चन्द्रदेव सिंह

चन्द्रदेव सिंह नौसोरी निवासी कवि हैं जिन्हें विश्वविद्यालयी शिक्षा तो प्राप्त नहीं हुई किंतु स्वाध्याय से इन्होंने हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। चन्द्रदेव सिंह की गणना हिंदी के अच्छे कवियों में होती है। फीजी समाचार नामक हिंदी साप्ताहिक पत्र के यह संपादक भी रहे। इनकी रचना है भारत की भी पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं।

जग की मोहक माया का, पथ कितना कंटकमय है।
पथ डगमग करते रहते फिर भी पंथी निर्भय है।।
दो दिनों की तरुणाई है चार दिनों का डेरा।
फिर भी सूरज आता है, लेकर मंचनी सवेरा।।
जीवन उनका लघुता में सार्थक इसीलिए कि परिवर्तन है।
जो परिवर्तन के संग है, सार्थक उसका जीवन है।।

चन्द्रदेव सिंह : लघु जीवन

राम नारायण गोविंद

राम नारायण गोविंद का नाम फीजी में हिंदी के प्रचार प्रसार में लगे हिंदी प्रेमियों के मध्य बड़े सम्मान से लिया जाता है। वे फीजी हिंदी साहित्य समिति के सचिव थे और फीजी में देशव्यापी स्तर पर हिंदी दिवस के आयोजन में उनका बड़ा महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 1983 में नई दिल्ली में आयोजित विश्व हिंदी सम्मेलन में वे फीजी के प्रतिनिध भी रहे हैं। नसीनू टीचर्स कालेज में वे हिंदी प्राध्यापक रहे हैं। उन्होंने हिंदी में विविध विषयों पर लेख लिखे हैं जो फीजी की पत्रिकाओं में तो प्रकाशित होते ही रहते हैं भारत की भी अनेक प्रतिष्ठित पत्रिकाओं—सम्मेलन पत्रिका, धर्मयुग, राष्ट्रभाषा और विश्वदर्शन आदि में प्रकाशित हुए हैं। राम नारायण हिंदी के प्रति प्रतिबद्ध, अच्छे संगठनकर्त्ता, ओजस्वी वक्ता तथा प्रभावशाली गद्य लेखक हैं।

बाबूराम 'अरुण'

लम्बासा निवासी बाबूराम 'अरुण' मूलतः हिंदी अध्यापक हैं। नसीनू टीचर्स कालेज में भी हिंदी प्राध्यापक रहे। भुलई भगत तथा मिरर मालती नाम से भी अरुण जी रचना करते रहे हैं। इनकी रचनाएं प्रायः हास्य व्यग्यपूर्ण हैं और हिंदी पत्रों में निरंतर प्रकाशित होती रही हैं। इनकी हिंदी भाषा पर अच्छा अधिकार है। इनकी रचना का एक अंश उदाहरण के लिए प्रस्तुत है—

तुम मुझे बहुत तरसाती हो
जीवन का सत्य कठोर सही
जीवन का मार्ग कठोर सही
मेरी इन जलती राहों में
तुम नाटक जल बरसाती हो
तुम मुझे बहुत तरसाती हो
जो डर से आज उगलता है
जो खुद ही घुट कर जलता है
उसकी कटु आग बुझाने को
तुम क्यों बादल बन जाती हो
तुम मुझे बहुत तरसाती हो

बाबूराम अरुण : तुम मुझे बहुत तरसाती हो

आर० एस० प्रसाद मुनि

व्यवसाय में कृषक तथा प्रतिबद्ध हिंदी सेवी आर० एस० प्रसाद मुनि फीजी के हिंदी लेखकों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। मुनि जी नांदी के निवासी हैं तथा स्वाध्याय से उन्होंने हिंदी सीखी। उनकी रचनाओं के विषय तथा जीवन दर्शन है। भाषा सरल तथा प्रवाहमयी है। व्यंग प्रधान कविताएं भी मुनि ने लिखी है। शैली की बानगी के लिए उनकी कविता विपत के काले बादल का अंश प्रस्तुत है।

लग गई बहने बदलिया
विपत की काली काली
सुखद जीवन अब हमारी
मिटने को है खाली खाली
सुख समझते हैं जिसे हम
वह न सुख है दोस्तो
दीखने हम को लगे अब
जीवन भविष्य खाली खाली
जब विपत सिर गिरेगी
आ अचानक एक दिन
तो क्या करेगा छटपटा के
जब होगा समय खाली खाली
सुख के मामा सब हमारे
फिर कहीं न रह जाएंगे
दोस्तों जीवन लता
सूख जाएगी डाली डाली

आर० एस० प्रसाद मुनि : विपत के काले बादल

करुनागरन नायर

लौतोका निवासी करुनागरन नायर फीजी सरकार के कृषि विभाग से संबद्ध सरकारी अधिकारी हैं तथा उन इने गिने कवियों में हैं जो फीजी हिंदी में रोचक छंदबद्ध कविता लिखते हैं। श्री नायर की कविताएं चूंकि बोलचाल की भाषा में है इसलिए जनता में बड़ी लोकप्रिय हुई हैं। शांतिदूत पत्रिका की एक पुरानी फाइल से एक कविता 'शांतिदूत ने स्कूल छुड़ाया' उदाहरण के लिए प्रस्तुत की जा रही है।

हूं राकी राकी का निवासी, ज्वाला हमारे नाम।
पढ़ा लिखा हम कुछ नहीं बस करित खेल में काम।।
अनपढ़ कैसे भवा और ई है केकर करतूत।
पांच रोज में स्कूल छोड़ा इस भयवा शांतिदूत।।

शेषांश पृष्ठ 68 पर

भाषा संगम

वनों से गुजरते हुए

—राबर्ट फ्रॉस्ट

[राबर्ट फ्रॉस्ट अमेरिका के प्रसिद्ध कवि हैं। इनकी जिस प्रसिद्ध कविता का हिंदी रूपांतर यहां प्रस्तुत किया जा रहा है, वह भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू को बेहद पसंद थी। अपने अंतिम दिनों में उन्होंने इस कविता की पंक्तियां अपनी मेज पर रखे पैड पर अंग्रेजी में अपने हाथ से ही लिखी थीं। इस कविता के हिंदी रूपांतरकार श्री कुलदीप सलिल हैं, जो हिंदी के एक सुपरिचित कवि, गजलकार और आलोचक हैं तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के हंसराज कॉलेज में अंग्रेजी विभाग में रीडर हैं।

—सम्पादक]

हैं किस के ये जंगल मैं वाकिफ हूं शायद
गांव में हालांकि उसका मकां है
पुरबर्फ वादी का करना नज़ारा
न उसको गवारा यूं रुकना यहां है।

कोई खेतो-खलियां न नज़दीक हो जब
झील और जंगल के ऐं दरमियां में
अजब कितना गुज़रेगा छोड़े ये मेरे
मेरा ठहर जाना शबे-शादमां में।

झटकता है वो साज़ घंटी का अपनी
खामी न ताकि कहीं कोई भी हो
आवाज है महज धीमी हवा की
मौजों में सोई हुई झील की जो।

जंगल हैं तारीक, गहरे, रुपहले
मगर मुझको वादे अभी हैं निभाने—
कई कोस जाना है सोने से पहले,
कई कोस जाना है सोने से पहले।

हिंदी रूपांतरकारः श्री कुलदीप सलिल,

निर्यातित कवि : नाज़िम हिकमत की कविता

तुम मेरे स्वदेश

मूल : नाजिम हिकमत
हिंदी रूपांतरकारः रामलाल शर्मा

तुम खेत हो
मैं टैक्टर
तुम कागज हो
मैं टाइप राइटर
प्रियतमा मेरी,
मेरे सन्तान की जननी
तू इक गीत हो
मैं गिटार हूं।
मैं सुखा उष्ण सान्ध्य-समीर
तुम बन्दरगाह में घूमती इक नारी
उस पार के उजाले की ओर जिसकी दृष्टि
मैं पानी
तृष्णार्त, तुम उसे पान करती हो
मैं एक राही
तुम खिड़की खोले
हाथ के इशारे से मुझे बुलाती हो।
तुम चीन हो
मैं माऊ-से-तुडं की सेना
तुम फिलीपाईन की चौदह वर्षीय युवती
इयांकी खालासि के बन्धन से
मैंने ही मुक्त किया है तुम्हें
पहाड़ी चोटी की तुम आनाठोलिया का गांव हो
तुम मेरे सबसे अच्छी महिमामयी नगरी हो।
तुम एक असहाय आर्तनाद हो
तुम मेरे स्वदेश हो
तुम्हें ढूंढते सभी पदचिन्ह
—वो सब मेरे ही है।

ग़जल

राम प्रकाश राही

1

कहां अब मुयस्सर कुछ ऐसे सहारे।
नदी संग जैसे नदी के कनारे।।
कहें अब इन्हें खाक गहरे तअल्लुक।
जो कुछ रह गये हैं हमारे तम्हारे।।
वही लम्स-ता-लम्स के सिलसिले हैं।
जो आधे-अधूरे हैं सारे के सारे।।
चलो ओढ़ लें अब हवाओं की चादर।
कोई क्यों हमें कह-के नंगा पुकारे।।
खिलाड़ी भी क्या हम खिलाड़ी थे "राही"।
कि चौगान-ए-हसती में हारे ही हारे।।

2

सोच नगर के कोलाहल से बच जाते तो सोते भी।
सो जाते तो सपनों के मन-चाहे हाल पिरोते भी।।
सूख गई एहसास की रग-रग कुंठा की लू सह-सह कर।
अब जो ज़रा-सा जी भर आता, जी भर के हम रोते भी।।
दिल का कबूतर अगर उड़ाले अलहड़-पन की कोई अदा।
चाहत के हाथों के अकसर उड़ जाते हैं तोते भी।।
चढ़ती धूप, उतरते पानी, रूठ न जाते हम से अगर।
नई रातों में गई रातों के दाग पुराने धोने भी।।
पग-पग से इक राह निकाली, चक्कर से चक्कर "राही"।
कहीं जो करते ठोर ठिकाना, आप किसी के होते भी।।

3

इस खामुशी में डूब न जाऊं, बचा मुझे।
मेरी न सुन तू खैर से अपनी सुना मुझे।।
मुट्ठी में थी भरम की हवा, वोह भी खुल गई।
फैला के हाथ रहं ही गया क्या मिला मुझे।।
घुटनों के बल मैं फिर से सुबुकदोश हो गया।
गिरना पड़ा मुझे, न संभलना पड़ा मुझे।।
मैं ज़िन्दगी के नाम पे भरता हूं जिसका दम।
खा जायेगी ये शहर की झूटी हवा मुझे।।
"राही" परों के ज़ोम में छोड़ू न यह ज़मीं।
हालात दे रहे हैं कहां की हवा मुझे।।

4

हंसये तो जैसे फूल-सा चेहरा दिखाई दे।
रोये तो जैसे ओस की सिसकी सुनाई दे।।
वोह रौशनी भी बन्द पपूटों में लो समेट।
पड़ जाये रात भी तो सवेरा दिखाई दे।।
उस कम-सुखन को फिर भी ये ज़िद थी कि सारी बज़म।
उसकी अधूरी बात की कीम सफ़ाई दे।।
लेकर चराग़ अब उसे ढूंडें कहां जो आज।
सबकी बुरायों के सिले में भलाई दे।।
पूछे कोई तो चुप में सुना देता हूं जवाब।
अपने किये की "राही" कोई क्या सफ़ाई दे।।

5

उदासी ही उदासी है, बड़े बेज़ार बैठे हैं।
न जाने क्या वो बाज़ी थी जिसे हम हार बैठे हैं।।
मशीनों के सकूं-ना-आशना इस दौर में यारो।
कहां वो लोग जो कहते थे हम बेकार बैठे हैं।।
हवा के हाथ में है उफ़! ये किस मौसम का पर-वाना
परिन्दे फिर परों में डालकर मिनकार बैठे हैं।।
किसी दीवार का साया कि कोई मोड़ का पत्थर।
जहां बैठे हैं गाया दर-खुरे-आज़ार बैठे हैं।।
इसी का नाम है शायद रहे-उलफ़त की मजबूरी।
कहीं से बे-सबब उट्ठे, कहीं नाचार बैठे हैं।।
नयाज़-ओ-नाज की वो कश-मकश भी अब कहां "राही"
जिसे हम दिल समझते थे उसे भी मार बैठे हैं।। ■

संस्कृत साहित्य का परिचयात्मक इतिहास

—डा॰ शशि तिवारी

संस्कृत भाषा भारतवर्ष की एक अनुपम और अमूल्य निधि है। यह भारतीयों के समस्त चिंतन तथा दर्शन का मूल स्रोत है। उनकी मूल अनुभूति एवं शाश्वत संस्कृति इसी से अनुप्राणित हैं। भारतीय साहित्य और जीवन पर संस्कृत का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव दिखाई देता है। संस्कृत भाषा को "देवभाषा" कहा जाता है। इसे देववाणी, गीर्वागवाणी, गीर्वाणगीः, सुरभारती आदि नामों से भी विभूषित किया गया है। संस्कृत को संसार के बृहद् भाषा परिवार की आदि भाषाओं में गिना जाता है। अत्यंत प्राचीनकाल से आज तक अक्षुण्ण रूप से प्रवाहमान भाषा के रूप में संस्कृत का विश्व की सभी भाषाओं में विशेष एवं महत्वपूर्ण स्थान है।

"संस्कृत" शब्द "सम्" उपसर्गपूर्वक "कृ" धातु से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है- संस्कार की गई भाषा। "भाषा" के अर्थ में "संस्कृत" का प्रयोग पहली बार बाल्मीकीय रामायण में मिलता है। निरुक्तकार यास्क और पाणिनि के ग्रन्थों में लोकव्यवहार में आने वाली बोली का नाम "भाषा" है। इस अर्थ में वहां "संस्कृत" का प्रयोग नहीं हुआ है। जब "भाषा" का सर्वसाधारण में प्रचार कम होने लगा और पालि तथा प्राकृत भाषाएं बोलचाल की भाषाएं बन गई, तब प्राकृत भाषा से भेद दिखाने के लिए इसको "संस्कृत" नाम दिया गया —ऐसा कई विद्वानों का मत है। दूसरे दृष्टिकोण से जनसाधारण प्रकृति है। इसलिए जनसाधारण द्वारा प्रयुक्त भाषा "प्राकृत" हो, जबकि नियमों में बांध कर शुद्ध और संस्कृत की गई "संस्कृत" है। लौकिक श्रेणी में आने से पूर्व "संस्कृत" ही दैवी वाक् या देववाणी थी। देववाणी का संस्कार परिष्कार युग पाणिनि (500 ई॰ पू॰) पतन्जलि (200 ई॰ पूर्व) के बीच माना जा सकता है। अतएव संस्कृत भाषा के मुख्यतः दो रूप हैं-वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत। दोनों में कई स्तरों पर कई प्रकार के अन्तर हैं। वैदिक भाषा में वैदिक संहिता, ब्राह्मण आदि के रूप में वैदिक वाङ्मय की रचना हुई है, तो लौकिक संस्कृत भाषा में बाल्मीकीय रामायण, महाभारत, पुराण दूसरे काव्य-ग्रन्थों आदि की रचना हुई है। वैदिक भाषा में भी क्रमशः परिवर्तन होते गए हैं। जैसे—ब्राह्मणों की भाषा संहिताओं के बाद की है। इसलिए उसमें कई प्रयोग लौकिक संस्कृत के समान दिखाई पड़ते हैं। इसी प्रकार रामायण में प्राप्त कई अपाणिनीय प्रयोग प्रकट करते हैं कि उसमें वैदिक भाषा का कुछ प्रभाव रहा है। तात्पर्य है कि संस्कृत भाषा के स्वरूप को दो भागों में बांटने का मुख्य आधार उनकी प्रमुख भेदक विशेषताएं ही हैं। इसी तथ्य को महत्व देते हुए संस्कृत में विरचित साहित्य को भी सामान्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जाता है—

(1) वैदिक साहित्य और (2) लौकिक संस्कृत साहित्य। जहां वैदिक भाषा में विरचित विशाल वैदिक वाङ्मय संस्कृत साहित्य के इतिहास के प्रथम भाग में रखा जाता है वहीं लौकिक संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत आदिकाव्य रामायण से लेकर आज तक गद्य, पद्य, नाटक आदि काव्य की विविध विधाओं में रचा गया बृहत् संस्कृत साहित्य आ जाता है।

"साहित्य" नाम शब्द और अर्थ के मंजुल सामन्जस्य का सूचक है। शास्त्रीय दृष्टि से शास्त्र और साहित्य में अन्तर है, पर व्यापक दृष्टि से शास्त्र भी साहित्य का ही भाग है। संकुचित अर्थ में "साहित्य" से काव्य, नाटक आदि अभिप्रेत होते हैं, परन्तु व्यापक अर्थ में साहित्य से उन सभी ग्रन्थों का अभिप्राय होता है, जो किसी भाषा-विशेष में निबद्ध किये गये हों। संस्कृत में भारतीयों के सभी धर्मग्रन्थ, रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृति ग्रंथ, दर्शनशास्त्र, महाकाव्य, गद्यकाव्य, ऐतिहासिक काव्य, गीतिकाव्य, नाटक, आख्यान साहित्य आदि हैं। इसके अतिरिक्त विविध विषयों पर लिखे गये अनेक ग्रंथ भी संस्कृत में ही उपलब्ध होते हैं। इन विषयों को संक्षेप में धर्मशास्त्र, व्याकरण, काव्यशास्त्र, गणित, ज्योतिष, नीतिशास्त्र कामशास्त्र, आयुर्वेद, वास्तुकला, संगीत, अर्थशास्त्र, छन्दशास्त्र, कोशग्रन्थ आदि श्रेणियों में रखा जा सकता है। ज्ञान विज्ञान का कोई भी क्षेत्र प्राचीन ऋषियों और मनीषियों की मेधा से अछूता नहीं रहा है। इसीलिए "संस्कृत साहित्य" के अन्तर्गत ज्ञान, विज्ञान, दर्शन और काव्य से सम्बद्ध एक विस्तृत प्राचीन वाङ्मय हमारे पास मूल्यवान निधि के रूप में उपलब्ध है। इनका परिचय प्राप्त करके भारतीय जन सांस्कृतिक गौरव का अनुभव करते हैं। विश्व संस्कृति के आधारभूत तत्वों के अनुशीलन के लिए भी इनका समालोचन आवश्यक है।

संस्कृत साहित्य की महत्ता के बोधक तथ्य अनेक हैं। प्राच्य ही नहीं, पाश्चात्य विद्वानों ने भी संस्कृत साहित्य को विश्व की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता की जानकारी का महत्वपूर्ण साधन माना है। भाषा विज्ञान के अन्तर्गत तुलनात्मक भाषा विज्ञान का मूलाधार संस्कृत भाषा ही रही है परन्तु वे कारण, जिनका उल्लेख किए बिना संस्कृत साहित्य के परिचय की बात प्रारम्भ ही नहीं हो सकती है, मुख्यतः चार हैं। प्राचीनता की दृष्टि से संस्कृत साहित्य का महत्व सबसे बढ़कर है। वैदिक वाङ्मय को विश्व के प्राचीनतम वाङ्मय में गिना जाता है। विशेषकर ऋग्वेद संहिता को विश्व साहित्य का सबसे पुराना ग्रंथ माना जाता है। बालगंगाधरं तिलक ने गणित के अकाट्य प्रमाणों के आधार पर सिद्ध किया है कि ऋग्वेद के अनेक सूक्तों की रचना विक्रम से कम से कम छह हजार वर्ष पूर्व अवश्य हुई होगी। यही मत आजकल का प्रामाणिक मत है। ऋग्वेद से प्राचीन कोई भी ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं है। उसके बाद से ही अविछिन्न रूप से वाङ्मय का प्रणयन होता रहा है। अतः हजारों वर्षों से संस्कृत साहित्य के सर्जन की धारा निर्बाध गति से बहती हुई वर्तमान युग तक आई है। यही प्राचीनता और अनवरत सर्जनशीलता संस्कृत साहित्य की महत्ता का प्रमुख कारण माना जाता है।

संस्कृत साहित्य की महत्ता का दूसरा कारण है उसकी सर्वांगीणता और व्यापकता। यदि भारतीय संस्कृति ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को मानवीय जीवन के चार पुरूषार्थ माना है, तो संस्कृत साहित्य ने इन सभी विषयों को समाहित किया है। सामान्य दृष्टि से तात्विक चिन्तन अर्थात् दर्शन और धर्म-संस्कृत के मुख्य विषय माने जाते हैं, पर यह सत्य नहीं है। धर्मशास्त्र और दर्शन से सम्बद्ध जितने ग्रन्थ संस्कृत में हैं, उससे कहीं

शेषांश पृष्ठ 67 पर

प्रेरणा पुंज

श्री जगन्नाथ : राजभाषा हिन्दी के लिए समर्पित व्यक्तित्व

—विश्वंभर प्रसाद 'गुप्त बंधु'

राजभाषा भारती में श्री जगन्नाथ, संयोजक, राजभाषा कार्य० केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के लेख समय-समय पर प्रकाशित होते रहते हैं और पाठक उनसे परिचित हैं। किन्तु, कुछ पाठकों के आग्रह पर पत्रिका में उनका संक्षिप्त जीवन-परिचय भी इस उद्देश्य से दिया जा रहा है कि उनकी विशिष्ट कार्यशैली से पाठक भी लाभान्वित हों और राजभाषा हिन्दी का पक्ष सबल बनाने की दिशा में प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

18 नवम्बर 1924 को जन्मे श्री जगन्नाथ जी इस आयु में भी युवकों की भांति पूरी तन्मयता और निष्ठा से हिन्दी के कार्यान्वयन पक्ष को सबल बनाने में जुटे हुए हैं। इसकी साक्षी प्रत्येक मंत्रालय और विभाग तथा उनके कार्यालयों और निगमों आदि की फाइलें हैं जिन्हें समय-समय पर उन्होंने अपने रचनात्मक सुझाव दिए, और हिंदी संबंधी आदेशों की अवहेलना के उदाहरणों की ओर इंगित किया है। इस कार्य में उन्हें पर्याप्त सफलता भी मिली है। उनका विश्वास है कि यदि तथ्यों पर आधारित सुझाव/शिकायतें शिष्ट भाषा में ध्यान में लाई जाएं तो उनका वांछित परिणाम अवश्य होगा। इसी पद्धति से केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद को नीति-संबंधी बहुत से सरकारी आदेश जारी कराने में सफलता मिली है। उनका यह भी विश्वास है कि यदि हिन्दी के व्यवहार-पक्ष को लेकर व्यापक प्रचार किया जाए तो उसके पक्ष में बहुत अनुकूल वातावरण बनेगा। अब तक वे हिन्दी के विभिन्न व्यवहार-पक्षों पर दो दर्जन से अधिक लेख लिख चुके हैं; और उनके एक-एक लेख एवं उनके द्वारा प्रचारित सूचनाएं भी कई-कई पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी लिखी एक पुस्तिका "भर्ती परीक्षाओं में हिन्दी" की लगभग 37,000 प्रतियां और श्री हरिबाबू कंसल के साथ लिखी एक पुस्तक "संघ की राज-भाषा" के सात संस्करणों में 45,000 प्रतियां छप चुकी हैं।

श्री जगन्नाथ की यह मान्यता भी ठीक ही है कि वांछित सफलता भले ही नहीं मिल सकी, किन्तु सरकारी तंत्र में हिन्दी का प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है और मानसिक रूप से इसकी आवश्यकता स्वीकार की जाने लगी है। उनका कहना है कि निराश होकर बैठ जाने वालों, अन्यों को भी लेखों तथा भाषणों के माध्यम से अकर्मण्यता का पाठ पढ़ाने वालों और हिन्दी के प्रति हीन-भावना उत्पन्न करने वालों से हिन्दी-जगत को दूर ही रहना चाहिए।

बचपन से ही आर्य-समाज के सन्यासियों और प्रचारकों के सत्संग में रहने से उनमें धार्मिक भावना तथा संस्कृत-हिन्दी के प्रति प्रेम जागृत होता गया, जिसने कालान्तर में उन्हें एक निष्ठावान हिन्दी-सेवक बना दिया। पुराने जमाने में लोग पंजाब विश्वविद्यालय की बी०ए० परीक्षा में बैठने के उद्देश्य से पहले हिन्दी में प्रभाकर की परीक्षा दिया करते थे, क्योंकि अन्यथा बी०ए० की प्राइवेट परीक्षा नहीं दी जा सकती थी। किन्तु आपने अपने हिन्दी-प्रेम को सुदृढ़ आधार प्रदान करने के लिए बी०ए० तथा एल०एल०बी० होने के बाद भी प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण की। प्रतिभावान होते हुए भी आंखों में रोहे हो जाने के कारण बी० ए० से आगे पढ़ाई करना संभव न हुआ। मजबूर होकर 1944 में भारत सरकार की सेवा में भर्ती हो गए और उच्च श्रेणी लिपिक बने।

कालान्तर में जब एक सन्यासी ने आयुर्वेदिक चिकित्सा द्वारा उनकी आंखें नीरोग कर दीं, तब उनकी पढ़ाई की तमन्ना फिर से जाग उठी। फलस्वरूप सेवाकाल में ही उन्होंने एल०एल०बी०, विधि-कोविद (प्रोफिशियंसी-इन-ला), प्रभाकर तथा पत्रकारिता में डिप्लोमा कोर्स उत्तीर्ण किए। संघ-लोक-सेवा-आयोग की सहायक प्रतियोगिता में ऊंचा स्थान प्राप्त करने के कारण शीध्र ही पदोन्नत होकर लगभग 30 वर्ष की आयु में ही वे राज-पत्रित अनुभाग अधिकारी हो गए। कुछ ही वर्ष पश्चात् अवर सचिव पद पर पहुंच कर वरिष्ठ वेतन-क्रम के उपनिदेशक पद से 1982 में सेवानिवृत्त हुए। आदि से अंत तक सरकारी सेवा को आपने कोई मजबूरी या बोझ नहीं वरन् प्रभु कृपा से प्राप्त सार्वजनिक सेवा का सौभाग्यपूर्ण अवसर ही समझा जिसका उपयोग वे समाज-सेवा और हिन्दी-कार्यान्वियन के रूचिकर कार्य में करते रहे। सामाजिक क्षेत्र में भी युवा अवस्था से ही काफी अग्रणी रहे और वर्षों तक अविभाजित आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उप-मंत्री व कोषाध्यक्ष तथा गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सीनेट तथा प्रबंध-समिति के पदाधिकारी रहे। बाद में केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के माध्यम से राजभाषा हिन्दी को अपनी अधिकतम सेवाएं और समय देने के उद्देश्य से अन्य संस्थाओं में गहरी जिम्मेदारी के पद ग्रहण करने में असमर्थता व्यक्त करते रहे।

निरन्तर दबावों के बावजूद भी, उस जमाने में जब बाल-विवाह की कुप्रथा जोरों पर थी उन्होंने पारंपरिक रूढ़ियों को तोड़ते हुए 25 वर्ष की आयु में ही विवाह कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। दहेज प्रथा के विरोध में एक आदर्श स्थापित करने के लिए आपने अपने दोनों पुत्रों के विवाह मात्र एक-एक रुपये का शगुन लेकर किए और ग्यारह व्यक्तियों से कम की ही बारातें ले गए, जबकि अग्रवाल बिरादरी में, जिसके वे सदस्य हैं, लोग लाख-लाख रुपये तक विवाहों में खर्च करते-कराते हैं।

आप केन्द्रीय राज्य मंत्री प्रो० शेर सिंह के सात वर्ष तक निजी सचिव रहे। इस प्रभावशाली पद पर रहते हुए और इससे पहिले तथा बाद में भी आप अपना अधिकतर सरकारी कार्य हिन्दी में ही करते रहे। आरम्भ में हिन्दी के प्रयोग के लिए आपको अपने उच्चाधिकारियों का विरोध भी झेलना पड़ा। यह वह जमाना था जब हिन्दी में काम करने वालों को कोई पुरस्कार या सम्मान नहीं, उलटे अपना भविष्य भी खतरे में डालना पड़ता था। किन्तु केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिपद के अन्य कार्यकर्ताओं सहित आपने धैर्यपूर्वक, बिना कोई विरोध जताए हिन्दी का प्रयोग बढ़ाए ही रखा। उसी का सुपरिणाम है कि अब हिन्दी में सरकारी काम करने वाले पुरस्कृत और सम्मानित होते हैं। वर्षों तक आप केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के मंत्री और महामंत्री रहे। यह परिषद की युवा पीढ़ी की दूर-दर्शिता और

अपने पुराने अनुभवी कार्यकर्ताओं के प्रति आदर-भावना ही है, कि उन्होंने आपको निरन्तर संयोजन (राजभाषा-कार्य) के रूप में हिन्दी-कार्यान्वयन में अपने साथ लगाए रखा है। परमात्मा आपको दीर्घायु करे तथा परिषद में युवा पीढ़ी की शक्ति और पुरानी पीढ़ी के अनुभव के मध्य इसी प्रकार समन्वय और प्रेम-भाव बनाए रखे जिससे राजभाषा-प्रयोग कर पथ निरन्तर प्रशस्त होता रहे।

आपकी समाज और हिन्दी की मूल्यवान सेवाओं को उचित मान्यता प्रदान करते हुए हरियाणा के राज्यपाल महामहिम धनिकलाल मण्डल ने 5 मई 1995 को अनाम सेवी सम्मान समिति द्वारा नई दिल्ली में आयोजित एक भव्य समारोह में आपका सार्वजनिक सम्मान किया। ■

बी-154, लोक विहार, दिल्ली-110034.

पृष्ठ 65 का शेषांश

अधिक ग्रन्थ दूसरे ज्ञान-विज्ञान के विषयों पर लिखे गये हैं। श्रेयस-अर्थात् मोक्ष के साथ-साथ प्रेयस् अर्थात सांसारिक सुख भी प्राचीन भारतीय मनीषियों के चिन्तन से परे नहीं था। इसीलिए दोनों को विषय बनाने वाले ग्रन्थ लिखे गये थे। भौतिक जगत् के साधनों की स्पृहा ही अर्थशास्त्र और कामशास्त्र के लेखन का मूल है। कौटिल्य का "अर्थशास्त्र" प्रसिद्ध अर्थशास्त्रीय ग्रन्थ है तो वात्स्यायन का "कामसूत्र" गार्हस्थ्य जीवन के सुख का निर्देशक ग्रन्थ है। इन विषयों पर दूसरे अनेक ग्रन्थ भी रचे गये हैं। संस्कृत में भौतिक विषयों के अन्तर्गत विज्ञान, ज्योतिष, गणित, चिकित्सा, स्थापत्य, पशु-पक्षी, संगीत, नृत्य आदि अनेक विषयों पर प्रचुर मात्रा में ग्रन्थों की रचना सिद्ध कर देती है कि संस्कृत वाङ्‌मय सभी अंगों से परिपूर्ण है। संस्कृत साहित्य की व्यापकता और विपुलता को देखकर संस्कृत साहित्य के इतिहास का अध्येता चकित हुए बिना नहीं रह सकता है। उल्लेखनीय है कि उपलब्ध संस्कृत ग्रन्थों के अतिरिक्त अनेक अन्य ग्रंथ आज भी हस्तलिखित रूप में संस्कृत के पाण्डुलिपि—संग्रहालयों की शोभा बढ़ा रहे हैं और प्रकाशन की अपेक्षा रखते हैं। हजारों वर्षों के इस दीर्घ अन्तराल में कितने ही महत्वपूर्ण संस्कृत ग्रन्थ कालकवलित हो चुके होंगे- इसका अनुमान लगाना दुष्कर है।

धार्मिक और दार्शनिक दृष्टि से संस्कृत साहित्य की महत्ता सर्वोपरि है। भारतीय धर्म और दर्शन मानवीय चिंतन एवं मनन का उत्कृष्ट उदाहरण है और उसका मूल उत्स संस्कृत साहित्य है। सूक्ष्म दार्शनिक विचारों और गंभीर धार्मिक अनुभूतियों का बोध वैदिक वाङ्‌मय से होता है। भारत ही नहीं, अन्य देशों के चिन्तकों द्वारा भी दार्शनिक और आध्यात्मिक जिज्ञासाओं के शमन के लिए संस्कृत साहित्य का अवलम्बन लगभग अनिवार्य सा है। देवशास्त्र और पराविद्या जैसे कठिन विषयों को हृदयंगम करने के लिए संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन-मनन की आवश्यकता सभी स्थानों के विद्वानों द्वारा एक मत से स्वीकार की जाती है। निश्चय ही भारतीयों के लिए भारतीय धर्म, दर्शन और आध्यात्मिक चिन्तन का परम कोश संस्कृत वाङ्‌मय है।

सांस्कृतिक दृष्टि से संस्कृत साहित्य की महत्ता निर्विवाद है। संस्कृतिः संस्कृताश्रिता" कहा ही जाता है। भारतीय संस्कृति के मूलभूत तत्वों की मीयांसा संस्कृति साहित्य के बिना कदापि सम्भव नहीं है। भारत की प्राचीन परम्पराओं, आचारों-विचारों और संस्कृति को विशुद्ध और समग्र रूप में जानने का एकमात्र आधार संस्कृत साहित्य है।भारत के प्राचीन इतिहास के अन्तर्गत संस्कृत, सभ्यता और समाज से सम्बद्ध समस्त जानकारी संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों पर ही निर्भर है। बाल्मीकि, व्यास, कालिदास और भवभूति जैसे यशस्वी महाकवियों के अनुपम काव्यों मे परिलक्षित आदर्श जीवन-दर्शन में भारतीय संस्कृति की आत्मा निवास करती है। भारतीयों की सांस्कृतिक चेतना का मूल स्रोत संस्कृत वाङ्‌मय ही रहा है और आज भी है।

विशाल एवं विस्तृत साहित्य का परिचय प्राप्त करने के लिए इसके इतिहास का विभाजन आवश्यक है। विवरणों या वृतान्तों में तिथिक्रम को अधिक महत्व न देने के कारण भारतीयों में ऐतिहासिक भावना का अभाव माना जाता है। अतएव कालक्रमानुसार साहित्यिक कृतियों का परिचय अधिकांश में आनुमानिक है, जो कतिपय अन्तः साक्ष्यों और बहिःसाक्ष्यों पर आधारित है। विद्वान लेखकों ने संस्कृत साहित्य का इतिहास लिखते समय भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों को अपनाया है। किसी ने इतिहास-लेखन वेद से प्रारम्भ किया है, तो किसी ने रामायण से। किसी इतिहास-ग्रन्थ का प्रतिपाद्य लौकिक संस्कृत के विविध विद्या के काव्यों का विवरण ही है, तो किसी ने अलंकारशास्त्र, दर्शनशास्त्र, धर्म शास्त्र, व्याकरण आदि से संबद्ध ग्रंथों को भी साहित्य का भाग माना है। यहां "साहित्य" को व्यापक अर्थ में लेते हुए संस्कृत में विरचित सम्पूर्ण वाङ्‌मय को काल और विषय के आधार पर अलग-अलग परिच्छेदों में विभाजित करके "संस्कृत साहित्य के परिचयात्मक इतिहास" के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जा रहा है। तदर्थ निम्नलिखित वर्गीकरण ग्रहणीय हैं:-

1. वैदिक वाङ्‌मय 2. ऐतिहासिक महाकाव्य एवं पुराण-साहित्य 3. काव्य साहित्य (अ) महाकाव्य, गीतिकाव्य, ऐतिहासिक काव्य (आ) नाटक, गद्यकाव्य, चम्पू कथासाहित्य 4. शास्त्रीय वाङ्मय 5. काव्यशास्त्रीय वाङ्‌मय 6. दर्शन साहित्य

संस्कृत के बृहत् वाङ्‌मय को उपर्युक्त प्रकार से सात परिच्छेदों में विभाजित करके आगामी अंकों में क्रमशः प्रस्तुत किया जाएगा। ■

54, साक्षर एपार्टमेंटस, ए-3 पश्चिम विहार, नयी दिल्ली-110063

नेत्रहीन किन्तु साहसी हिन्दी आशुलिपिक

—जगन्नाथ

दिल्ली सरकार के रोजगार निदेशालय में कार्यरत हिन्दी आशुलिपिक श्री श्रीगोपाल शिसोदिया ने अपने नेत्रहीन होने के बावजूद बड़े ही आत्मविश्वास से इस चुनौति को स्वीकार कर यह सिद्ध कर दिया है कि विकलांग व्यक्ति दया के पात्र नहीं वरन् उचित प्रोत्साहन के अधिकारी हैं। श्री शिसोदिया सामान्य हिन्दी टाइप मशीन पर बड़े ही आत्मविश्वास से टाइप करते हैं।

उन्हें इस प्रयास में और अधिक सफलता प्राप्त करने के लिए एक ब्रेल आशुलिपि मशीन रोजगार निदेशालय ने विशेष प्रयत्न कर उपलब्ध करा दी है। इस मशीन की सहायता से श्री शिसोदिया 100 से 120 शब्द प्रति मिनट की गति से हिंन्दी में आशुलिपि से डिक्टेशन लेकर उसे सामान्य टाइप मशीन पर टाइप कर सकते हैं।

श्री शिसोदिया शतरंज के क्षेत्र में भी विशेष महारत हासिल कर चुके हैं। इस खेल में नेत्र के अलावा तीक्षण बुद्धि की भी आवश्यकता होती है। इस प्रकार अगर प्रोत्साहन मिला तो इस क्षेत्र में भी दिल्ली सरकार को गौरवान्वित करने के लिए श्री शिसोदिया आत्मविश्वासपूर्वक पूरी लगन से जुटे रहेंगे।

श्री शिसोदिया ने अपनी नेत्रहीनता को अपने क्षेत्र में बाधा नहीं बनने दिया। यह एक उदाहरण है विकलांग व्यक्तियों के लिए कि वे भी इस उदाहरण से प्रेरित हो पूरी लगन से अपने क्षेत्र में सफलता के लिए कमर कसें। उन्हें दया की नहीं उचित प्रोत्साहन की आवश्यकता है।

कहा जाता है कि हिन्दी आशुलिपि सीखने में कठिनाई होती है। इस भ्रम को दूर करने के लिए यह उचित होगा कि श्री शिसोदिया की कला का प्रदर्शन कराया जाए जिससे अन्य युवक-युवतियां भी प्रेरणा ले सकें। आवश्यकतानुसार श्री कृष्णमोहन अग्रहरि, उप प्रादेशिक रोजगार अधिकारी (मुख्यालय) बैटरी लैन, राजपुर रोड, दिल्ली-54 (फोन न० 2517102 या 2518363) से सम्पर्क किया जा सकता है। ■

प्रस्तुतिः संयोजक, राजभाषा कार्य० केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद
एक्स० वाई० 68, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली-110023.

पृष्ठ 61 का शेषांश

बड़ी रसीली है कहानी, तुम्हें हम देई सुनाय।
सुनके तुम कुछ हंसियो मत, वरना हम जइबे शरमाय।।
बुड्ढा बाप रहे मुलुक के बांधे कसके धोती।
गिरमिट से आये रहे पुस्तक पढ़िन न पोथी।।
भैया इन दिन बोलिस बुढ़वा मुनुवा के देव पढ़ाय।
गांव के लड़के सभी पढ़त हैं, ई वैसे ही जाई बुढ़ाय।।
नवा साल में बप्पा हमके भेजिस संगम स्कूल।
उटिन राम करतार सिंह और साथी रहे रसूल।।
हफ्ता भर हम गया बराबर बांधे रोटी चोखा।
लड़के हमके खूब चिढ़ाइन और टीचा रही अनोखा।।

करुनागरन नायर : शांतिदूत ने स्कूल छोड़ाया

प्रस्तुत लेख 'फीजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि' के केवल काव्य खण्ड का परिचय ही देगा। काव्य खण्ड के अंतर्गत उन्हीं कवियों को रखा गया है जो कवि के रूप में फीजी में विख्यात हैं तथा विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में जिनकी रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। ■

73-वैशाली, पीतमपुरा, दिल्ली-110034

1. जयफीजी विशेषांक 11.5.1979
2. चतुर्वेदी, जगदीश प्रसादः फीजी में प्रवासी भारतीय पृ० 147-148
   बृजलालः फीजी गिरमिटियाज़ः द बैक ग्राउंड टु बैनिशमैंट (रामाज़ बैनिशमेंट, हाइनेमन एजुकेशनल, बुक्स)

भेंटवार्ता

लेखक समाज को नए मूल्य बतलाएं

वरिष्ठ साहित्यकार विष्णु प्रभाकर से कामिनी बाली की बातचीत

दिल्ली के ऐतिहासिक स्थल अजमेरी गेट के निकट एक पतली सी गली (कुंडेवालान) में अर्धशती से भी लम्बे अर्से से एक कर्मयोगी साहित्य साधना में लगा बैठा है। उसे कुछ खबर नहीं कि इस वट वृक्ष की छाया में कितने पौधे और बेलें जड़ पकड़ चुकी हैं। इस साधक ने प्रेमचंद युग से लेकर आज तक इसी घर की छत के नीचे एक तख्त पर बैठ जीवन के सभी उतार चढ़ाव देखे हैं। इस वयोवृद्ध वरिष्ठ साहित्कार का नाम है—विष्णु प्रभाकर।

मैं उनसे दो तीन बार सभाओं, संगोष्ठियों में मिल चुकी थी। एक बार शोध कार्य के संबंध में मैं उनके घर भी हो आई थी। मन में चिंता थी कि इतने बड़े साहित्यकार होकर वे अपना समय देगें भी या नहीं। परंतु उनकी आत्मीयता देख मैं बहुत प्रभावित हुई। उनके ये शब्द कि "मुझे पढ़-पढ़ कर ही लोग डाक्टर बन गए और मैं मरीज का मरीज ही रहा" मुझे सदैव याद रहेंगे। उन्हें देख मैंने ऐसी नदी के बारे में सोचा जो सब की प्यास बुझा देती है। उनका उपन्यास "अर्ध नारीश्वर" नारी के प्रति उनके आधुनिक चिंतन का ही प्रतीक है। सहज ही उन्होंने जैनेन्द्र और शरदचन्द्र के नारी संबंधी चिंतन को आगे बढ़ाया है। आगे प्रस्तुत हैं कुछ दिनों पहले उनसे हुई बातचीत के कुछ अंश।

आप लेखन में कैसे प्रवृत हुए?

मेरी मां आधुनिक विचारों की थीं और पिता अंधविश्वासी। मां आर्य समाजी और पिता कट्टर सनातनी, दोनों के सामंजस्य ने मेरे जीवन को बहुत प्रभावित किया। पिता के अंधविश्वासों ने ही मेरे मन में विद्रोह उत्पन्न किया, जिसे मैं अभिव्यक्त करना चाहता था। फिर परिस्थितियां ऐसी हो गईं कि मैं उत्तर प्रदेश में जन्मा था और पढ़ाई के लिए मामा केपास पंजाब में रखने लगा। वहां मेरे शुद्ध हिंदी उच्चारण से लोग प्रभावित होते। दसवीं कक्षा तक पहुंचते-पहुंचते मैं स्कूल में मंत्री बन गया। तब मुझे भाषण आदि देने की तैयारी के लिए मौलिक रूप से पढ़ना-लिखना पड़ता। तीसरी बात यह कि एक बार मैं मामा के साथ कांग्रेस के जलसे में गया। वहां एक पांच वर्ष के बालक ने भाषण दिया—"पूज्यजनों मैं आपका बालक हूं। मैं खद्दर पहनता हूं। आप भी खददर पहनें।" इन शब्दों ने मुझे बहुत प्रभावित किया। मैंने अपने पिता से खादी की धोती मांगी तो उन्होंने मेरी खूब पिटाई की, जबकि मामा को पता लगा तो उन्होंने मुझे खादी की धोती ले दी। उन दिनों खादी बहुत मोटी होती थी। अपने वजन से भी भारी धोती पहन में कांग्रेस के जलसों में जाने लगा। मैं गांधी जी के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ। कांग्रेसी बन मैं भी भाषण आदि देने लगा।

पिता के अंधविश्वासों के प्रति विद्रोह, स्कूल में मंत्री और कांग्रेसी बन भाषण देने के कारण मैं लेखन की ओर प्रवृत होने लगा।

आपने कहा कि अंधविश्वासों के प्रति आपके मन में विद्रोह जागा कैसे?

मैं जब छोटा था तो देखता था कि छुआछूत का बहुत प्रभाव है। मेरी मां जब नौकरानी को पान देती तो धागे से बांध कर मुझे देती और कहती उसे छूना नहीं, धागे से पान पकड़ा देना। बच्चे का मनोविज्ञान होता है कि जो बात मना की जाए वह अवश्य करता है। मैंने भी यही किया। मजे की बात यह है कि अछूत भी सतर्क रहते कि कोई उन्हें छू न जाए। हमारे समाज में साथ ही हर बात का तोड़ भी है। मेरी मां पानी में सोना छुआ कर मेरे ऊपर छिड़क देती और मैं पवित्र हो जाता। पर मेरी इस शरारत के लिए पिता द्वारा खूब पिटाई होती।

इसी तरह एक बार मेरे पिता के एक मित्र जो ज्योतिषी भी थे, ने मुझे कहा कि मैं फेल हो जाऊंगा। मैं बहुत परेशान हो गया।

उसने उपाय बताया कि प्रतिदिन देवी-मंदिर में दो पैसे की जलेबी चढ़ाओं। मैं वैसा ही करने लगा। एक दिन मैंने देखा पुजारी का बेटा, जो मेरी कक्षा में पढ़ता था, जलेबी उठाकर खा रहा है। मेरे मन में आया कि वह जलेबी खा सकता है, तो मैं क्यों नहीं खा सकता? मैंने खा लीं पर डर भी गया क्योंकि कहा जाता था कि ऐसा करने पर देवी का सिंह आ जाता है। पर जब वह नहीं आया तो समझ गया ये सब झूठ है।

एक और मजेदार घटना सुनाता हूं कि मैं गाय को लेकर जा रहा था। प्यास लगी तो मस्जिद में घुस गया। वहां पानी पड़ा था, पी लिया। अब अंघविश्वासानुसार मेरे पीछे जिन्न आना था सो मैं वहां से घर की ओर भाग पड़ा। घर पहुंच गया और देखा मुसलमान का पानी पीने से जिन्न नहीं आया। इसी तरह की बचपन की इन घटनाओं ने अंघविश्वासों के प्रति विद्रोह जगाया।

आपकी पहली प्रकाशित रचना कौन सी थी?

लेख, भाषण आदि के साथ मैं कहानियां भी लिखने लगा। मेरी पहली कहानी "दिवाली के दिन" लाहौर से प्रकाशित "हिंदी मिलाप" के नवम्बर 1931 के अंक में प्रकाशित हुई थी। फिर नियमित रुप से अनेक कहानियां, नाटक आदि लिखता रहा जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। अभी "आजकल" (अक्टूबर 1994) में मेरा एक नाटक प्रकाशित हुआ है, मुझे याद नहीं मैंन वह कब लिखा था। मैं नियमित रुप से डायरी भी लिखा करता था यदि वे सभी मेरे पास होतीं तो मुझे बहुत सहायता मिलती। वे मेरा बहुत बड़ा खजाना थी.....धीरे-धीरे "युगान्तर" "हंस" और "जागरण" पत्रिकाओं में भी मेरी रचनाएं छपने लगी। मुझे बहुत खुशी होती कि इनमें जैनेन्द्र, वात्सयायन, बाबू गुलाबराय, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार जैसे महान लेखकों की रचनाएं प्रकाशित होती थीं। एक बार "कहानी" पत्रिका में मेरी कहानी छपी। जैनेन्द्र मुझे ढूंढते हुए आए। मेरे मकान के ठीक नीचे ही ओर से आवाज देकर कहने लगे...."यहां विष्णु

कहां रहता है?" मैंने पूछा, "कौन है?" वो बोले "जैनेन्द्र"। मैं घबरा गया इतना बड़ा साहित्यकार और मेरे घर आया है। वैसे यह बात मेरे लिए बहुत गर्व की थी।

आपने नौकरी क्यों छोड़ दी?

प्लेग बीमारी सन् 1925-26 में भी भयानक रूप में सामने आई थी। मेरे परिवार के कमाने वाले कई सदस्य चाचा, दादा आदि इसमें चल बसे। तब मेरे पिता को कमाना पड़ा और मुझ पर भी उत्तरदायित्व आ पड़ा। मैंने 1929 से नौकरी आरंभ की साथ ही मैं स्वतंत्रता आंदोलन में भी गुप्त रुप से भाग लेता रहा। मेरे पास क्रंतिकारी दस्तावेज थे जैसे यशपाल आदि का साहित्य। अचानक मुझे पता लगा कि छापा पड़ने वाला है, मैंने आपत्तिजनक साहित्य अपने एक मित्र के घर छिपा दिया परंतु मित्र परिस्थितियां देख इतना डर गया कि उसने मेरे दस्तावेज जला दिए। मुझे बहुत दुख हुआ। जब छापा पड़ा, मेरे पास से कुछ न निकला तो भी मुझे क्रांतिकारी समझा गया और मामा के प्रभाव के कारण मुझे रियायत दी गई कि या तो मैं नौकरी छोड़ दूं या जेल चला जाऊं। यदि जेल जाता तो मामा को पेंशन आदि न मिलती। अतः मैंने नौकरी छोड़ देना परिवार के लिए अधिक बेहतर समझा। तभी से मैं पहले क्रंतिकारी बना। परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नेताओं की अवसरवादिता और सत्ता लोलुप्ता देखकर मैंने राजनीति छोड़ दी। फिर भी लेखन जारी रखा। स्वतनत्रता के बाद में कई वर्षों तक आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्रों पर नाटक निदेशक भी रहा। फिर मैंने वहां भी त्याग पत्र दे दिया और सारा समय लेखन को देना अधिक पसन्द किया।

आप चाहते तो अवसर का लाभ उठा कोई भी पद ले सकते थे। आपने ऐसा नहीं किया क्यों?

मैं गांधी-दर्शन से प्रभावित हुआ और उसी के अनुसार जीवन यापन किया। मुझे याद है गांधी जी ने ईश्वर प्राप्ति और मोक्ष के लिए त्याग और दूसरों के लिए जीवित रहने का उपदेश दिया था। मैंने इन्हीं शब्दों को जीवन का मंत्र बनाया। मैं चाहता तो विधायक आदि कुछ भी बन सकता था, परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने स्वतंत्रता सेनानी होने के कारण कोई लाभ नहीं उठाया है। मैं सरकार से कोई पेंशन नहीं लेता हूं।

विष्णु के साथ लक्ष्मी होनी चाहिए थी, आपने सरस्वती को चुना?

जब सरस्वती का उपासक लालच में पड़ जाता है तो मर जाता है। मैं चाहता तो सरस्वती से भी लक्ष्मी कमा सकता था। परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया। लेखन और मौलिक सृजन बहुत बड़ी तपस्या है। इसे केवल व्यापार बनाना मुझे पसंद नहीं। हमारे देश में लेखकों की स्थिति कभी भी अच्छी नहीं रही, फिर भी मैंने लेखन को व्यापार नहीं बनाया।

आप अपना गुरू किसे स्वीकारते हैं?

मेरे माता-पिता ही मेरे गुरू थे। पिता की पिटाई याद करके यही लगता है कि उनके विचारों से मेरे मन में विद्रोह का अंकुर फूटा। मेरे गुरू पिता ही थे। साहित्यिक गुरू में चंद्रगुप्त विद्यालंकार को मानता हूं। प्रेम चन्द पर भी मेरी अपार श्रद्धा है। उन्होंने मेरे पत्रोत्तर में "कहानी" के बारे में अपने विचार लिखे जिन्हें मैंने अपनाया भी।....महावीर प्रसाद द्विवेदी से मैं कुछ सीखना चाहता था किंतु उन्होंने मेरे पत्रोत्तर में लिखा कि वृद्धावस्था के कारण मैं सहायता नहीं कर पाऊंगा। इसके अलावा मैं शरद् और जैनेन्द्र से भी प्रभावित रहा हूं। गांधी जी का एक वाक्य मुझे बहुत पसन्द है जो उन्होंने अफ्रीका में रेल के डिब्बे से निकाले जाने पर कहा था "अन्याय का प्रतिकार करो।" उन्होंने कहा यदि मुझे हिंसा और कायरता में से चुनाव करना पड़े तो मैं हिंसा चुनूंगा। ये सब विचार जीवन की वास्तविकताओं से जूझने में मेरा मार्ग प्रशस्त करते हैं।

व्यक्ति की महानता उच्च कोटि के शिष्य देना भी है। आप इस बारे में कौन से नाम गिनाना चाहेंगे?

मैंने शिष्य परम्परा के बारे में तो कभी सोचा ही नहीं और न ही कोई नाम मेरे ध्यान में हैं। आज तक ऐसा प्रश्न किसी ने पूछा भी नहीं इस बारे में अब सोचूंगा। इतना अवश्य कह सकता हूं कि कुछ लोग मेरे पास आए और मैंने उन्हें लेखन से अलग होने की राय दी। अब वे अपने-अपने क्षेत्र में सफल जीवन जी रहे हैं। मैंने कई लोगों के शोध कार्य आदि करने में पर्याप्त सहायता की है। वैसे भी शिष्यों का काम अब लड़वाना रह गया है। जैसे गांधी और अम्बेडकर कभी नहीं लड़े, अब उनके शिष्य समाज को लड़वा रहे हैं।

क्या किसी शोधकर्ता ने आपके साहित्य को आगे बढ़ाने के बारे में कुछ प्रयत्न किए हैं?

नहीं वस्तु स्थिति ठीक इसके विपरीत रही है। शोधकर्ताओं का लक्ष्य मेरे कार्य को आगे बढ़ाना नहीं उपाधि और पद प्राप्ति करना रहा है।

आज हर लेखक प्रसिद्धि पाने के लिए लालयित है और इसके लिए वह प्रचार माध्यमों का सहाया भी लेता है? आपके क्या विचार हैं?

प्रसिद्धि हर व्यक्ति पाना चाहता है परंतु लेखक के लिए प्रचार माध्यमों से प्रसिद्धि पाने का प्रयत्न करना गलत है। लेखक को अपना लेखन करना चाहिए। शरदचन्द्र जैसे लेखक ही महान बन सकते थे जिन्होंने चुपचाप साहित्य सृजन किया और लिख-लिख कर पांडुलिपियां रखते रहे। इसके बारे में आपको एक किस्सा सुनाता हूं। शरद तो "आवारा" थे। जब वह बर्मा गए हुए थे, पीछे उनके एक मित्र ने उनकी पांडुलिपि "बड़ी दीदी" प्रकाशित करवा दी। कहानी तीन अंकों में प्रकाशित हुई। लेखक का नाम प्रकाशित नहीं किया गया। इस कहानी की इतनी धूम मची कि किसी मित्र ने शरद चन्द्र को पत्र लिखा। ये घटना 1903 की है और शरद 1911 में यानी कि आठ वर्षों बाद मित्र से मिलने आए और पूछने लगे कि वह कौन सी कहानी है जरा मैं भी तो सुनूं। मित्र ने उन्हें कहानी सुनाई और वह स्वयं श्रोता की तरह कहते रहे "कहानी अच्छी है। मैं और लिखने का प्रयास करूंगा। इतनी ख्याति पाने पर भी उन्होंने अपने को प्रकट करने का प्रयास नहीं किया। यही लेखक की महानता है। लेखन कर्म प्रसिद्धि पर आश्रित नहीं होता। आज इस प्रकार की धारणाएं लेखक को प्रचार माध्यमों का सहारा लेने को उकसाती हैं परन्तु उससे दूर रहना ही अच्छा है।

क्या लेखक को साहित्यिक पुरस्कार/सम्मान प्रोत्साहित करते हैं?

लेखक को प्रोत्साहन अंतःमन से मिलता है। बाह्य वातावरण आदि से तो वह केवल सामग्री ग्रहण करता है। एक बार वयोवृद्ध रवीन्द्र नाथ टैगोर और युवा शरद्चन्द्र का एक समारोह में सम्मान किया जाना था। रवीन्द्र नाथ ने शरद्चन्द्र को पत्र लिखा— "वृद्धावस्था में मेरा सम्मान कर लोगों ने मुझे चुकता कर दिया यह तो ठीक है, परंतु तुम्हारा यशरथ

टोककर तुम्हारी जय जय कार करने वाले तुम्हारे प्रंशसक नहीं शत्रु हैं।" युवावस्था में पुरस्कार या सम्मान उसके संघर्ष में बाधा डालते हैं। सम्मान आदि तो लम्बे संघर्ष के बाद मिलने चाहिए। लेखक को उनकी परवाह भी नहीं करनी चाहिए। जीवन भर दर्द और यातना सहकर ही श्रेष्ठ लेखक बना जा सकता है।

आज वस्तुस्थिति एकदम भिन्न है। युवा लेखकों के लिए भी अनेक पुरस्कार हैं।

"टालस्टाय" को कौन नहीं जानता। उन्हें नोबल पुरस्कार नहीं दिया गया तो उन्हें क्या अंतर पड़ा? मुझे भी अनेक सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए हैं जिनकी प्रसन्नता मुझे क्षणिक होती है। परंतु लेखन पर इनका स्थाई प्रभाव नहीं पड़ता।

अपनी साहित्यिक आलोचना पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

"आलोचना" की भी मुझ पर आंशिक प्रतिक्रिया होती है किंतु मैं इससे प्रभावित नहीं होता। मेरी आलोचना करते हुए एक बार किसी आलोचक ने कहा मैं लिखना बंद कर दूं। यहां तक कि नामवर सिंह मेरे कटु आलोचक हैं और मुझे लेखक मानते ही नहीं। यदि मैं आलोचनाओं से प्रभावित होता तो "आवारा मसीहा" न लिख पाता । मैं अपना कर्म निष्ठा से करता हूं परिणामों की चिंता नहीं करता। हां मानव के नाते प्रशंसा से प्रसन्न और आलोचना से थोड़े समय के लिए गुस्सा अवश्य आता है।

मेरे उपन्यास "अर्धनारीश्वर" को पसन्द किया गया। रचना साहित्य अकादमी से पुरस्कृत भी हुई। इस निर्णायक मंड़ल में नामवर सिंह और विद्यानिवास मिश्र भी थे। दूसरी तरफ उसी कृति पर एक युवा लेखक ने लिखा उपन्यास में घटनाएं कोरी कल्पनाएं हैं। मैं वास्तव में ऐसा हो ही नहीं सकता। मुझे प्रसन्नता है कि आलोचना या प्रशंसा लेखक की नहीं रचना की गई। यही होना भी चाहिए। मैंने इसे लिखने की नहीं रचना की गई। यही होना भी चाहिए। मैंने इसे लिखने से पहले लगभग नौ वर्ष तक इसके लिए अनुसंधान किया। इसी तरह "आवारा मसीहा" अनेक वर्षों के परीश्रम का परिणाम था।

"अर्धनारीश्वर के पात्रों के बारे में आप क्या कहना चाहेंगे?

इसके लिए इतना अवश्य कहना चाहूंगा कि यह मेरे अपने जीवन की कहानी है। उपन्यास में वह स्त्री जिसका बलात्कार होता है, वह घटना मेरी पत्नी के साथ वास्तव में घटी थी, परंतु अंतर इतना है कि गुंडों ने बलात्कार करने का प्रयास किया पर वह बच गई थी। उपन्यास के मुख्य दो पात्रों में मैं स्वयं हूं उस स्त्री का पति और श्वसुर। केरल वाली लड़की और एक मुस्लिम की घटनाएं भी ऐतिहासिक हैं। वे आज भी मुझसे मिलती हैं। इस प्रकार इस उपन्यास के हर पात्र का हक अपना इतिहास है। जिस पर मैंने लगभग नौ वर्ष तक मनन, चिंतन और खोज बीन की है। इसीलिए इसमें कल्पना की अपेक्षा यथार्थ ही मुख्य रूप से उभर कर आया है। मैंने इस बात की चिंता नहीं की कि आलोचक या पाठक इस पर क्या प्रतिक्रिया देंगे। एक स्त्री ने इस उपन्यास पर टिप्पणी की कि मैंने जैनेन्द्र के विचारों को आगे बढ़ाया है। यह टिप्पणी मेरे लिए गर्व की बात है।

क्या वर्तमान आलोचना की स्थिति से आप संतुष्ट हैं?

आलोचक लेखक की भावभूमि पर उतरे बिना अपने को आरोपित करने लगता है, जो गलत है। आलोचना कृति की होनी चाहिए लेखक की नहीं। मैंने देखा है कि आलोचना करते हुए आलोचक में उतनी निष्ठा नहीं रही। हां कुछ गिने चुने आलोचक अपना धर्म बखूबी निभा रहे हैं।

साहित्य जगत में व्याप्त राजनीति के बारे में आपके क्या विचार हैं?

ये राजनीति दो प्रकार की है एक तो राजनीतिज्ञों का हस्ताक्षेप और दूसरा साहित्यकारों के बीच राजनीति और गुटबन्दी। दोनों ही प्रकार की राजनीति साहित्य के लिए घातक है। लेखक को इसमें नहीं पड़ना चाहिए। मैं स्वयं भी इससे दूर रहता हूं।

क्या आप नव हस्ताक्षरों की रचनाएं पढ़ते हैं और उनकों राय देते हैं?

हां मैं कई युवा लेखकों को पढ़ चुका हूं, आवश्यकता पड़े तो राय भी देता हूं एक बार "मन्नू भंडारी" की रचना पढ़ कर मैंने उन्हें लिखा कि लेखन में नारी पात्रों में ऊर्जा और होनी चाहिए। मैं समझता हूं लेखक को पढ़ने की अपेक्षा चिन्तन-मनन भी करना चाहिए। यदि वह पढ़ना चाहे तो साहित्य के अतिरिक्त अन्य विषय जैसे विज्ञान आदि भी पड़े ताकि साहित्य में कुछ नया जोड़ा जा सके। देश में इतने सारे लेखक हैं कि उनकी सभी रचनाएं पढ़ना संभव नहीं। मेरी आंखे बहुत कमजोर हो गई हैं मैं पढ़ नहीं पाता तो दूसरे से पढ़वाकर सुनता हूं। पर पढ़ने और सुनने में अंतर तो होता ही है। मैंने देखा कि विष्णु जी कुछ पत्रादि टार्च जला कर स्वय पढ़ने का प्रयास कर रहे थे।

क्या साहित्य में यौन संबंधों के चित्रण या विश्लेषण की अभिव्यक्ति करते हुए लेखक का समाज के प्रति क्या दायित्व है?

यौन संबंध एक पवित्र चीज है, जिसका संबंध मानव-सृष्टि से है। अतः इसका उपयोग मर्यादित रूप से होना चाहिए। लेखक का दायित्व है कि वह इस प्रकार के चित्रण करते हुए समाज को रास्ता दिखाए। लेखक युगदृष्टा होता है अतः समाज को नए मूल्यों से अवगत कराना लेखक का दायित्व है।

यौन संबंधों के दो मूलाधार हैं—इच्छा और शक्ति। जहां तक इच्छा का प्रश्न है वह तो कहने की आवश्यकता नहीं सभी में होती है। परंतु शक्ति आयु के साथ कम होती जाती है। मैं इन संबंधों को सार्वजनिक बनाए जाने के हक में नहीं हूं। एक बार एक स्त्री ने कहा कि मैं सड़क पर खाट बिछा कर लेटूंगी मुझे पूरी आजादी है। उसको उत्तर दिया गया कि फिर ट्रक चलाने वाले को भी पूरी आजादी है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज का अमर्यादित खुलापन मन पर अच्छा प्रभाव नहीं डालता।

आपके कथा साहित्य में नारी पात्र पूर्णतः आधुनिक निर्भीक और प्रगतिशील हैं; इसका क्या कारण है?

लेखक को बाह्य वातावरण से सामग्री मिलती है। आज नारी जिस प्रगति के दौर से गुजर रही है सराहनीय है। इसके अतिरिक्त मेरी मां आर्य समाजी थी और पत्नी भी आधुनिक विचारों की पक्षधर थी। मेरे मन-मस्तिष्क में उन दोनों का प्रभाव है। (विष्णु जी ने एक सुंदर युवती के चित्र की ओर इशारा करके बतलाया कि ये मेरी मां हैं। उन दिनों कौन फोटो खिंचाता होगा? पर उन्होंने खिचवाया था।)

आर्य समाजी विचार और स्वतंत्रता सेनानी होने के नाते मैं नारी की स्वतंत्रता और प्रगति के पक्ष में हूं। मेरी इन धारणाओं के पीछे एक तरफ मां और पत्नी तो हैं ही, साथ ही जैनेन्द्र और शरदन्द्र के साहित्य से इन्हें और बल मिला है।

शेषांश पृष्ठ 92 पर

पुस्तक समीक्षा

महत्वपूर्ण आत्मकथा

—डा॰ हरदयाल

आत्मकथाओं की दृष्टि से मराठी भाषा का साहित्य समृद्ध है। अनेक प्रसिद्ध साहित्यकारों, कलाकारों, राजनेताओं, समाज-सुधारकों आदि ने मराठी में अपनी आत्मकथाएं लिखी हैं। आत्मकथा-लेखन के प्रति हिन्दी भाषियों में जो संकोच दिखाई देता है वह मराठी भाषियों में नहीं है। हिन्दी में मराठी भाषा में लिखित कई आत्मकथाओं का अनुवाद हुआ है। मराठी की प्रसिद्ध लेखिका माधवी देसाई की आत्मकथा 'नाच री घुमा' का हिन्दी में अनुवाद होना स्वागत योग्य है।

माधवी देसाई स्वयं तो प्रसिद्ध लेखिका है ही; साथ ही वे महाराष्ट्र के प्रसिद्ध और प्रभावशाली लोगो से जुड़ी रही हैं। मराठी और हिन्दी फिल्मों के प्रसिद्ध निर्माता मालजी पेंढारकर और प्रसिद्ध अभिनेत्री लीलाबाई पेंढारकर की वे पुत्री हैं। नन्दा और लता मंगेशकर जैसी फिल्मी हस्तियों की वे सबन्धी हैं। मराठी के प्रसिद्ध कथाकार रणजित देसाई की वे दूसरी पत्नी रही है। अपनी आत्मकथा में उन्होंने अपने बचपन से लेकर साठ वर्ष की अवस्था में रणजित देसाई से तलाक मिलने तक के अपने जीवन का विवरण महाराष्ट्र के एक लोकनृत्य 'नाच री घुमा' को प्रतीक बनाकर और पूर्वदीप्ति शैली को अपनाकर प्रस्तुत किया है।

उनके माता-पिता ने उन्हें फिल्मी दुनिया के प्रभाव से बचाकर रखने का प्रयास किया और अपने प्रयत्न में वे सफल रहे। विवाह-पूर्व तक उनका नाम कु॰ सुलोचना मालजी पेंढारकर था। माधवी नाम उन्हें उनके पहले पति नरेन्द्र काटक ने दिया। नौ वर्ष की अवस्था तक वे अपनी नानी के पास रहीं। बाद में अपने माता-पिता के पास पूना आ गयीं। नरेन्द्र से विवाह होने पर वे गोवा में रहीं और उन्होंने गोवा के स्वाधीनता-आन्दोलन में कुछ दिन तक भाग लिया। फिर उनके पति कल्याण में एक रेयान फैक्ट्री में क्लर्क बनकर चले आये। स्वयं माधवी जी भी बी॰ए॰, बी॰एड॰ करके शिक्षिका बन गयीं। उन्होंने तीन पुत्रियों को जन्म दिया। गृहस्थ जीवन खूब व्यवस्थित और सुखपूर्वक व्यतीत हो रहा था कि अचानक उनके पति का देहान्त हो गया। उस समय माधवीजी की आयु पैंतीस वर्ष की थी। उन्होंने अपनी पहली पुत्री यशोधरा की छोटी अवस्था में ही विवाह कर दिया। तभी रणजित देसाई से मुलाकात हुई और यह मुलाकात प्रेम में परिणत हो गयी। रणजित देसाई के प्रस्ताव पर उन्होंने उनसे विवाह कर लिया और वे रणजित देसाई के गांव कोवाड़ में जाकर रहने लगीं। वहां उन्होंने समाज-सेवा का भरपूर काम किया; रणजित दोई की दो और अपनी एक पुत्री का विवाह किया; रणजित देसाई की पूर्व-पत्नी सुनन्दा को मानसिक रोगों के अस्पताल से छुट्टी दिलवाई; साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया और यश अर्जित किया। वे बहुत वर्षों तक रणजित देसाई पत्नी के रूप में कोवाड़ में रहीं; लेकिन अन्ततः निर्वाह-भत्ता लेकर उन्हें रणजित देसाई और कोवाड़ दोनों को छोड़ना पड़ा, जबकि वे दोनों में से एक को भी छोड़ने के लिए तैयार नहीं थीं।

साठ वर्ष की परिपक्व अवस्था में तलाक की नौबत क्यों आई? माधवी देसाई की आत्मकथा को पढ़कर जब हम इस प्रश्न का उत्तर जानना चाहतें हैं तो कई कारण दिखाई पड़ते हैं। एक कारण तो दोनों का वर्गीय विलगाव है। माधवी का सम्बन्ध मध्यवर्ग से था। उनके संस्कार मध्यवर्ग के थे उनके मान-मूल्यों मध्यवर्ग के थे; जिनका रणजित देसाई के सामन्त वर्गीय संस्कारों और मान-मूल्य से ताल-मेल नहीं बैठ पाया। दूसरा कारण रणजित देसाई के परिजनों का माधवीजी के प्रति विद्वेषी, ईर्ष्यालु और विरोधी रवैया था। वे लोग ब्राह्मण विधवा माधवी के मराठा रणजित देसाई के साथ विवाह को कभी स्वीकार नहीं कर पाये। उन्होंने पति-पत्नी के बीच दूरी उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त प्रत्येक अवसर का उपयोग किया और अन्ततः वे सफल रहे। तलाक की मांग रणजित देसाई ने की और माधवीजी ने अपने बृद्ध पिता के परामर्श पर उसे स्वीकार कर लिया। तीसरा कारण मनोवैज्ञानिक था; और सम्भवतः यही सबसे बड़ा कारण था। 'नाच री घुमा' में रणजित देसाई एक आत्मकेन्द्रित, आत्ममुग्ध, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अपसामान्य व्यक्ति के रूप में सामने आते हैं। यदि उन्हें किसी सुख-दुख की चिन्ता है तो वह केवल उनका अपना सुख-दुख है। वे माधवी जी के आग्रह पर बाईस वर्ष बाद अपनी पहली पत्नी सुनन्दा से मिलते हैं। माधवीजी तो सुनन्दा का पागलखाने से उद्धार करवाती हैं, किन्तु रणजित देसाई की उसमें कोई रूचि नहीं है। उनकी असामान्यता के अनेक पक्ष 'नाच री घुमा' में उभरकर सामने आये हैं। हो सकता है कि रणजित देसाई माधवीजी के साथ अपने संबंधों की कहानी लिखें तो उनका और माधवीजी के व्यक्तित्व का दूसरा ही रूप हमारे सामने आये।

'नाच री घुमा' का अनेक दृष्टियों से महत्व है। वह एक रोचक कलाकृति तो है ही; और एक नारी के जीवन की कहानी के कारण समकालीन महाराष्ट्रीय एवं भारतीय समाज में नारी की स्थिति का प्रामाणिक दस्तावेज भी है अपनी आत्मकथा के माध्यम से लेखिका ने नारी-जीवन का मनोवैज्ञानिक मार्मिक और व्यथापूर्ण चित्र अंकित किया है। क्या हमारे समाज में स्त्री की स्थिति यही नहीं है—' मुझे लग रहा था कि मैं स्वामिनी हूं। हम सभी ऐसा ही सोचती हैं। बस, चिकनी-चुपड़ी बातों पर फिसलती

हैं और मीठी बोली पर लहराती रहती हैं। सुहागन सोलह श्रृंगार किये रहती है। पर वह तो दान होता है और हम उसे समझे बिना उस श्रृंगार से सज-धजकर घूमती रहती हैं। कभी बरगद की परिक्रमां करती हैं तो कभी करवा चौथ का व्रत रखती हैं। खुद नाचती रहती हैं और सबको यही कहती हैं—'नाच रही घुमा'।" (पृष्ठ 258) इस पर यदि किसी स्त्री को सामन्ती परिवार में रहना पड़े तो कोढ़ में खाज उसकी स्थिति हो जाती है—" सामन्ती घरों में नारी के साथ जिस तरह का व्यवहार किया जाता है, वही मेरे साथ किया जा रहा है। उन्हें यदि मेरी जरूरत ही नहीं है तो मेरे यहां रहने का मतलब क्या है?..." (पृष्ठ 258) माधवीजी की आत्मकथा में अनके स्त्रियों के माध्यम से नारी का मनोविज्ञान सूक्ष्मता के साथ उभरकर सामने आया है। इस आत्मकथा से हमें यह भी पता चलता है कि महाराष्ट्र में साहित्यकारों का बड़ा सम्मान है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में साहित्यकार के प्रति सम्मान की वैसी भावना न आम जनता में है और न राजनेताओं में। इस आत्मकथा से महाराष्ट्रीय समाज की अंतरंग और अनौपचारिक छवि सामने आती है। यह छवि इसलिये और भी प्रभावशाली बन पड़ी है, क्योंकि लेखिका न केवल प्रबुद्ध और भावप्रवण है, अपितु उसमें प्रबल सामाजिक संचेता भी है। फलतः 'नाच री घुमा' एक सामाजिक दस्तावेज भी बन गयी है।

डा० प्रतिभा मुदलियार ने अनुवाद बहुत अच्छा किया है। 'खलेरा' और 'लफड़ा' जैसे एक-दो मराठी शब्दों और 'देहविधि' और 'स्थानापत्र' जैसे कुछ शब्दों के विशेष मराठी अर्थों में प्रयोग अथवा "ऐसा कोई न कहे कि 'देहाती कार्यक्रम', इसकी मैंने खबरदारी ली थी।" (पृष्ठ 238) जैसे एकाध प्रभावित वाक्यों से ही लगता है कि हम एक अनुदित रचना पढ़ रहे हैं; अन्यथा 'नाच री घुमा' को पढ़ते समय हम मौलिक रचना पढ़ने का आनन्द पाते हैं। 'नाच री घुमा' का हिन्दी में प्रकाशन निश्चय ही सुखद है। और हमारा एक महत्वपूर्ण कृति से साक्षात्कार होता है।

चर्चित कृति—नाच री घुमा (आत्मकथा)-ले० माधवी देसाई; अनु० डा० प्रतिभा मुदलिय प्रका० अभिरूचि प्रकाशन 3/114, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली प्रथम संस्करण 1994, मूल्य 180.00 रु०

पठनीय आलोचना का प्रतिमान

—राजकुमार सैनी

आलोच्य पुस्तक को पढ़ने से पूर्व जब मैंने हरिशंकर परसाई जी द्वारा लिखित फ्लैप-मैटर पढ़ा तो एक बारगी लगा कि परसाई जी ने स्नेह के वशीभूत हो कर कुछ अतिशयोक्ति कर डाली है; लेकिन पुस्तक पढ़ने के बाद अब महसूस करता हूं कि उन्होंने श्याम कश्यप की आलोचना के बारे में जो लिखा है वह सोच-समझकर ही लिखा है और युक्तियुक्त भी है। परसाई जी लिखते हैं:

'श्याम कश्यप ने इन आलोचना-निबन्धों में .... जड़ताओं को तोड़ने की **कोशिश की है**। उन्होंने नए सिरे से साहसिक चिंतन किया है। रचना का तात्विक विवेचन करने की **कोशिश की है**। वर्तमान यथार्थ और इतिहास को जोड़कर समझने की **कोशिश की है**। वे रचना को स्वयं सही संदर्भ में समझने की **कोशिश करते लगते हैं**।" (रेखांकन मेरा है)

उपर्युक्त अंश में **'कोशिश की है'** वाक्य-खंड की तीन बार आवृत्ति हुई है। चौथी आवृत्ति में परसाई जी ने 'कोशिश करते लगते हैं' लिखा। इतने संक्षिप्त पैराग्राफ में एक ही वाक्य-खंड की तीन (या चार बार) आवृत्ति गद्य की छटा को कम करती है; कोई और होता तो हम मान लेते कि यह टिप्पणी करने वाले के गद्य की कमजोरी है; लेकिन परसाई जी हिन्दी के समकालीन समर्थतम गद्यकारों में हैं; उनके बारे में ऐसा कहना सूरज को चिराग दिखाना है; तो क्या परसाई जी से कोई भूल हो गई? बड़े-बड़े तैराकों से भूलचूक हो जाती है; श्री क़ेदार नाथ अग्रवाल ने दिविक रमेश के बारे में एक प्रशंसापरक आलेख लिख डाला था। महाकवि निराला ने अपने जमाने की एक लेखिका [श्रीमती रामेश्वरी 'चकोरी'] पर एक स्तुतिपरक निबंध लिखा था। लेकिन परसाई जी से ऐसी कोई भूल नहीं हुई। 'कोशिश की है' पर जोर देने का आशय लगभग यही है कि श्याम कश्यप ने आलोचना के क्षेत्र में व्याप्त जड़ताओं को तोड़ने की कोशिश की है। इस कोशिश में वे कहां तक सफल हुए हैं, इस पर सुधीपाठक स्वयं विचार करेंगे। तथापि परसाई जी ने यह भी कहा है कि कुल मिलाकर यह बहुत शक्तिशाली गद्य है और चालू आलोचनाओं से अलग है। 'बहुत पढ़कर, चिंतन करके, मेहनत करके, तत्व को पकड़कर ये आलोचनाएं लिखी गई हैं।'

पुस्तक के पहले निबंध **'शमशेर की कविता-विकास की तीन मंजिलें'** में शमशेर के काव्यलोक को स्वीकारात्मक अन्दाज के साथ चित्रित किया गया है। शमशेर की काव्य-यात्रा के विकास को दिखलाते हुए उनकी कला और वैचारिक प्रतिबद्धता को 'मणि-कांचन-संयोग' के लहजे में सोदाहरण और व्याख्या सहित प्रतिपादित किया गया है। डा० रामविलास शर्मा ने 'नयी कविता और अस्तित्ववाद' शीर्षक अपनी पुस्तक में संकलित 'शमशेर बहादुर सिंह का आत्म संघर्ष और उनकी कविता' शीर्षक निबंध में शमशेर की रचना-प्रक्रिया को लेकर कुछ अन्तर्विरोधों की चर्चा की थी। उस प्रसंग में उन्होंने एक महत्वपूर्ण बात यह कही थी कि वे अपने **रीतिवादी-रूमानी सौन्दर्य बोध से अपने मार्क्सवादी विवेक की संगति नहीं बैठा पाए**। श्याम कश्यप ने शमशेर के संदर्भ में शायद ऐसी कोई असंगति नहीं देखी। **यदि नहीं देखी** तो उन्हें इस मुद्दे पर डा० रामविलास शर्मा से भी मुठभेड़ करनी थी; **यदि देखी है** तो उन्हें इसका संकेत करना था। तथापि श्याम कश्यप यह कह कर पल्ला छुड़ा लेते हैं— "उनकी अनेक ऐसी कविताएं हैं जिनमें कुहासा बहुत गहरा है। एक दृश्य है, पर अस्पष्ट; लय है, पर अर्थ से दृढ़तापूर्वक सम्बद्ध नहीं। यह सब प्रगतिशील जीवन-दृष्टि वाले कवि के लिए आश्चर्यजनक है।" थोड़ा आगे चलकर वे लगभग क्षमायाचक स्वर में कह जाते हैं— "शमशेर जी की कविता के बारे में एक सामान्य धारणा है कि उनपर अतियथार्थवाद, प्रभाववाद आदि आधुनिकतावादी आन्दोलनों का गहरा असर है। यह सावधानी से जांचने की चीज़ है, जो मैं इस समीक्षा में नहीं कर सका हूं।"

इस विषय पर एक अन्य निबन्ध में विचार करने का उन्होंने इरादा व्यक्त किया है। यह लेख शमशेर की तीन पुस्तकों पर एक लम्बी समीक्षात्मक टिप्पणी के रूप में लिखा गया है। इसी प्रकार 'जनमन का

सजग चितेराः केदार' तथा 'त्रिलोचनः रंगों का एक पूरा संसार' शीर्षक लेख भी पुस्तक-समीक्षाओं के रूप में ही लिखे गए हैं। यद्यपि ये समीक्षाएं काफी लम्बी, विस्तृत और स्वतः पूर्ण हैं तथा इनमें केदार नाथ अग्रवाल और त्रिलोचन के काव्य संसार का विविध-आयामी, विश्लेषणात्मक और व्याख्या सहित विवेचन है, तथापि पुस्तक समीक्षाओं की अपनी 'सीमा' होती है और उसी तरह इन आलेखों की भी अपनी 'सीमाएं' हैं। इन प्रारंभिक तीनों समीक्षाओं के स्वर स्वीकारात्मक रहे हैं और समीक्षक ने इनके किसी भी पक्ष के बारे में कोई नकारात्मक अभिमत व्यक्त नहीं किया और यदि कहीं किया भी तो बहुत कम, लगभग नगण्य; तथापि त्रिलोचन वाली समीक्षा में इतना जरूर कहा गया है कि उनकी कई कविताएं ऐसी भी हैं जो बेहद सपाट हो कर बेजान हो गई हैं। 'रैन बसेरा', 'बिना मिले लौटने की राह में' शीर्षक दोनों लम्बी कविताओं को 'बिल्कुल प्रभावहीन' बताया गया है और यह भी कि 'शांतिपर्व' खण्ड में संकलित चार काव्य रूपक भी विशेष प्रभावित नहीं करते।

बावजूद इस सबके, तीनों समीक्षाएं काव्यात्मक विवेक तथा संविवेक (discretion) के साथ लिखी गई हैं और जिन कवियों पर वे लिखी गई हैं, उनके बारे में हमारी समझ, सोच और संवेदनात्मक तथा ज्ञानात्मक सम्पृक्ति को बढ़ाती हैं।

'नए कलावाद का उत्थान' और 'कलावाद के अधूरे साक्षात्कार' शीर्षक आलेख भी लम्बी पुस्तक-समीक्षाओं के उदाहरण हैं। तथापि ये समीक्षाएं कलावादी और नव-कलावादी प्रवृत्तियों के विरुद्ध समर्थ और सक्षम कोटि की विवाद-शैली तथा विवाद-कला की बानगियां हैं। इन समीक्षाओं में नव-कलावादी संकल्पनाओं की भी सामाजिक, समाजशास्त्रीय और प्रगतिशील विचारधारात्मक धरातल पर संवीक्षा की गई है, जो पूरी गहमागहमी के साथ सुधी पाठक का ध्यान आकर्षित करती है।

मलयज की आलोचना करते समय तथा 'पूर्वग्रह' की भर्त्सना करते वक्त यह अतिरिक्त सावधानी बरती गई है कि 'गुरूवर' (डा॰ नामवर सिंह) नाराज न हो जाएं कहीं! वरना इस तथ्य को भी नज़र-अन्दाज़ नहीं किया जाना चाहिये था कि कुलीनतावादी और 'सुरूचि'-संपन्न अवसरवादी 'प्रगतिशील' प्राध्यापक-आलोचकों ने तथा उनकी उंगलियां पकड़ कर चलने वाले 'प्रगतिशील' रचनाकारों ने उसी मलयज और उसी पूर्वग्रह-मंडल के प्रतिपादकों के साथ **छिपकर गलबाहीं की और खुले में शैडो-बाक्सिंग।** फिर भी इन लम्बी समीक्षाओं और 'एक चिथड़ा सुख' की छोटी समीक्षा को पढ़ कर परसाई जी की यह धारणा मस्तिष्क में कौंध-कौंध उठती है कि **श्याम कश्यप की भाषा में शक्ति है, तूफ़ानी गति है और जगह-जगह वह आक्रामक हो गई है। तथा यह भी कि उनकी शैली में बांकपन है।**

इस पुस्तक में संकलित **'यथार्थ और कल्पना का सर्जनात्मक द्वंद्वः अमृत लाल नागर'** तथा **'बसन्तीः सामाजिक रचना और संबंधों में परिवर्तनों का सूक्ष्म चित्रांकन'** शीर्षक दोनों लम्बी समीक्षाएं संप्रत्ययों के सारगर्भित और सटीक विश्लेषणा-संश्लेषणा की उत्तम मिसालें हैं। नागर जी के उपन्यास 'नाच्यो बहुत गोपाल' और भीष्म जी के उपन्यास 'बसन्ती' के लगभग सम्पूर्ण विवेचन प्रस्तुत किये गये हैं। किन्हीं दो उपन्यासों पर **ऐसे गंभीर अध्ययन अपनी विशिष्टता और अद्वितीयता के लिये याद किये जाएंगे।**

ये दोनों समीक्षाएं भी स्वीकारात्मक-स्वर-प्रधान हैं और इनमें दोनों उपन्यासों की सीमाओं और खामियों के बारे में कोई खास टिप्पणियां नहीं की गईं (जबकि दुनिया की किसी भी किताब में कोई न कोई खामी ज़रूर होती है और समीक्षा करते समय उसका भी कमोबेश हवाला दिया जाना चाहिये, चाहे वह उल्लेख संक्षिप्त ही क्यों न हो।) फिर भी ये दोनों उपन्यास हमारे सामाजिक जीवन के निचले स्तरों पर विद्यमान उन वास्तविकताओं से हमारा साक्षात्कार कराते हैं, जिन पर और किसी समकालीन उपन्यासकार ने इतनी तल्लीनता, संलग्नता और विस्तार के साथ नहीं लिखा, जितनी कि तल्लीनता, संलग्नता और विस्तार के साथ अमृतलाल नागर (नाच्यो बहुत गोपाल) और भीष्म साहनी (बसन्ती) ने लिखा है। इस दृष्टि से इन दोनों उपन्यासकारों ने प्रेमचंद के सामाजिक यथार्थ के चित्रण की परम्परा को सचमुच बहुत आगे बढ़ाया है। श्याम कश्यप ने भी इन दोनों उपन्यासों के विस्तृत विवेचन द्वारा डा॰ रामविलास शर्मा की विवेचन परम्परा को और आगे बढ़ाया।
यह कार्य या इससे मिलता जुलता कार्य कुछ और आलोचक समीक्षक भी कर रहे हैं। फिर भी नागर जी के 'नाच्यो बहुत गोपाल' और भीष्म जी के 'बसन्ती' उपन्यास पर इतने स्वतःपूर्ण विवेचन मेरे देखने में नहीं आए। अमृतलाल नागर जी के उपन्यास के बारे में श्याम कश्यप का निष्कर्ष कथन हैः

> "यहां उपन्यासकार 'अपने जीवन' तक सीमित न रह कर जनता के उस हिस्से में भीतर तक धंस जाता है जो समाज की 'गन्दगी' माने जाने वालों में भी तलछट की तरह है........................... इस उपन्यास की विषय वस्तु भी नागर जी के अन्य सभी उपन्यासों से बुहत भिन्न है, भिन्न ही नहीं, समूचे हिन्दी उपन्यास को गुणात्मक रूप से एक अगली और उच्चतर मंज़िल पर प्रतिष्ठित करने वाली भी। एक वाक्य में कहें तो इस उपन्यास की अन्तर्वस्तु मेहतर जीवन के दारुण यथार्थ से हमारा साक्षात्कार कराती है। सामंती दमन के निकृष्टतम रूपों पर अत्यन्त शक्तिशाली प्रहार कराने वाली क्रांतिकारी अन्तर्वस्तु है।

लगभग इसी प्रकार भीष्म साहनी के उपन्यास 'बसन्ती' के बारे में भी समीक्षक का यह अभिमत उद्धृत करने योग्य हैः

> "भीष्म जी ने अपनी इस कालकृति में जीवन यथार्थ के जिस टुकड़े को चुना है उसे खंड-खंड नहीं बल्कि उसकी सम्पूर्णता में चित्रित किया है। जो लोग प्रेमचंद की परंपरा का अर्थ सिर्फ गांवों के बारे में लिखने को ही समझते हैं, उन्हें देखना चाहिए कि इस उपन्यास में किस तरह महानगरों में भी सतह के एकदम नीचे तलछट के रूप में जीने वाले "गांवों" और झुग्गी-झोपड़ियों के महनतकश लोगों के दारुण जीवन को लेकर लिखते हुए लेखक ने निम्न वर्ग से उभर रही हिन्दुस्तान की एक बिल्कुल नयी औरत की यथार्थ पूर्ति गढ़ी है।"

अपने विवेचन में समीक्षक ने एक दायित्व-बोध के साथ उपन्यासकारों द्वारा चित्रित वस्तु, अन्तर्वस्तु और कलाकौशल पर सर्जनात्मक टिप्पणियां की हैं। उदाहरण के लिए समीक्षक की यह टिप्पणी ध्यातव्य हैः "भीष्म जी की एक अन्य विशेषता यह रही है कि मध्यम वर्गीय कथा-परिवेश के बीच भी वे सर्वहारा-वर्ग के कई ऐसे अविस्मरणीय चरित्र दे जाते हैं जो अपनी हल्की सी मौजूदगी मात्र से एक तीखा विरोधाभास खड़ा कर देते हैं। **मध्यम वर्ग की कठोर आलोचना और तीखे विरोधाभास के जरिये**

यह तीव्र द्वंद्व पैदा करने की कला ही उनको नयी कहानी आन्दोलन के आधुनिकतावादी कथाकारों से अलग और विशिष्ट बनाती है—साथ ही सार्थक भी।" (रेखांकन मेरा है)। इसी प्रकार नागर जी के बारे में समीक्षक की यह टिप्पणी भी अर्थपूर्ण है कि नागर जी ने अपने दोनों उपन्यासों ('नाच्यो बहुत गोपाल' तथा 'अमृत और विष' में) यह समझने की कोशिश की है कि यथार्थ और कल्पना के द्वंद्व से किस तरह एक सशक्त कलाकृति निर्मित होती है।

'जिन्दगीनामा' (कृष्णा सोबती) तथा हरिशंकर परसाई की दो पुस्तकों ('विकलांग श्रद्धा का दौर', 'और अन्त में') पर छोटी-छोटी समीक्षाएं भी थोड़े में बहुत कह जाती हैं। बड़े ही सहज अन्दाज के साथ समीक्षक ने कृष्ण सोबती के "वर्जित प्रसंगों के एकदम खुले 'बोल्ड' चित्रण को तरजीह न देते हुए उनके पंजाबी लहजे वाले अन्यन्त नैसर्गिक और आत्मीय गद्य की ओर पाठकों का ध्यान आकर्पित किया है। इसी प्रकार हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं की विशिष्टता को रेखांकित करते हुए वे परसाई जी की व्यञ्जनात्मक भाषा और सर्जनात्मक गद्य के बारे में एक अर्थपूर्ण टिप्पणी करते हैं: "वे जब कोई वाक्य लिखते तो उसके पीछे हिन्दी भाषी जनता के सदियों के सुख-दुख और परिहासपूर्ण जीवनानुभवों की गूंज सुनाई देती है।"

त्रिलोचन की कविताओं में प्रायः एक ही रंग मिलता है। यह शिकायत त्रिलोचन से की जाती रही है। लेकिन त्रिलोचन के पक्ष का समर्थन करते हुए श्याम कश्यप एक **सुन्दर उक्ति** लिखते हैं जो उतनी ही सुन्दर **युक्ति** भी है: "इस रंगीन चकरी को घुमाने से जो श्वेत रंग उभरेगा, निस्सन्देह वह त्रिलोचन का अपना निजी रंग है।"

शमशेर के कवि होने के महत्व को श्याम कश्यप ने सादगी और बेबाके के साथ विशेपांकित कर दिखाया है: **"इस पृथ्वी पर इन्सान के और फिर एक कवि होने के बाद भला और क्या चाहिए।"** यहां शमशेर की कविता 'ओ मेरे घर' की निम्नलिखित पंक्तियों को उद्धृत करना भी अप्रासंगिक न होगा—

"ओ, मेरे घर।
ओ हे मेरी पृथ्वी।
सांस के एवज तूने क्या दिया मुझे।
ओ मेरी मां?
तूने युद्ध ही मुझे दिया प्रेम ही मुझे दिया
क्रूरतम कटुतम ...."
"इन्सान के अंखोटे में डालकर मुझे सब कुछ तो दे दिया।
जब मुझे मेरे कवि का बीज दिया कटु-तिक्त।
फिर एक ही जन्म में और क्या-क्या है—चाहिए!"

—ओ मेरे घर' [शमशेर]

सार-संक्षेप यह कि श्याम कश्यप ने इस पुस्तक में समकालीन आलोचना के परिदृश्य पर एक जागरुक समीक्षक की दृष्टि से भंगिमा-पूर्ण टिप्पणियां की हैं। एक सामाजिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण के साथ उन्होंने कलावादी आलोचना के साथ शास्त्रार्थ (पॉलिमक्स) किया है और कला के क्षेत्र में मार्क्सवादी दृष्टि के साथ अपनी पक्षधरता को रखांकित किया है। पुस्तक की 'सीमा' अथवा विशेपता यह है कि इसमें संकलित सभी लेख पुस्तक-समीक्षाओं के रूप में लिखे गए हैं। यद्यपि ये समीक्षाएं व्यावहारिक समीक्षा के क्षेत्र में सर्जनात्मक-आलोचनात्मक हस्ताक्षेप की तरह हैं तथापि ये हस्ताक्षेप सारगर्भित और सार्थक ढंग से हिन्दी समीक्षा की नई जमीन तोड़ते हैं; प्रगतिशील समीक्षा का पिष्टपोषण न हो कर कलात्मक प्रतिमानों और मार्क्सवादी विचारधारा के बीच सुसंगति बैठाने की यहां जागरूक और ईमानदार कोशिश की गई है। इन समीक्षाओं में पुस्तक-समीक्षा जैसी समीक्षा की 'उपविधा' विवेचनात्मक संबंधी विस्तार के साथ निखार और परिष्कार का परिचय देती हुई आलोचना-समालोचना के उत्कर्ष को छू लेती है। यह पुस्तक हिन्दी आलोचना के इतिहास में एक बार फिर इस तथ्य को उजागर कर देती है कि पुस्तक-समीक्षा कोई उपेक्षणीय उपविधा नहीं है, बल्कि कृति की मीमांसा करने का एकमात्र प्रामाणिक निमित्त है। व्यावहारिक समीक्षा की सबसे अच्छी मिसाल पुस्तक समीक्षा ही हो सकती है; श्याम कश्यप की ये समीक्षाएं मेरी इस धारणा को पुष्ट करती हैं और व्यावहारिक समीक्षा की ये महत्वपूर्ण बानगियां हैं।

पुस्तकः मुठभेड़, लेखकः श्याम कश्यप, प्रकाशक :आकार, **सी-3 / 13, माडल टाउन-III,** दिल्ली-110009, मूल्यः 125/-

प्रेम संबधों की कहानियां

—डा॰ सरोजिनी आर्य

प्रेम एक ऐसी भावना है जिसको विश्व साहित्य में किसी न किसी रूप में प्रत्येक कृतिकार ने अभिव्यक्त किया है। यह भी सत्य है कि तमाम मानवीय संबंध प्रेम से प्रभावित होते हैं। मनुष्य के विकास और कार्यकलाप पर प्रेम संबंधों का पर्याप्त असर पड़ता है। प्रेम आसक्ति भी है और घृणा के चरम बिन्दुओं तक भी जा सकता है। यह प्रेम और घृणा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। साहित्य में प्रेम तत्व की प्रधानता रही है क्योंकि मानव मन के विभिन्न घात-प्रतिघात इसी मानसिक प्रक्रिया की देन है।

जब कोई कथाकार प्रेम को ही विषय बनाकर बहुत सी कहानियां लिख चुका हो तो आवश्यक हो जाता है कि उसे किसी तर्क की कसौटी पर मूल्यांकित किया जाये। यह देखा जाये कि प्रेम के किस रूप को कहानियों में प्रधानता दी गई है। इन कहानियों के संबंध में यह भी मूल्यांकित करना होगा कि स्त्री पुरुष संबंधों की कहानियों में कहीं चटखारे लेकर प्रेम या सेक्स संबंधों का चित्रण तो नहीं किया गया है। इस दृष्टि से जब मैंने जगदीश चतुर्वेदी द्वारा रचित "प्रेम संबंधों की कहानियां" का अध्ययन किया तो मुझे लगा कि कुछ कहानियां निश्चय ही ऐसी हैं जिनमें प्रेम संबंधों की गहराइयों तक जाकर पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। ऐसी कैहानियां मार्मिक भी हैं और प्रेम के कई नये आयाम भी उसमें संस्पर्शित किये गए हैं। कुछ कहानियों में विपरीत यौन के आकर्षण का भी चित्रण है पर वहां भी अश्लीलता का आरोप नहीं लगाया जा सकता।

मैं मानती हूं कि साहित्य में शील या अश्लील कुछ नहीं होता। इसके संबंध में विषय का प्रस्तुतीकरण ही रचना की कसौटी

हो सकता है। जगदीश चतुर्वेदी की प्रेम कहानियों में शैशव के प्रेम, युवा प्रेम, विवाहित प्रेम और विवाहेतर प्रेम के प्रसंगों पर कहानियां हैं। जगदीश जी प्रेम संबंधों पर कहानियां लिखने के लिये विख्यात रहे हैं और उनकी कुछ प्रेम कहानियों पर आरोप भी लगते रहते हैं।

यों प्रेम जैसे तत्व पर हिंदी में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। तमाम कविताएं, कहानियां प्रेम प्रसंगों से भरी हुई है। लेकिन प्रेम को महसूस करके तथा मन की गहराइयों को छूकर इस संदर्भ में विविध आयामों को प्रदर्शित करने की योग्यता बहुत कम कथाकारों में पाई जाती है। इन प्रेम प्रसंगों का वर्णन इस संग्रह की कहानियों में अपने आप में नयी नयी अभिव्यंजनाओं के साथ दृष्टिगत होता है और जगदीश चतुर्वेदी इसमें अग्रणी कहे जा सकते हैं।

कहानी संग्रह में प्रेम संबंधों की 30 कहानियां हैं। पुस्तक के आमुख में लेखक ने स्वयं स्वीकारा है कि उनमें घुटघुट कर जीने की चाह नहीं है। वे तो तल्लीन होकर जीवन जीने में विश्वास करते हैं और किसी भी सामाजिक मूल्य को चाहे वह सेक्स ही क्यों न हो अपनी कलम से लेखनीबद्ध करने में हिचकते नहीं। उनके विचार में जीवन की वास्तविकता को नकारा नहीं जा सकता। लेखक का यह स्पष्टवादी रुख सराहनीय है। कहानीकार के जीवन मूल्यों का साक्षात्कार इन कहानियों द्वारा संभव है। पाठकों को कहानियां पढते समय ऐसा महसूस होता है कि ऐसा किसी के भी साथ या अपने साथ भी हो सकता है अर्थात् जीवन का सत्य इन कहानियों में प्रदर्शित है। कहानियां पढ़ते समय पाठकों के दिमाग में लेखक की एक तस्वीर भी बनती चली जाती है।

जैसा कि पहले बताया गया है कि समीक्षा की दृष्टि से लेखक की कहानियां निम्न प्रकार के प्रेम संदर्भों में वर्गीकृत की जा सकती हैः

(1) शैशवकालीन प्रेम
(2) विवाहित प्रेम
(3) विवाहेत्तर प्रेम
(4) विवाह पूर्व प्रेम
(5) असामान्य प्रेम

शैशवकालीन प्रेम

उनकी अनेक कहानियों में बाल प्रेम की स्मृतियां परिव्याप्त हैं। उदाहरण के लिये उनकी पहली कहानी "उदास गुल मोहर" में जीत का जया प्रति आकर्षण सहज है और जया के शरीर की मांसलता के प्रति किशोर मोह की स्वाभाकि जिज्ञासा दृष्टिगत होती है। इसी कहानी में जीत के प्रेम प्रसंग संबंधी अनेक मनोभावों, प्रेम, भय, छूने की चाह, आश्चर्य, सानिध्य, प्रतीक्षा, न बिछुड़ने की चाह का स्पष्ट चित्रण किया गया है। 7 वर्ष की उम्र में जीत को जया के शारीरिक सौंदर्य के प्रति आकपर्ण होता है जैसे जया अपनी फ्राक के छोर को झाड़ती है तो जीत को उसके गोरे मुलायम शरीर का अनावृत भाग बड़ा रेशमी लगता है। वह सोचता है जया सुन्दर है केतकी के ताजे फूलसी खूबसूरत। लेखक की पैनी दृष्टि किशोर के मन में छुपे बसे नारी सौन्दर्य को पकड़ने में सक्षम साबित हुई है। दूसरी कहानी में 'भूले हुए कस्बे की याद' में लेखक 12 वर्ष बाद अपनी बचपन की परिचिता स्निग्धा से मिलने जाता है। लेखक को किशोरी का भोलापन इतना अधिक आकर्षित करता है कि स्निग्धा के माध्यम से वह इसे यो चित्रित करता है। "स्निग्धा के माथें का निशान तो मिट गया होगा। मैंने उससे एक बार कहा था कि सिर को यदि दो सौ बार साड़ी के पल्ले में रगड़ो तो इसमें से सोने का तार निकलेगा और उस मासूम लड़की ने खूनाखून होकर भी तार निकालने की कोशिश की थी।" किशोरियों में आकर्षण नैसर्गिक प्रक्रिया है जिसे लेखक पाठकों को अवगत कराना चाहता है। इसी कहानी में बस में बैठे जवान ड्राइवर की ओर सेठ जी की विटिया आकर्षित हो जाती है और वह ड्राइवर भी शीशा टेढ़ा करके उसे देखकर मुस्कुराने लगता है। दो अजनबी के बीच बस में प्रेम की अभिव्यक्ति इसी तरह होती है।

बचपन के संबंध बड़े होकर भी हृदय में कहीं न कही सुप्त अवस्था में रहते हैं। यह चित्रण भी इस कहानी में दृष्टवय होता है। जब नायक नायिका स्निग्धा मिलने आता है और उसका हाल चाल जानता है उसके प्रति अपना स्नेह और आत्मीयता दिखाता है। वह भी उससे प्रेम करने के लिये आतुर है।

"विवर्त" कहानी में बाल सुलभ प्रेम क्रियाओं का वर्णन मिलता है। इसमें चौकीदार की एक अनपढ़ गंवार लड़की की और नायक का आकर्षण हो जाता है। वह उसे बहुत खूबसूरत पाता है। यह लड़की दिन भर बगीचे में सड़कों पर मटर-गश्ती करती रहती है। छोटा बालक प्रेमवश साहचर्य भावना से ओतप्रोत हो उसे आंवला फेंककर मारता है, बदले में वह लड़की नायक को जीभ चिढ़ा कर भाग जाती है। इस प्रकार की बाल सुलभ प्रेमाभिव्यक्तियां घर-परिवार और पास-पड़ोस में आमतौर पर देखने सुनने को मिल जाती है। बाल्यावस्था में भी प्रेमाकर्षण हो सकता है उसकी प्रतिक्रिया भी होना स्वाभाविक ही है। नायक का उस लड़की को पीछे बगीचे में मिलने जाना और उस लड़की का भी फ्रांकें बदल-बदल कर नायक के सामने आना। छोटी अवस्था में भी बालकों की सैक्स की सुप्त अवस्था होती है जो अनुकूल परिस्थितियों में दोनों ओर से अभिव्यक्त हो जाती है। जैसे इसी कहानी में लड़का-लड़की को पकड़ लेता है और वह उससे सटती जाती है। इसी तरह नायक एक बार लड़की के गालों को भी सैक्स व प्रेम की भावना से ओत-प्रोत हो चूम लेता है।

बालिकाएं होश संभालते ही अपने भावी जीवन साथी के सपने देखने लगती हैं। इस प्रवृत्ति को लेखन ने अपनी कहानी 'नया अनुभव' के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाया है। इस कहानी में भी छोटी कन्या अपने भावी पति के लिए मन की कल्पनाओं में पति का चित्र बनाकर अभिव्यक्त करती है और कहती है "मेरे पति बिल्कुल बेफिकर तबियत होंगे, लम्बी उठी हुई नाक, ग्रीक ठोड़ी, कान, ओंठ व घंघुराले बाल....। प्रेम के कारण जान दे देने के मामले भी कम नहीं होते हैं। लेखक अपनी कहानी "रम्भी" के माध्यम से इस प्रवृत्ति को पाठकों के समक्ष रखता है। किशोर अवस्था में लड़कों को लड़कियों के शरीर की बनावट में विभिन्नता के प्रति बहुत उत्सुकता होती है और वह लड़कियों द्वारा पहने जाने वाले कपड़ों को बहुत ध्यान से देखते हैं। "ड्राइंग रूम की पेंटिंग" नामक कहानी में नायक अपनी किशोरावस्था का संस्मरण इसी प्रकार बताता है कि उसे अपनी मामी हमउम्र लगती थी और यह मामी की ओर आकर्षित सा हो गया था और अपने मामा से नफरत करता था। फलस्वरूप वह बड़े अजीब ढंग से अपनी इस भावना को व्यक्त करता था। वह अपनी नवविवाहिता की बा डी को अरगनी पर से उतार कर सूंघ लेता है। यह कहानी किशोरावस्था की बाल सुलभ उत्सुकता और प्रेमार्कपण का सुन्दर नमूना है। किशोरावस्था में भी किशोर-किशोरी जब एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं तो पहले मुस्कुराते, फिर शर्माते हैं और बड़े भोलेपन से उन्हें एक दूसरे का जो कुछ

भी अच्छा लगता है उसके बारे में साफ कह देते हैं। लड़कियां कभी-कभी उस आयु में लड़कों से तेज लगती हैं। लज्जाशीलता नारियों का ही गुण-धर्म नहीं होता वह पुरुषों में भी हो सकता है। लेखक की 'कुंकुमो साझ का तैरता सूरज' नामक कहानी में 13 साल की रेखा और 14 साल के नायक के संस्मरण इसी तरह के हैं। रेखा नायक के ओंठ अधिक लाल और हाथ बहुत गोरे पाती है और नायक यह सुनकर एकदम शरमा जाता है और उसके गाल लाल हो जाते हैं। यदि कन्यायें अधिक हों और किशोर कम संख्या में हों तो एक पुरुष को अनेक कन्याएं चाहने लगती हैं। कन्याएं अधिकांशतः भावुक होती हैं और अपनी इस भावुकता के कारण एक तरफा प्रेम करने लगती हैं। एक तरफ वे प्रेम का अंकन लेखक ने कुछ इस तरह किया है, जैसे "मैं धंटो तुम्हारे सामने बैठी तुम्हें देखा करती थी। पर तुम अपनी पुस्तकों में उलझे रहते थे। तुमने तो मुझे निरी बच्ची समझा होगा, क्यूं ना?"

विवाहित प्रेम

विवाह के बाद भी पति पत्नी में प्रेम पैदा हो सकता है दरअसल भारत की सामाजिक परम्परा के अंतर्गत अधिकांश परिवारों में यही प्रेम कायम रहता है। पति के प्रति पत्नी की पतिपरायणता महत्वपूर्ण होती है। यही प्रेम संबंधी बुढ़ापे में भी कायम रहते हैं और बड़ी निष्ठा व ईमानदारी से निभाये जाते हैं। "नया अनुभव" नामक कहानी में लेखक ने बुढ़ापे में भी पति पत्नी के बीच सेक्स की इच्छा को स्वाभाविक बताया है। इस संदर्भ में इस के साथ यह भी दृष्टव्य है कि अनेक स्थितियों में विवाह के बाद पुरुष को केवल अपनी भूख शांत करने के लिये और उसके बच्चों को पालने के लिये ही एक उपकरण मानता है, वह उससे प्रेम नहीं करता। बल्कि बीबी के होते हुए वह दूसरी विवाहित महिलाओं की ओर आकर्षित होता जाता है। आज के समाज में यह आम बात रोग की तरह हो गयी है। लेखक का नायक स्वंय स्वीकारता है— "मैं भी अपनी पत्नी को जिसे मैंने कभी स्वीकारा नहीं जो केवल मात्र मेरे बच्चों की मां है- मेरी गंदी भूख है, को किसी भी तरह अपने जीवन से दूर हटा देना चाहता हूं। मुझे उनसे नफरत है।" इसी तरह नायक के मित्र भुवनेश का भी यही हाल है ऐसे परिवारों में परस्त्री प्रेम के कारण पति को पत्नी से ही नफरत हो जाती है तो बच्चों में वह पत्नी की शकल की झलक पा उठता है और गर्जता है" मैं बच्चों को रखने के लिये तैयार हूं। उस जैसी फूहड़ को साथ रखकर अपने खून के टुकड़ों को जंगली नहीं बनाना चाहता। पर उसकी शक्ल से मुझे नफरत है-बेहद नफरत"।

विवाह पूर्व प्रेम संबंध

समाज में स्त्री-पुरुष के बीच में प्रेम कभी भी किसी भी उम्र में हो सकता है। अधिकांशतः प्रेम पहले होता है और विवाह बाद में। यह जरूरी भी नहीं होता कि विवाह प्रेम में ही बदले। शादी अन्यत्र हो जाने से विवाह पूर्व प्रेम धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है। "गोमी" नामक कहानी में नारी के विवाह पूर्व प्रेम की महानता, त्याग, समर्पण का अपूर्व चित्रण देखने को मिलता है। नारी सैक्स का ही साधन नहीं होती जैसे 'मुछआरन' परदेशी नायक के सैक्स युक्त प्यार के चंगुल में फंस जाती है और जीवन भर उसकी याद में तड़पती है। अन्त में वह उसी शहर के एक अस्पताल में जान दे देती है और अपनी जीवन भर की बचाई हुई पूंजी उसी नायक को जो उन दिनों फटेहाल और कंगाल हो जाता है अपना नाम बिना बताये भेज देती है। नारी की महानता, त्याग और विवाह पूर्व प्रेम का यह बेमिसाल नमूना है। विवाह पूर्व प्रेम सालों (साल) गुप्त अवस्था में भी रह सकता है। परन्तु वह समाप्त कभी नहीं होता। "पलायन" में नारी सौन्दर्य से भरपूर है गौर वर्ण, लम्बे रेशमी केश, केतकी सी आखों वाली चित्रलिखी सी वह नारी है। इस कहानी में प्रेम त्रिकोण है। नायिका का प्रेम तो नायक से होता है परन्तु उसका विवाह वकील से हो जाता है और फिर काफी दिनों बाद नायक मिलता है और पुरानी यादें जागृत हो जाती हैं जो नायक पर बुरा असर डालती है और वह तुरन्त कार से ड्राइवर करके उनका घर छोड़ देता है "युकिलपटस के साये" कहानी में नायक नायिका में विवाह पूर्व प्रगाढ़ प्रेम की झलक दिखाई देती है परन्तु उनकी सूखी जीवन में उनकी गरीबी आड़े आती है फिर भी दोनों एक दूसरे को त्यागते नहीं हैं बल्कि एक साथ मर जाना चाहते हैं। यह कहानी विवाह पूर्व भी सच्चे व प्रगाढ़ प्रेम की एक आभा पाठकों को देती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि विवाह पूर्व प्रेम सम्बन्ध सच्चे व पक्के होते है और कभी समाप्त नहीं होते, चाहे नायक-नायिका सालों साल एक दूसरे से न मिलने पायें, चाहे अन्यत्र दोनों के विवाह हो जायें, चाहे कितनी ही प्रतिकूल परिस्थितियां हों, जरा सी अनुकूल स्थितियां मिलने से प्रेम संबंध फिर नये बनकर प्रतिबंधित स्थितियों में भी फलने-फूलने लगते हैं।

विवाहेत्तर संबंध

कहानी संग्रह में पति और पत्नी दोनों के विवाह के बाद किसी अन्य पुरुष और स्त्री से उनके प्रेम के अनेक रूप मिलते हैं। जीवन में विवाह के बाद प्रेम हो जाना कोई गुनाह नहीं माना जाना चाहिए। पति कभी नौकरानी से प्रेम, तो कभी अपनी मित्र की पत्नी से, तो कभी कार्यालय की काम काजी महिला से प्रेम रचाता है। इस कहानी संग्रह की कहानी "अनाहूत क्षण" में पड़ोस के सिपाही की बीबी के साथ नायक का अर्द्ध रात्रि में प्रेम और सैक्स, नायक के घर में काम करने वाली नौकरानी से प्रेम वर्तमान में समाज के कोढ़ माने जाते हैं परन्तु प्रेम की प्रगाढ़ता प्रेमियों को प्रेम निभाने के लिए मजबूर कर देती है और इसके परिणामस्वरूप प्रेम की विविध पद्धतियों का जन्म हो जाता है। दूसरी कहानी "भूले हुए कस्बे की याद" में नायिका का विवाह हो जाता है परन्तु पति के साथ उसकी नहीं बनती है इसलिये वह अलग रहती है और जब बचपन का साथी उससे मिलने आता है तो वह खुश हो जाती है। उसका प्रेम हालांकि बात्सल्य से भरा होता है परन्तु उसमें मादकता की झलक भी होती है। वह अपने बचपन के साथी से प्रेम बांटना चाहती है और इसलिये जब वह बारिश में डाक बंगले लौट जाना चाहती है तो कुछ उदास हो जाती है परन्तु उसकी मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती है और अपने बचपन के साथी से मिलने को बात कहने से अपने आप को रोक लेती है। "कड़वाहट" कहानी में शादी-शुदा नायक अपनी बहन की सहेली की ओर आकर्षित हो जाता है और उसे अपने साथ घर ले आता है और अपनी पत्नी के सामने अपने ही घर में ठहरने की हिम्मत भी कर लेता है। इस मौके पर पत्नी के हृदय में अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएं उठती हैं। घर के रिश्ते सामाजिक बंधन परिपाटियों पर चले आते हैं उनको तोड़ना मुश्किल होता है परन्तु उन संबंधों के साथ-साथ प्रेम व्यापार भी परस्पर समायोजन करके चलाना आज समय की मांग है जिसे लेखक पाठकों तक पहुंचाता है। यह कटु सत्य इस कहानी में लेखक ने स्वीकार किया है- "यह लड़की मेरी बहन बनना चाहती है और हर लड़की जब किसी से प्रेम करना चाहती है तो पहले बहन बनती है।" सामाजिक संबंध और सीमाएं, रीति-रिवाज उसे खुल्लम-खुल्ला प्रेम संबंध कायम करने और निभाने नहीं देती। समाज की बेड़ियां तोड़ने की हिम्मत दोनों में ही नहीं होती। ऐसा भी देखने में आया है

कि कई बार लेखक जीवन की वास्तविक बातों को अश्लील समझकर उनका चित्रण नहीं करते पर इस कहानी संग्रह में सैक्स और प्रेम व्यापार का वर्णन भी मिलता है। "विवर्त" कहानी में घर के मालिक का जो लड़का होता है, के मन में प्रेम की इतनी प्रगाढ़ तीव्रता है कि घर में पत्नी से बच कर प्रेमिका से प्रेम व सैक्स संबंध स्थापित करना चाहता है। "अवसन्न" कहानी में नारी के अंगों का चित्रण और उसके साथ की जाने वाली सैक्स लीलाओं का सहज स्वाभाविक वर्णन करने में लेखक ने कोई संकोच नहीं किया यथा—" यंत्र चालित सा वह उसे गांव तकियों के बीच ले गया... वह खिंची सी उसके साथ जमीन पर बिखर गई..... वह उसके शरीर को अपने हाथों से परिक्रमा कर रहा था...हाथ, स्तन, कटि, सुडौल सा नितम्बों का अवयव, एक जंगल, एक जलता हुआ अग्नि कुंड आदि आदि।

विवाह के बाद प्रेमी का प्रेमिका के साथ संबंध जारी रहना उस स्थिति में संभव और स्वाभाविक हो सकता है जब दोनों के मन में प्रगाढ़ प्रेम हो और उसे पारिवारिक जीवन के साथ एडजस्ट करते हुए निभाने की क्षमता और हिम्मत हो। "सेंटीमेंटल गर्ल" का नायक विवाह को मात्र औपचारिक बंधन मानता है और उसे विवाहपूर्व प्रेम निभाने में बाधक नहीं मानता है। प्यार कभी सीमाओं में बांधा नहीं जा सकता लेखक स्वंय स्वीकारते हैं...मैं तुम्हें प्यार करता हूं-क्या यह छोटी सी शादी की बाढ़ एक बादल के टुकड़े के समान रवि-रश्मि को रोक सकती है-प्यार को तोड़ सकती है?" "कुंकमी सांझ का तैरता सूरज" नामक कहानी में लेखक नायक के माध्यम से प्रेम संबंध निभाने को कायल प्रतीत होता है। नायक पुरुष को जब भी नारी में किसी प्रकार का आकर्षण लगता है वह उसे पूरा करना चाहता है और पत्नी के साथ होते हुए भी प्रेम के आवेग को रोक नहीं पाता और मीनू से प्रेम लीला चलाता है और उसे सन्तुष्ट भी कर देता था। प्रेम का आवेग इतना तीव्र होता है और इसे लेखक रोकना, बदलना, खत्म नहीं कर देना चाहता परन्तु वर्तमान परिस्थितियों में एडजस्ट करके पूर्ति और संतुष्टि, प्राप्त करने का हिमायती लगता है। पुरुष नारी को वेश्या बनाता है, उसे त्याग देता है, फिर भी नारी पुरुष के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर देती है कहानी संग्रह की "नर्तकी" से यह संदेश प्राप्त होता है। इस कहानी से यह मालूम होता है कि पुरुष सदैव नारी को तुच्छ समझकर रौंद कर ही सुख चैन और मनोरंजन का अनुभव करता है। पति और पत्नी में प्रेम वास्तव में नहीं होता। शादी तो महज एक रस्म है। यह विचार "डलिया के फूल" नामक कहानी में स्पष्ट होता है जब नायक नायिका के प्रश्न का उत्तर देता है— "हम मन के संस्कारों से नहीं, ऊपर के रंगरूप और ग्रह नक्षत्रों के अंकों से शादी करते हैं।"

अपसामान्य **प्रेम संबंध:**

समाज में अपसामान्य प्रेम संबंध भी देखने को मिलते हैं। प्रेम वह भावना है जो सामान्य होते हुए भी कई बार परिस्थितियों के अनुसार अपसामान्य बन जाती है। अपसामान्य प्रेम सामान्य माहौल में प्रेमी/प्रेमिका न प्राप्त होने पर ही जन्म लेता है या फिर किसी दिगामी फितूर या विकार के कारण प्रतिक्रिया स्वरूप हो जाता है। कहानी संग्रह की अंतिम कहानी "आदिम गंध से भरा शरीर" में परिस्थितियों के कारण बिगड़ी हुई नारी का वर्णन दिया गया है। 9 वर्ष की उम्र में परिवार के बड़े-बूढ़े द्वारा उनके साथ सैक्स खिलवाड़ ने उसे मानसिक रूप से सैक्स के प्रति अपसामान्य बना दिया था। ऐसी महिलाओं को सैक्स की लत पड़ जाती है और वह पुरुषों को भूखे जानवर की तरह घूरती हैं और मानसिक रूप से हर किसी के साथ हर वक्त सैक्स क्रिया में लीन रहती हैं। जब पुरुष नहीं मिलता है तो वह अपनी स्त्री सहेली के साथ भी सैक्स क्रिया कर लेती हैं। लेखक ने स्वयं इस कहानी के अंत में यह स्वीकार किया है।

"वह शायद कपड़े पहन रही थी और मैं पर्दों की सेंध में से यह देखकर अवाक् रह गया था कि उसकी सहेली जाने कहां से प्रकट होकर उसके अर्धनग्न शरीर से खेल रही थी****दूर से मैंने देखा था कि बत्ती जल रही है और शायद दो मादा जानवर वहां आपस में क्रूर आदिम हिंस पुरुष की तरह एक दूसरे को पंजे गड़ा रही होंगी।" युवा वर्ग की इन कन्याओं को सैक्स संबंधों की पूरी जानकारी होती है। उनमें सैक्स इच्छा का उठना, उसकी तीव्रता होना स्वाभाविक है। भारतीय समाज में युवावर्ग की कन्याओं को सैक्स पूर्ति की छूट न होने के कारण उनमें अनेक प्रकार की विकृतियां भी उत्पन्न हो जाती हैं। कहानी संग्रह की "बुढ़ापे की गंध" प्रेम व सैक्स के इस दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करती है। कई बार स्त्री भावुक होती है और वह जल्दी ही पुरुषों से प्रभावित हो जाती है। इस तरह की प्रकृति से पुरुष वर्ग बहुत लाभ उठाता है उससे दोस्ती बढ़ाता है और उसका इस्तेमाल अपने दोस्तों को खुश करने के लिए भी करता है। ऐसे में लड़कियां बिगड़ जाती हैं और हर बार नये नये पुरूष के साथ रंग रेलियां मनाने और सैक्स की इच्छा रखती हैं। इस कहानी संग्रह की "फ्लर्ड" नामक कहानी से यह बात दृष्टव्य है।

कहानी "दो जवान पेड़" में भी जवान और किशोर लड़कियों में प्रेम करने और प्रेम पाने की उमंग की उत्सुकता का चित्रण किया गया है। बाद में दोनों की बहनें नायक से पत्रिका मंगाती है। किशोरावस्था और युवा अवस्था में नारी में पुरुष पर प्रेमवश आसक्त होने की इच्छा होती है चाहे वह विवाहित पुरूष ही क्यों न हो। किशोरियों की इस स्वाभाविक भावना का चित्रण इस कहानी में बहुत ही वास्तविक ढंग से किया गया है। इसी प्रकार उनकी कहानी "अंधेरे के आदमी" में भी नाजायज संबंधों पर कटाक्ष है।

प्रेम और सैक्स की तीव्रता नारी पुरूष के बीच नाना अवैध प्रेम संबंधों की स्थापना कर देती है। इसके परिणाम भी अक्सर घातक होते हैं जब अवैध औलाद भी पैदा हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में प्रेमी और प्रेमिका के लिये औलाद को पालने पोसने तक के लाले पड़ जाते हैं। लेखक अपनी इस कहानी से पाठकों के मन में प्रश्न छोड़ देता है कि प्रेमियों को क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिए।

भाषा शैली

भाषा सुबोध सुगम्य हो तो प्रत्येक वर्ग का पाठक पढ़ सकता है। कठिन अप्रचलित संस्कृत से निकले हुए असामान्य शब्दों, वाक्यांशों के प्रयोग कहानियों को रूचिकर नहीं बनाते। जगदीश चुतर्वेदी जी की कहानियों की भाषा शैली, शब्दों के चयन, भाव और विचार की अभिव्यक्ति सरल बोधगम्य भाषा में कहानियों के विषय और उद्देश्यों को पाठकों तक पहुंचाती है। उनकी अपने कुछ अभिव्यक्तियां कहानियों में देखने को मिलती है जैसे गुलमोहर के जवान पेड़ की तरह नारी का शरीर, नारी की मांसल देह की गंध, सेंटीमेंटल गर्ल में नायिका का कइयों अंकशायिनी बनना, "निहंग" में नायिका का भयभीत होने पर नायक को उस घायल खरगोश को काट कर खाना अच्छा नहीं लगा, लड़कियों के हाई स्कूली मजाक, नायिकाओं की कान तक खिंची आंखे पाठकों को आकर्षित करने वाली प्रभावपूर्ण अभिव्यक्तियां हैं। कहानी संग्रह में अनेक

की प्रेम क्रियाएं, प्रेम प्रसंगों के नमूने और सेक्स सभी का वर्णन लेखक की लेखनी से वास्तविक बन गया है। कहानी की भाषा और विवरण शैली और अभिव्यक्तियों ने कहानियों को सच तो बनाया है साथ ही पाठकों में कहानियां पढ़ने के लिए उत्साह और प्रेरणा का संचार भी होता है और पाठक एक दो नहीं परन्तु सारी कहानियां पढ़ने के लिये इच्छुक हो जाता है। इन कहानी से पाठकों को अपने ऊब भरे जीवन में नये सिरे से जीने के लिये जोश भी जागता है। नारी के सौन्दर्य के लिए जो उपमाएं दी गई हैं वह भी कहानी की जान बन गई है। कहानीकार का विषय चयन अनूठा कहा जा सकता है। सेक्स और प्रेम संबंधी विषय की इन कहानियों में अभूतपूर्व अभिव्यक्ति हुई है इसलिये कहानियां सुरूचिपूर्ण बन गई हैं। लेखक में सेक्स से संबद्ध विशेषकर नारी शरीर के सौन्दर्य चित्रण की अभूतपूर्व योग्यता और क्षमता है। हो सकता है यह उनकी रूचि का विषय रहा हो इसलिये इन प्रेम संबंधों की कुछ कहानियों में प्रेम कम, सेक्स अधिक उजागर हुआ है। " अनाहूत क्षण में" हाथों का बिना कुछ सोचे किशुंक के अवयवों की पक्रिमा करना, सेंटीमेंटल गर्ल में नायिका के रेशमी ब्लाउज में से उगते हुए नुकीले उरोज, पीठ पर चिकनी सी देह नंगी, आंखें शर्बती अंगूरी रस में डूबी हुई, नायक का नायिका को कसकर उसके पतले रेशमी अधरों पर अधर रखना, मीठे-मीठे गुलाबी ओंठ का अनुभव, क्रियाएं पाठकों को उत्तेजित करती हुई चलती है। विषय का वहन इस रूप में अत्यधिक ठीक रहा है।

प्रेम संबंध और सेक्स कलाप को निभाने के अनेक तरीके होते हैं जिन्हें लेखक ने हर कहानी में बखूबी चित्रण किया है जैसे मैंने उसके अधरों को अपने अधरों से लगा लिया, उसकी सांस की आवाज मेरे हृदय में कंपकपी पैदा कर गई, मैंने उसकी मासूम गहराई मलाई जैसी चिकनी गात को अपने वक्ष में समाये भींच लिया, मैंने नौजवान मस्ती से भरी जवानी के अलिंगन विह्वल उरोजों पर अपनी अंगुलियां रख दी आदि आदि।

उनके द्वारा अभिव्यक्त सैक्स संबंधों में नवीनता मिलती है। साथ ही पुरूष वर्ग में नारी के शरीर, उसकी सुडौलता, गठीलेपन को देखकर और उसके यौवन से जो भूचाल आते हैं उन सबका चित्रण स्वाभाविक हुआ है। पुरूष वर्ग में नारी के हर अंग को देखकर अलग-अलग आकर्षण होता है जैसे "रम्पी" में नायक पहाड़ी बाला के सौन्दर्य से आकर्षित होकर अपनी जान देता है। कहानी "नर्तकी" में वेश्याओं के प्रति ग्राहकों के विचार जैसे क्या जवानी है उसकी, जैसे गदराया हुआ अनार।"

इस कहानी संग्रह के लेखक ने प्रकृति वर्णन पात्रों से जोड़कर किया है जैसे "रम्पी" में "नित्य एकाग्रचिंतन में वयस्त हो वह पहाड़ों पर चढ़ जाता और उगते सूर्य का प्रतिबिम्ब देखा करता। दिन चढ़ जाता और वह घंटों बैठा रहता उदास सा खोया-खोया। दूर तक फैले आम वृक्षों की मंजरियों में बैठकर कोयल उसे नित्य राग सुनाती और तट पर बैठे पपीते उसे "पी हां" की रट लगाते मिलते"।

सारांशः—

इस कहानी संग्रह को पढ़ने से पाठकों में लेखक की एक इमेज बन जाती है। लेखक ने इन सभी कहानियों के माध्यम से भारतीय समाज व्यवस्था में प्रेम के विधि यथार्थ रूपों को परिभाषित किया है। प्रेम संबंधों को अनेक कोणों और दिशाओं से छूने का प्रयास किया गया है। कहानी संग्रह के प्रसंग में यूटांग जो नोबल पुरस्कार विजेता हैं और चीनी साहित्यकार हैं का कथन है कि "मनुष्य की सेक्स वृति स्वाभाविक है और इसे दोष नहीं दिया जा सकता है।" लेखक ने भी जो स्त्री पुरूष के बीच स्वाभाविक है वही सब कुछ अपनी कहानियों में बड़ी ही निडरता से निसंकोच, बिना कुछ छिपाये-दबाये लिखा है। वे साहसी लेखक हैं और उन्होंने स्वयं ही अपनी भूमिका में स्वीकार किया है "यह कार्य जोखिम भरा है। पात्रों द्वारा धमकियां मिलने की संभावना है तथा समीक्षकों से मुडभेड़ का डर है।" कहानी संग्रह में मध्यम वर्ग के चरित्र हैं जो परम्परा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाने में अपने जीवन को खपाते रहते हैं। दूसरे धनी वर्ग में सैक्स की वासनाओं में लिप्त रहने वाले चरित्र भी कहानियों में मिलते हैं कई कहानियों में उच्च वर्ग के चरित्रों के मिथ्या अहं, सैक्स वृतियों का अनावरण मिलता है। उनके बारे में उपेन्द्रनाथ अश्क जो बहुत ही मुश्किल में किसी कहानी को पंसद करते हैं, ने उनकी कहानियों को सराहा है उनके विचार इस प्रकार हैं—"जगदीश चतुर्वेदी के हयां बारीकबीनी भी है और प्रवहमानता भी। कहानियों को पढ़ते हुए कृष्णचन्द्र की रोमानियत, निर्मला वर्मा की व्यक्तिपरकता तथा लोलिता के लेखक नोबाकोव की परवर्शन-प्रियता की याद हो आती है।" जैसा कि उनकी कहानियों से मालूम होता है वे अत्यधिक आधुनिक भी हैं। आधुनिक परिवेश में उन्होंने पति और पत्नी के प्रेम संबंधों को मनोवैज्ञानिक धरातल दिया है।

पुस्तकः प्रेम संबंधों की कहानियां; कथाकार; जगदीश चतुर्वेदी; प्रकाशकः किताब घर, 24, अंसारी रोड़, नई दिल्ली-10002; मूल्यः 75 रुपए

रूमानी कहानी का गुलदस्ताः डेलिया का फूल

—रंजन ज़ैदी

हजारों वर्ष पूर्व रात के सन्नाटे के बीच अंधेरे के डर को मिटाने और बाल-सुलभ मन में जीवन की सुखद कल्पनाओं को जगाने की कोशिश के नतीजे में शायद पहली कहानी नें जन्म लिया होगा। पति का जंगल में शिकार पर जाना, पत्नी को अपने बच्चे के साथ तन्हा गुफ़ा में पति की राह तकते-तकते भयाक्रांत हो अपने बच्चे को कुछ सुनाने लग जाना, ताकि मन का डर कुछ कम हो ......शायद यहीं से कहानी ने जन्म लिया था।

फिर कहानी में परियां आ गई। परियों को राक्षसों ने घेरा। दानव, जादूगर बादशाह, शहजादे, और कुटनियां कहानी के पात्र बने। ये सारे पात्र रफ़्ता-रफ़्ता समय के साथ तत्कालीन समाज के बीच से उठ-उठकर अपने युग की कहानी में दाखिल होते गये। कहानी को जन्म देने वाली पहली औरत की जगह कालांतर में नानी-दादी ने ले ली। अब कहानी को मां की छाती का दूध, पोपली जुबान की मिठास और न भुलाया जाने वाला लहजा मिल गया था। यहां तक आते-आते कहानी ने कहानीपन की कला को अपने आप पैदा कर लिया था। इसके लिए किसी 'नामवर सिंह या' 'सुधीश पचौरी' या किसी 'वाद' की गवाही की ज़रुरत नहीं थी। दिलों को

छू लेने वाली 'कहानी' अपने आप, अपना आकार लिए दुनिया की हर भाषा में जन्म ले चुकी थी, इंशाल्ला खां, सज्जाद अहमद यल्दरम, राजा शिव प्रसाद, भारतेंदु हरिश्चंद्र, किशोरी लाल गोस्वामी, चेखाव, मोपासां, मा म शोलोखोव, प्रेमचंद तथा मंटो तथा बहुत बाद में पैदा हुए।

जुटाई गई दास्तानवी दुनिया का रास्ता तय करती हुई आज की कहानी के तत्वों की लखौरी ईंटें दास्तानों की मिट्टी से ही बनी हुई हैं, लेकिन यह भी सच है कि इस बुनियाद पर जो जंगल खड़ा हुआ है, उसके वृक्ष दीवारों के रूप में कांकरीट और फ़ौलाद का रूप ले चुके हैं। दास्तानवी पात्रों ने नई भूमिकाएं और नए ब्रेक पा लिए हैं। दानवी शक्तियां आज भी मुंह फाड़े अपने आणविक दांतों में समूचे विश्व की शांति को दबोचने के लिए मौजूद हैं।

कांकरीट के घने जंगल उगने से पूर्व तक कहानी नानी-दादी की गोद में सुरक्षित थी। सातवें दशक में यही कहानी "आप बीती" और जग-बीती के रास्ते चल कर नई दस्ल के मनोरंजन का साधन बनी। सातवें दशक के उतरार्द्ध में कहानी सुनने के साथ दिखाई भी जाने लगी। पहले कहानी सुनने वालों के दिमाग़ की वर्जिश कराती थी, जिससे सुनने वाला कल्पनाशील बनता था। किंतु बाद के दशक में काफ़ी हद तक यह मानसिक वर्ज़िश समाप्त हो गई।

सन् 1942 में अमरीकी कथाकार "एडगर एला पो" ने कहानी को एक "साहित्यिक-विधा बताया। हिन्दी में "नई कहानी" का जन्म भी 1955 के उत्तरार्द्ध में हो चुका था। किंतु आन्दोलन के रूप में "नई कहानी" चर्चा में आई, जिसमें सम्बन्धों के बनने और टूटने की समस्याएं, स्त्री-पुरूष के परस्पर सम्बंधों की गहराइयां, तीसरे व्यक्ति का प्रवेश और स्वतंत्रयोत्तर नारी में जगता आत्म-विश्वास और एक खास क़िस्म की आज़ादी की भावना जैसे विषयों को महत्व दिया गया। इस दौर की कहानी से जहां एक ओर इकहरापन और गांव-देहात नदारद हो गये, वहीं "नई कहानी" कुछ अर्थों में उलझ भी गई। इसके प्रमाण में राजेंद्र यादव की कुछ कहानियों को लिया जा सकता है। इन सब के बावजूद भीड़ में रह कर भी तन्हाई की समस्या को कमलेश्वर, मोहन राकेश, और राजेंद्र यादव ने बेहतरीन ढंग से उठाया। मानवीय संबंधों पर प्रश्न-चिन्ह लगाती कमलेश्वर की कहानी—"तलाश" हो या निर्मल वर्मा की कहानी "तीसरा घाव" (जिसमें प्रेम और वासना के बीच के अंतर को बड़े ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है) "नई कहानी" आंदोलन के दिनों की अविस्मरणीय कहानियां है।

"नई कहानी" आंदोलन के बाद चाहे "अकहानी" हो या "सचेतन कहानी", "समांतर कहानी" हो या "सहज कहानी", सब उसी इमारत की छत पर एक-एक कर बनने वाली मंज़िलें हैं, जिसके फाटक पर...."नई कहानी" की नैम-प्लैट" लगा दी गई थी। "अकहानी आंदोलन के प्रवक्ता जगदीश चतुर्वेदी की कहानियों को भी "नई कहानी" की इमारत में लगने वाली ईंटों का दर्जा दिया जा सकता है।

जगदीश चतुर्वेदी के सद्यः प्रकाशित "डेलिया के फूल" कहानी के संग्रह में संग्रहीत कहानियों में मध्यवर्गीय निजबद्धता, नये जीवन मूल्य, मानवीय संवेदना, अंतुर्मखी मध्यवर्गीय व्यक्तिवदित आधुनिकतावादी भावबोध, रिश्तों की नई तालाश और उसकी छटपटाहट बखूबी नज़र आती है।

"भूले हुए क़स्बे की याद" संग्रह की पहली कहानी है। इसमें मानव-मस्तिष्क की उस पेचीदगी को "विषय-वस्तु" बनाया गया है, जिसके सम्बंध में वो मनुष्य आत्म-निर्णय में असमर्थ है, जिनमें वह गुज़र रहा होता है। मानव-मस्तिष्क और उसका मनोविज्ञान इतना साधारण और सुलझा हुआ नहीं है, जिसका आकलन और निष्कर्ष सरलता से किया जाये, बल्कि उसमें इतनी पेचीदगियां और उलझनें हैं कि मनुष्य अपने मस्तिष्क की तहों में जाकर से पूर्ण रूप से समझने में असमर्थ है। अक्सर साधारण सी घटना इतनी उलझी हुई स्थिति का रूप ले लेती है कि स्वयं उन उलझनों में गिरफ़्तार व्यक्ति उन गुत्थियों में उलझ जाता है।

प्रस्तुत कहानी का नायक "बब्बू" ऐसी ही गुत्थियों में उलझा एक पात्र है, जो एक तरफ़ विवाहित है किंतु उसकी स्मृति में "स्निग्धा" कनखजूरे की तरह रेंगती हुई उसे तड़पा रही है। यह तड़प वह 12 वर्षों से झेल रहा है। 12 वर्षों के अंतराल के बाद दोनों आमने-सामने हैं। स्निग्धा को अंगूठे से ज़मीन कुरेदना याद है। बचपन में भी यह रूठने पर अंगूठे से ज़मीन कुरेदने लगती थी। यह रूठने की प्रवृत्ति "प्रेम" के रागात्मक लगाव से ही जन्म लेती है। अमूर्त प्रेम की अभिव्यक्ति के अभाव ने दोनों को पीड़ा सहते रहने का संगेह प्रदान किया, "कितने दिनों बाद आये बाबू!" फिर (स्निग्धा) ने एक ठंडी सांस ली, जो मेरे कानों को छूती हुई निकल गई। (पृष्ठः 12), या कहानी के अंत में "काफ़ी रात हो गई स्निग्धा! मुझे डाक बंगले जाना है।" उसने एक ठंडी सांस ली, जाने से रोका नहीं, पर ऐसा लगा जैसे वह कह रही हो कि इस बारिश में तो रूक जाते। तुम तो मेरे बचपन के साथी हो (पृष्ठः 17)। लेखक ने ऐसी स्थितियां जन्म देकर न केवल प्रेम के पुराने अर्थों व विषयों को ही बदला है, बल्कि उसे नये आयाम भी प्रदान किये हैं।

"स्निग्धा" विवाहित है, लेकिन उसने अपने पति से छुटकारा पा लिया है क्योंकि "वह शराबी था, लफंगा था, और सच तो यह है कि वह सब कुछ हो सकता था, किसी औरत का पति नहीं हो सकता था (पृष्ठः 16)। स्निग्धा के अचेतन में बब्बू की तस्वीर है, इसलिए जब वह तैल-चित्र बनाती है तो वही अचेतन बब्बू 12 वर्ष के अंतराल के बाद कल्पना में एक मैच्योर व्यक्ति का रूप ले लेता है, "चेहरे पर घनी-घनी मूंछे थीं और आंखें चश्माविहीन (पृष्ठः 16)। यह आकृति बब्बू से मिलती-जुलती भी थी। स्निग्धा इसकी पुष्टि भी करती है, "मैं सोचती थी किंतु तुम अब ख़ूब बड़े हो गये होंगे। बड़ी-बड़ी मूंछे होंगी, और उसी मूड में एक दिन मैंने वह चित्र बना दिया (पृष्ठः 16)। बब्बू की मुंछे नहीं थीं लेकिन स्निग्धा ने अपने अतीत के अनुभवों से एक खास किस्म की सोच गढ़ डाली थी, जो उसके समूचे वजूद पर हावी हो चुकी थी, "सच तो यह है बब्बू मुझे लगता है कि पुरूषत्व का सम्बंध मूंछों से ही है और सफ़ाचट मूंछों वालों से मेरे आक्रोश का कारण मेरे पति का मुंछमुंडा होना भी हो सकता है (पृष्ठः 16)। स्निग्धा का यह वह डाइमेंशन है जो उसे आधुनिक नारी के रूप में परिचित कराता है! यह नारी अग्नि के सात फेरों और तलाक़ की बोसीदा हवेली को "ज्यूडीशल सैपरेशन" के धमाके से छिन्न-भिन्न कर देती है और बड़े आत्मविश्वास से बब्बू को बताती है, "अब मैं स्वतंत्र हूं। अपने मन से जहां चाहूं वहां जा सकती हूं, घूम सकती हूं....मुझ पर कोई बंधन नहीं है......(पृष्ठः 16)। इसके बावजूद आधुनिकतावादी भावबोध के रहते हुए भी वह परम्परागत नारी के केंचुल से मुक्त नहीं है। बब्बू उसके सामने है और वह उसे चाहती है, किंतु सदियों की सामाजिक परम्पराएं उसकी

जीभ पर ताला लगाये हुए हैं, लेकिन यह भी सच है कि यही निजबद्धता उसे एक दिशा भी प्रदान करती है।

नारी-पुरुष संबंधों की मनोवैज्ञानिक पड़ताल करती कहानियों में 'आदिम गंध' हो या 'कड़वाहट', 'वीनस' हो या 'शिशुहंता', 'अधखिले गुलाब' हो या 'उदास गुलमोहर....' इन सभी में हम ज़िंदगी की पर्तों को बारी-बारी से खुलते हुए देखते हैं। इन कहानियों के चरित्रों में योजनाबद्ध अंतराल नहीं है, कि पाठक कल्पना-शक्ति से उन अंतराला की पूर्ति करे, या मानसिक वर्ज़िश से अंधेरी गहराइयों में उतर कर "खुल जा सिम-सिम" की गुहार से किसी जादुई लोक पर नक़ाब उठाये। वे तो सीधी ज़िदगी की रूमानी कविताएं हैं, जो अस्मिताविहीन मशीन की गड़गड़ाहट के शोर में जन्म लेती है। इन कहानियों के पात्र अपने वैशिष्ट्य, परिवेश और वातावरण की स्वाभाविक उपज हैं, मैं उनके व्यक्तित्व की उस सतह को छू लेना चाहता हूं, जहाँ तक बिल्कुल अकेली है, उदास है (डेलिया का फूल, पृष्ठः 28) । या "शक करना तो ठीक नहीं होता, और फिर सेंटीमेंटल लोगों में कुछ तो कमियां होती ही हैं। उनकी पत्नियों को एडजस्ट कर लेना चाहिए (कड़वाहट, पृष्ठः 36) । या जैसे, "यहां हर पड़ोसी एक दूसरे के लिए अजनबी है। वर्षों साथ रहने पर भी आपस में बातें नहीं होतीं। सब अपनी-अपनी दुनिया में व्यस्त रहते हैं........ (बुढ़ापे की गंध, पृष्ठः 7)

इसी प्रकार संग्रह की अन्य कहानियों के पात्र भी सरलीकृत ढंग से विद्रोही तेवर दिखाते हुए रूमानियत की मंज़िल तक पहुंच जाते हैं, जहां न कोई फ़तवा है, न चालाक राजनीति की कोई रणनीति। न मध्यवर्गीय बुर्जआ संस्कारों के खिलाफ कोई चीख है, न सामाजिक चेतना के प्रति मानसिक संकीर्णता या हठवादिता। वे तो अभिव्यक्ति का माध्यम बनते ही छवि, लफ़्फ़ाज़ी और फ़ार्मूलों की पकड़ से मुक्त हो जाती हैं।

जैसा कि मैंने कहा कि सातवें दशक की कहानियों का दौर आपाधापी और दिशाहीनता का दौर था, लेकिन इस दौर की कहानियों से कहानीपन लुप्त नहीं हुआ था। जबकि बाद की कहानी "कहानीपन" के रेशमी ग़िलाफ़" से आजाद हो गई। .....और उसकी जगह ऐसे गावतकियों ने ले ली, जिनपर सिर रखते ही नींद आ जाती थी। नींद लाने वाली गोलियों की जगह हिन्दी की आधुनिक कहानी ने ले ली। इसके बावजूद कि अज्ञेय, जैनेंद्र, और इलाचंद जोशी न भले ही हमें फ़्लैश-बैक की कहानियां दीं और उसे एकदम प्राइवेट चीज़ बना दिया, फिर भी नागार्जुन, रेणु, रामदरश मिश्र, शैलेश मटियानी, शेखर जोशी, मार्कण्डेय और महीप सिंह जैसे कथाकारों के साहित्य ने आत्मीय संबंधों की भीनी सुगंध से पाठकों को ओतप्रोत भी किया।

श्रवण कुमार हो या राजेंद्र अवस्थी, कृष्णा सोबती हों या राजी सेठ और उषा प्रियंवद, हिमांशु जोशी हों या जगदीश चुतर्वेदी.......या इनके बाद की पीढ़ी के कथाकार—अधिकतर की कहानियां आम आदमी का झंडा उठाय बिना राजनीतिक नारों के उनके दर्दः की आवाज़ बुलंद करती हैं। लेकिन जगदीश चतुर्वेदी की कहानियां पढ़ कर यह सवाल ज़रुर उभरता है कि इस आम आदमी की हिमायत में आवाज बुलंद करते वक़्त हम उसके उन पहलुओं को नज़र-अंदाज़ कर जाते हैं, जो उसे आम आदमी बनाये रखने की स्थिति तक पहुंचाने के जिम्मेदार होते हैं। यदि गंभीरता से इस आम आदमी का अध्ययन किया जाये तो मालूम हो जायेगा कि वह भी कहीं शोषक-वर्ग का अनुसरण करते हुए अपने से निम्न का शोषण कर रहा है।

कहानी संग्रहः डेलिया का फूल, कथाकारः जगदीश चतुर्वेदी, प्रकाशकः नीलकण्ठ प्रकाशन, 1 / 1079-ई, महरौली, नई दिल्ली-110030 मूल्यः 7 रू॰ ससंस्करणः 1995

कायर समय में वैचारिक साहस

—बलदेव बंशी

आज जबकि कविता सर्वाधिक बनावटी, प्रायोजित किस्म की लिखी जा रही है, और कवि सर्वाधिक कायर, स्वार्थी और गणितीय समझधारी हो गये हैं, ऐसे में कुबेर का कविता-संग्रह—"काल-काल आपात" प्रकाशित हुआ है, जो ऊपर की दोनों स्थितियों के विरुद्ध एक साहसी पहल की तरह है। हालांकि यह कोई अजीब बात नहीं, किंतु आज के 'कायर समय' में उल्लेखनीय अवश्य है। इन कविताओं का मुख्य और मुख्य स्वर जन की ओर से सर्वदिशोन्मुखी लताड़ का है। सब से अधिक और पहला प्रहार लखकों-आलोचकों, साहित्यिक गुटबाजी के नेताओं और पुरस्कार-संस्कृति की बंदर बांट प्रकृति पर है। संस्कृति कर्मी सब से पहले समाज पर होने वाले आक्रमणों के प्रतिकार का दायित्व निर्माता है। सांस्कृतिक मोर्चे का अघोषित पहरूवा होता है किन्तु वही अपना मोर्चा छोड़ कर, आर्थिक-टुच्चे स्वार्थों के प्रलोभनों में फंस गया है। भगोड़ा बन चुका है। यह घोर संकट की पहली खतरनाक दशा है। कुबेर ने कई पूरी कविताओं में और अनेक काव्यांशों में उक्त संदर्भों को उठाया हैः

"भाषा पर
अभासा का लेप
दुखती रगों पर सत्ता का संकीर्तन
सृजन के श्मशान में रजधनी मंडप
उस में
अकर्मक
सकर्मक पपेट शो
सिर के जल विदूपकीय नर्तन
कवि दृष्टि
बूटों की चमक को
चूमती है
मिल रहा है पुरस्कार
कवि को...." —(पृ॰ 29)

राजदरबार से सजे साहित्यिक मंच, भीड़भाड़ स्टीरियो-स्पीकर, इधर-उधर पत्रकार, फोटोग्राफर—इस प्रकार के महौल में बढ़ती साहित्यिक पुरस्कारों की इस संस्कृति ने साहित्यकारों के ईमान, नैतिक मान को पुरस्कार वितर्कों के बूटों की चमक तक उतार दिया है। 'कवि की मुंडीश्री / फिरकी-सी घूमती है।' सरकारी धन पर आयोजित एक आयोजन का दृश्य उभारा गया है "कविता-लिवेन्डर अहा-अहा!" कविता मेंः कुछ अंशः—

"पारदर्शी नीली झील के किनारे
बैठे सब
कविता के गण, कवि गण
लोचक, आलोचक,

मोचक, मीक्षक
समीक्षक
प्रबुद्ध, शुद्ध श्रोतागण
बहसे सब कविता पर
कमी हुए पद
पदरज कभी
*   *   *

कभी कैपिटल-कैपिटल
दास-दास कभी
*   *   *

कभी राजभोग
राज रोग मगर सभी सभी
*   *   *

लंच पर झपटते
लार पर टपकते
वे सब
सजाती
काव्य बहादुर
कविता को गारत कर चुके थे
*   *   *

बंदर-बंदर, बांट-बांट
*   *   *

दक्षिण-दक्षिण, वाम-वाम"   —(पृ० 134-137

उक्त अंशों में जो रेखांकन बने हैं उस से वह पूरा परिदृश्य और कवि के मन की घृणा उजागर हो आयी है। जिस महामारी से साहित्यिक क्षेत्र पूरी तरह ग्रसित हो चुका है। इसी संदर्भ में कुछ अन्य कविताएं भी उल्लेखनीय हैं—कविता पत्तन, केरल-प्रवासः सात, भंग संगीत-समारोह, संक्रमण चित्र आदि।

वर्तमान जातीय संकट का दूसरा भयावह पहलू है अत्यन्त संवेदनशील किंतु उतना ही घातक और व्यापक प्रभाव डालने वाला दूरदर्शन संचार माध्यम का मानवीय संवेदनाएं सोखने वाली कार्य-प्रणाली, इसे संचलित करने वाली जन-विरोधी संवेदना-विरोधी कैमरे के पीछे की आंख; और उस आंख को निर्देशित करने वाली व्यवस्थापकीय नीति। यह माध्यम संवेदना की वाहक मानवी भाषा तक का इस प्रकार तिरस्कार और कभी ऐसा प्रयोग करती है कि चींटियां तक सन्निपात की शिकार हो जाती हैं। "दृश्य-दलदल" कविता की पंक्तियां:

"यह कैसा
विचित्र स्वप्न—दृश्य-श्रव्य है?
या कल्पना महज़
या किसी सत्य का री प्ले?
*   *   *

कुछ भी लिखा हो
पर हो
मेरी भाषा में
मैं अपनी भाषा में
मुक्ति चाहता हूं।"   —(पृ० 12-13)

श्रव्य-दृश्य के माध्यमों के द्वारा मानवीय-आत्मीय परस्वतंत्रता के बनाये जा रहे दलदल में धकेलने का सरल साधन है जातीय भाषा को छीन लेना। दृश्य कैमरे के प्रभावों के माध्यम से ऐसा स्वप्न रचा जा रहा है जो महज़ कल्पना या किसी एकपक्षीय सत्य को सामने लाता है, जन और उस की पीड़ा के यथार्थ को नहीं, इसलिए उस की भाषा तक को उस से छीन लिया गया है ताकि कुछ भी अनैतिक, टूटा-फूटा, आधा-अधूरा परोसने के अवसर बने रहें। भाषा पर एक अन्य उद्धरणः

"भाषा के संकरे
भोजन तलघर से ले कर
भाषा की वतुल ग्रीवा में
गांठ-गांठ
गठरी-गठरी में
भाषा की ठठरी बजती है"   —(पृ० 142)

भाषा तथा उसकी प्राणवत्ता ही किसी जाति की जीवंतता और सप्राणता का आधार एवं अक्षय स्रोत होती है और भाषा की ठठरी बजने की स्थितियों को रचा जाये, उसे निष्प्राण बना दिया जाये, इस से अधिक भयंकर और हत्यारा कृत्य और क्या हो सकता है। और फिर जो जाति अपनी भाषा को छोड़ने को राजी हो जाये या प्रतिकार न करे तब उसे जीवित-मृत ही मानना चाहिए। तभी इसी कविता में ठीक ही कहा गया हैः— "मुर्दे घूम रहे बस्ती में" (पृ० 143) किन्तु कवि इन मुर्दा लोगों की नासमझी-नालायकी को देख कर अस्त-पस्त नहीं, इन में प्राण-प्रतिष्ठा करने इन्हें झकझोर कर जगाने, इन की आत्मा को कोंचने के संकल्प और अछोर आशा-प्रेरणा से सज्जित है।

भाषा के विविध प्रयोग किये हैं कुबेर ने विसंगत को उभारने, विडम्बना को दिखाने, पीटने के, कॉमिक प्रयोगों के माध्यम से त्रासद को गहराने के, शब्दों को तोड़कर सामाजिक मानवीय वर्तमान टूटन दिखाने के, बहुवचन शब्दों के माध्यम से वस्तु-स्थिति को बहुलता में जोड़ कर थोथापन उभारने के अर्थात भाषा, शैली, शब्दों-ध्वनियों के प्रयोगों से मानवीय पक्षधरता को साधते शेष सब कुछ को बे-तरह उड़ाया, फटका, तोड़ा और अस्वीकृत (रिजैक्ट) किया है। बहुत गहरे से, देखें तो, कई शैलियों को लक्षित किया जा सकता है। एक साथ—नागार्जुन की शैली में उखाड़ा-तोड़ा है तो केदार अग्रवाल की शैली में जोड़ा-उसारा संवारा गया है और फिर इन दोनों की सम्मिलित निराली कुबेरियन शैली में 'एक बार फिर और नाच तू श्यामा' की परम्परा में—'चिदग्निकुंड संभूता' कविता में:

जारी है नृत्य—
दर्प पर पदाघात जारी है
.... देखा मैंने
अभी-अभी देखा
नृत्यशाला के प्रमुख द्वार पर
अभी-अभी देखा मैंने
महाप्राणा निराला को"   —(पृ० 41)

भास्कर जातीय चेतना की विशिष्ट पहचान को और शक्ति को पुनः अर्जित करने की अपेक्षाएं रेखांकित करने का स्पष्ट मंतव्य यहां उल्लिखित है ताकि जन के पक्ष में शक्तियों को संगठित किया जा सके। उपभोक्तावादी, अप-संस्कृति के खुले आक्रमणों के प्रति सावधान करने,

प्रतिकार करने के स्वर भी मुखर हैं। 'दूरदर्शन पर भेड़िये' हों या बोल अ बोले बोल—कवि का मंतव्य जनपक्षीय मोर्चे को सबल बनाना है और भापाई, चेतनागत कुहासे से भाषा को और जन को मुक्त करना ही नहीं, स्वयं तथा संस्कृतिकर्मियों को मुक्त होने की हमजोली समझ से जोड़ना है। प्रायोजित, नियोजित, निर्देशित सब कुछ को मानवीय पक्ष में साहसपूर्वक नकारने के सार्थक स्वर हैं। वर्तमान कायर समय में, एक वैचारिक साहस उपेक्षित विश्व जन के विरुद्ध अघोषित शाश्वत आपातकाल के विरुद्ध एक सक्षम स्वर है यह संग्रह।

काल काल आपातः कवि—कुबेर दत्त; प्रकाशकः किताबघर, 24 अंसारी रोड़, दरियागंज, नयी दिल्ली-110 002, पृ॰ 144, मूल्य सजिल्द रु॰ 60

महासागर संसाधन

—सरोजिनी आर्य

महासागरीय संसाधन! जी हां यह किसी संसाधन का महासागरीय विवेचन नहीं हैं किंतु एक पुस्तक का शीर्षक है। जिसमें महासागरों अर्थात् बड़े-बड़े समुद्रों से प्राप्त होने वाले संसाधन जिन्हें दूसरे शब्दों में समुद्र से प्राप्त होने वाले पेड़, पौधे, जीव, प्राणी शैल शेवाल कह सकते हैं, का विवेचन है। यह पुस्तक वैज्ञानिक विभाग, महासागर विकास विभाग की है। इस पुस्तक में विभिन्न लेखकों के भिन्न-भिन्न लेखों के माध्यम से महासागरों अर्थात् बड़े-बड़े समुंद्रों से संबंधित अनेक प्रकार की वैज्ञानिक जानकारी और विवरण मिलता है। यह क्षेत्र विज्ञान के लिये अभी हाल ही में ज्ञात किया गया क्षेत्र है और भारत जैसे विकासशील देश के लिये तो यह और भी नया विषय हैं। इस क्षेत्र में समुद्रों के तल की खुदाई, तरंग ऊर्जा, यंत्रीकरण बहुधात्विक पिंडों से संबंधित विषय अंटार्कटिक अनुसंधान जैसे विषय शामिल है। नया वैज्ञानिक क्षेत्र होने के कारण इस विभाग में अनेक वैज्ञानिक कार्यरत हैं और अनुसंधान कार्यों में लगे हुये हैं। इन वैज्ञानिकों ने जो लेख अंग्रेजी में तैयार किये हैं, विभिन्न अनुवादकों द्वारा उनका अनुवाद करवाया गया है और उन्हें इस पुस्तक में संकलित किया गया हैं। ऐसे नये वैज्ञानिक विषय पर हिन्दी में पुस्तक उपलब्ध करना अपने आप में महासागर विकास विभाग के लिये एक बहुत बड़ी सफलता है तो साथ ही यह राजभापा विभाग और देश के लिये भी गौरव की बात है।

जहां तक पुस्तक की विषय वस्तु का प्रश्न हैं वह अपने आप में संपूर्ण है। चूंकि इस पुस्तक में शोध पत्र लेख के रूप में दिये गये हैं इसलिये हर लेख अपने आप में नया और अलग हैं। पाठक इस पुस्तक को पढ़ता हैं तो उसे बिखरी हुई अर्थात् छित्तरी सी और टुकड़ो में जानकारी प्राप्त होती है जिसे पाठक को अपने दिमाग में पहले पढ़ी हुई जानकारी के साथ मिला कर फिर दिमाग में बैठाना होता है उसका बोध करना होता है और इसमें उसे कठिनाई होती है। यदि इन लेखों को सम्बद्ध विषयों में यौक्तिक ढंग से विषय-वार वर्ग या खंडों में बांट कर प्रकाशित किया जाता तो बहुत उपयुक्त रहता, क्योंकि इससे पाठक को एक विषय से संबंधित सुसम्बद्ध जानकारी एक साथ एक खंड में मिल जाती और वह अपनी रूचि आवश्यकता और उपयोगिता के अनुसार उसी खंड को पढ़ लेता। समुन्द्री शैलल की खेती और उसका संरक्षण, खाद्य समुद्री शैवाल अर्थात् मछलियों का उत्पादन और संरक्षण, विषैली मछलियां, समुन्द्री शैवाल से आहार, उनकी सुपाच्यता (digestibility), पोपक तत्व (Nutrients) तेल-प्रदूपण, तुर्की और यूनानी चिकित्सा में सामुद्रिक जीवों का उपयोग, भारत के विभिन्न तटों तथा उड़ीसा, पश्चिमी दक्षिणी तटों से प्राप्त समुद्री संसाधन जैसे विषय पाठक में पुस्तक पढ़ने की उत्तेजना और रूचि उत्पन्न करते हैं परन्तु पुस्तक में दी गई जानकारी का पाठक, जो एक उपभोक्ता भी है, कोई लाभ नहीं उठा पाता क्योंकि बहुत ही कम स्थानों पर कुछ जानकारी ऐसे मिलती है जिससे पाठक सचमुच में लाभान्वित हो सकता है जैसे औपधियों के रूप में समुन्द्री संसाधनों के प्रमाणित उपयोग, तेल प्रदूर्पण समुद्री-जीवों को नुकसान, कुछ शैवालों के पोपक तत्व और गुणधर्म आदि। अन्यथा यह पुस्तक इस क्षेत्र में अनुसंधान कार्य में लगे वैज्ञानिकों के लिए बहुत ही उपयोगी है। इस पुस्तक को "पाठक-उपभोक्ता" के लिये अधिक उपयोगी बनाने के लिये बेहतर होता कि हर लेख के अंत में समुद्री संसाधनों से प्राप्त दवाएं, खाद्य पदार्थ और प्रसाधन व रोग उपचार सामग्री, तथा अन्य उपयोगिताओं को एक छोटे से पैराग्राफ में बता दिया जाता।

आइए, अब पुस्तक की भाषा, शैली अनुवाद का स्तर, शब्दावली उपयोग, संपादन आदि विषयों पर गौर करें। पुस्तक का हर लेख जैसा पहले उल्लेख किया गया है नया और अलग है तथा हर नये अलग अनुवादक से अनुवाद कराया गया है। इसलिये अनुवादक की हर शैली और विषय को समझने का स्तर भिन्न-भिन्न हो गया है जो पढ़ने में पाठक के लिये विचित्र और अलग सा लगता है और उसे विषय को समझने में कठिनाई का अनुभव होता है। इसी से हर लेख में प्रयुक्त शब्दावली में अंतर आ गया है जो पाठक के लिए विषय को दुरूह बना देती है। साथ ही पाठक मूल विषय वस्तु से दूर हो जाता है और विश्लेषण करने लगता है कि इस शब्द का क्या अर्थ है? अंग्रेजी में इसका पयार्य कौन सा होगा? एक ही शब्द के लिये अलग-अलग शब्दों का प्रयोग विषय और भापा दोनों को बोझिल बना देता है। शब्दावली के अलावा एक ही शब्द की वर्तनी में अन्तर, विषय की प्रस्तुति, शैली, वाक्य रचना की विभिन्नता पुस्तक की बोधगम्यता को प्रभावित करते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक विषयों से संबंधित वाक्य जैसे अंग्रेजी में लिए गये हैं उसी रूप में जैसे के तैसे हिन्दी में अनुवाद कर दिये हैं। यदि सभी अनुवादक लेख को समझकर इन्हें छोटे-छोटे वाक्यों में तोड़कर लिखते तो पुस्तक के विषय व भापा दोनों की बोधगम्यता बेहतर हो सकती थी। इसका परिणाम यह हुआ है कि अनुवाद पढ़ने से अनुवाद ही लगता है और पाठक को यह आभास हो जाता है कि पुस्तक अनूदित की गई है। उल्लेखनीय है कि अच्छा अनुवाद वही माना जाता है जो पढ़ने से ऐसा लगे कि विषय को मूल रूप से लिखा गया है। इसके अतिरिक्त अनुवादकों ने प्रत्येक वैज्ञानिक शब्द का अनुवाद करने का प्रयास किया है और यह सराहनीय भी है परन्तु यदि सभी तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दों के हिन्दी पर्याय के बाद कोष्ठक में अंग्रेजी या देवनागरी में लिप्यन्तरण करके दे दिये जाते तो विषय को समझने में सुविधा होती। साथ ही उस तकनीकी और वैज्ञानिक शब्द की हिन्दी अर्थात् शब्दावली भी प्रचलित होने में मदद मिलती। कुछ अनुवादकों ने ऐसा किया है पर अधिकांश ने नहीं। ऐसा भी देखने में आया है कि विषय का अनुवाद करते समय वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावलियों में दिये शब्द ग्रहण नहीं किये गये हैं बल्कि अनुवादकों ने अपने आप गढ़ दिये हैं जो विषय को दुरूह बनाने के साथ पाठक को पहले से ही उन शब्दों के लिये ज्ञात प्रचलित शब्दावली पर प्रश्नचिन्ह लगा

देते हैं और उन्हें भ्रम में डाल देते हैं। कई जगह भारी भरकम शब्दों के हिन्दी पयार्य बनाये गये हैं परन्तु ईस्ट जैसे साधारण शब्द को "खमीर" न लिखकर "ईस्ट" ही लिखा गया है।

अब प्रश्न आता है इस पुस्तक के संपादन का। संपादन अपने आप एक महत्वपूर्ण विधा है यह बहुत कठिन कार्य है और पुस्तक की पूरी गरिमा विषय वस्तु की अभिव्यक्ति और भाषा की बोधगम्यता सब इसी क्रिया पर निर्भर करते हैं। अतः संपादन करते समय संपादक को हर दृष्टि से पुस्तक के प्रत्येक पहलू यथा भाषा, शब्दावली, वाक्य रचना, विषय वस्तु, संक्षिप्तियां, लिप्यन्तरण सिद्धांत, वर्तनी, पंकच्यूऐशन, विषय के अनुरूप अभिव्यक्ति शैली आदि का ध्यान रखना होता है। इस पुस्तक को अनेक विद्वानों ने संपादित किया है जिससे सारी पुस्तक संपादन की दृष्टि से गुड़गोबर हो गई है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति ने अपनी अपनी खिचड़ी पकाने की कोशिश की है। यदि इस पुस्तक का संपादन एक ही संपादक द्वारा करया जाता तो बहुत सारी छोटी-छोटी संपादन की कमियां दूर हो जांती और यदि इसका संपादन किसी ऐसे व्यक्ति से करया जाता जिसके पास वैज्ञानिक डिग्री के साथ हिन्दी भाषा की डिग्री और हिन्दी के क्षेत्र का बहुत अनुभव होता तो सोने में सुहागा हो जाता। ऐसा संपादक विषय की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि होने के नाते अच्छी तरह से समझ लेता और हिन्दी भाषा का ज्ञान होने के कारण बढ़िया भाषा व शब्दावली का उपयोग करता। भाषा और शैली की एकरूपता के साथ-साथ सभी लेखों में मानकीकृत शब्दावलियों का एक समान प्रयोग होता जो पुस्तक को कहीं अधिक बोधगम्य बना सकता था।

कुछ कमियां जो खटकती हैं वे इस प्रकार हैं। हर लेख के अन्त में लगभग वही दो चार नाम के व्यक्तियों को धन्यवाद दिया गया है। शोधपत्र पढ़ते समय तो यह हर लेख के अन्त कहा/बोला जा सकता था परन्तु जब इन शोधलेखों को पुस्तक का रूप देना था तो आरंभ या अन्त में किसी एक पृष्ठ पर सभी महानुभावों को धन्यवाद दिया जा सकता था। तूतीकोरिन और टयूटीकोरिन तथा एलिजनेट और आल्जीनेट, सिंगल सेल और एक कोशिका वाले, रेडिएसन, इन्फलामेंटरी, सॉसेझ व सोसीझा जो (sausage) के लिए हैं। बीवरेजीझ जो beverages के लिए है बहुत अधिक खटकते हैं। तालिका बनाने व विभिन्न मदों को सूचीबद्ध करने के लिये क ख ग के बदले अ ब स द किया गया है जब प्रत्येक लेख का अनुवादक अलग-अलग है तो निश्चय ही एक व्यक्ति को पुस्तक का संपादन करना चाहिए था ताकि सभी विभिन्नताओं में एकता लाई जा सकती थी, और एक लेख दूसरे से उचित अभिव्यक्ति के माध्यम से जुड़ सकता था। अंत में मैं यह आवश्यक रूप से कहना चाहूंगी कि हम सबको वैज्ञानिक और तकनीकी पुस्तकों का अनुवाद करते, संपादन और प्रकाशन करते समय यह ध्यान में रखना होगा कि वे वास्तव में उच्च कोटि की ही हों; विषयवस्तु को हिन्दी में बहुत अच्छी तरह से अभिव्यक्त कर पायें, कहीं ऐसा न हो कि अंग्रेजी प्रेमी हमारी इस कमी को सामने रखकर वैज्ञानिक पुस्तकों के मामले में अंग्रेजी के प्रेमी बने रहें। हम सब विज्ञान के प्रत्येक विषय को यथासंभव, यथाशीध्र पढ़ने-पढ़ाने, लिखने, अनुवाद करने, प्रकाशित करने, तथा वैज्ञानिक प्रयोगों के परीक्षण-परिणाम रिपोर्ट आदि सभी को हिन्दी में करने के लिए कटिबद्ध हैं और साथ ही यह कार्य बहुल सूक्ष्मता से करना भी हम का दायित्व है।

कुल मिलाकर पुस्तक के प्रकाशन को सराहनीय प्रयास कहा जा सकता है। यह उन लोगों को भी दीपक दिखाने की तरह है जो सदा यह कहते हैं कि वैज्ञानिक विषयों को हिन्दी में नहीं किया जा सकता। महासागर विकास विभाग निश्चय ही बधाई का पात्र हैं।

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, बालीगंज पार्क टावर, कलकत्ता- 700019

पुस्तक का नामः महासागरीय संसाधन,
लेखः अनेक, संपादनः एस०ए०एच० आबिदी, जे बी आर, प्रसादराव, वी एन धावन, वी नटराजन, आर एन बोहरा, कु० राकेश शर्मा, प्रकाशकः प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय (सी एस आई आर) डॉ० के कृष्णन् मार्ग नई दिल्ली 110012.
पृष्ठः 258

"गेरू से लिखा नाम" (कविता संग्रह)

—केवल गोस्वामी

गेरू से लिखा नाम" शीर्ष से दस कविताएं लगभग डेढ़ दशक पहले नंदकिशोर नवल के सम्पादकत्व में प्रकाशित में हुई थी। यह शीर्षक संभवतः उन्होंने ही दिया था। इस विम्ब को लेकर तब भी छूट-पुट चर्चाए हुई थीं कि गेरू शब्द रंग का क्या सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थ है। इस संकलन की कविताओं को पढ़कर प्रश्न दोबारा मन में उभरते हैं। पहला तो यह कि संकलित कविताओं के मिजाज से यह शीर्षक किसी तरह से भी मेल नहीं खाता और दूसरे गेरूआ समाज से पलायन (सन्यास) का प्रतीक है समाज से जुड़ने का नहीं।

बहरहाल यह कवि श्याम कश्यप का पहला कविता संग्रह है जैसाकि कि श्री केदारनाथ सिंह ने फलैप पर अपने वक्तव्य में लिखा है। पहले संग्रह की तरह इस पुस्तक को लेना कवि के साथ न्याय करना नहीं है क्योंकि कवि पिछले दो दशकों से गम्भीरतापूर्वक रचनाकर्म में प्रवृत है और जनयुग के सम्पादकीय विभाग में उसके कार्यकाल के दौरान सुधि पाठकों को उसके रचना-कर्म का भलि-भान्ति परिचय मिलता रहा होगा। संगृहित कविताओं के साथ यदि कविता का रचनाकाल भी दिया गया होता तो इन दोनों दशकों में फैले उसके रचनात्मक फलक के क्रमिक विकास का जायजा लेना थोड़ा सुगम हो जाता।

सुविधा के लिए संग्रह में संकलित कविताओं को मोटे तोर पर तीन शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है। प्रकृति प्रेम, वैयक्तिक संबंध और वैचारिक कविताएं।

वैयक्तिक संबंध को लेकर लिखी गई कविताएं अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील हैं इसलिए पाठक के मन-मस्तिष्क पर सीधे प्रभाव डालती हैं।

यहां कवि बिना अतिरंजना के हृद्य तंत्रियों को छूने में सफल होता है और भाषा और कविता का मुहावरा मजबूती से उसकी मुट्ठी में रहता है जो कविता कविता के कथ्य और रूप को संवारता और संतुलित करता है। यथार्थ की इस मातृभूमि पर रची गई कविताओं में से एक उदाहरण द्रष्टव्य है। शीर्षक है "अपनी बिटिया के लिए" (पृष्ट-541' "मेरी बुलबुल/हमारी दो जोड़ी आंखों में तिर आए हैं। असंख्य रूप में बहती कतारें/फहराते झंडे/ और असीम सागर कस पिरूयीम नीलापन। "----अपने बच्चों को लेकर हर मां-बाप के मन में जो विचार हिलोरें लेते हैं यह अनुभव को ठोस भूमि के साथ जुड़कर संतान के उज्जवल भविष्य को एक सही दिशा प्रदान करने में सक्षम होते हैं। इन कविताओं को पढ़ कर ऐसा लगता है कि कवि इसी दुनियां का एक धड़कता हुआ और जरूरी हिस्सा है जिसे यहां के सुख-दुख, हर्ष-विषाद, ईर्ष्या-द्वेष उसी तरह प्रभावित करते हैं जैसे दुसरे सामान्य लोगों को करते हैं। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि उसकी ये कविताएं सामान्य जनों तक पूरी तरह सम्प्रेषित होती हैं, यह उसकी कला और रचना की सबसे बड़ी सफलता है।

कविता में विचार की अवधारणा आदि काल से ही रही है किन्तु तब, केवल विचार को लेकर किसी ने विधिवत् आन्दोलन नहीं चलाया। इधर कुछ कवियों में विचार को लेकर कुछ अतिरिक्त उत्साह जागृत हुआ है वे कविता की शर्तों पर विचार को सम्प्रेषित नहीं करते अपितु विचार की शर्तों पर कविता की रचना करते हैं। कविता में विचार को परिभाषित करने का प्रयत्न करते हैं। इससे कविता पर आघात तो लगता ही है, विचार भी अपने सबल रूप में सम्प्रेषित नहीं होता। इसी संग्रह में "विचार" शीर्षक से एक कविता है जिसे कवि ने अंतिम फ्लैप पर भी प्रकाशित किया है। " दफना आए थे/उन्हें वे लोग/पहाड़ों के पार/गहरी कबरों के भीतर/लेकिन वहां हरी-हरी दूब उग गई है/भीतर नन्हीं-नन्हीं/जीवित धुकधुकियां/भूरी जड़ों की उंगलियां पकड़ कर/बाहर फुट रही हैं/आज नहीं तो कल यहां फूल खिलेंगे/उड़ेगी सुगंध चारों ओर दिगंत में/अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए मैंने पूरी की पूरी कविता उद्धृत की है। पहली बात तो यह है कि अगर इस कविता का शीर्षक "विचार" न हो तो पूरे का पूरा बिम्ब कौन सा अर्थ ग्रहण करने में सहायक होगा। यह पूरा मानवीकरण किस और इंगित करता है। दफना आए थे उन्हें वे लोग—यहां प्रश्न है किन्हें दफना आए थे और वे लोग कौन। विचार क्या कोई स्थूल वस्तु है जिसे दफन करने के लिए पहाड़ों को पार गहरी कबरों की आवश्यकता पड़े। दूसरा प्रश्न इस कविता को पढ़ कर लगता है वह कौन सा विचार है जिसके दफन होने की चर्चा कवि यहां पर कर रहा है। जाहिर है यहां उसी-विचार और विचारधारा का जिक्र कर उसने आतमसात किया है किन्तु कविता के इस बिम्ब से कहां स्पष्ट होता है कि कवि किस विचार के दफन होने की चर्चा यहां कर रहा है। रचना प्रक्रिया के दौरान मस्तिष्क में बह रहे विचारक्रम और कागज पर उतरें विचारक्रम को जोड़ कर कवि अपने लिए एक सम्पूर्ण अर्थ-ग्रहण कर लेता है; इसका संकेत उसे प्रायः नहीं मिल पाता। इस प्रकार की और भी कई कविताएं मिल जाएंगी जहां कवि किन्हीं आवेगों और संवेगों के दबाव कवि के मन और मस्तिष्क पर थे या उसकी जो मनःस्थिति थी जरूरी नहीं कि पढ़ते समय वही दबाव या मनःस्थिति पाठक की भी हो। उदाहरण के लिए पंजाब की स्थिति को लेकर कुछ कविताएं इस संग्रह में हैं। यदि कवि ने भाषा और बिम्बों के साथ लापरवाही न की होती तो कथ्य सीधे-सीधे पाठक की संवेदना को छू लेता कम से कम उन पाठको तक तो पहुंचता ही जो उस भूखण्ड से जुड़े हैं। भांगड़ागिद्ध, हल, बैल का जिक्र कर देने से उस भूखण्ड की संवेदना नहीं उभरती, यह तभी सम्भव हो पाता है जब मन की गहराइयों से उबाल की तरह कविता बाहर निकलती है। भावावेश में जहां कवि नानक और गोबिंद सिंह जी का जिक्र करता है वहीं साथ में कबीर को भी जोड़ देता है, यद्यपि उपासना के धरातल पर कबीर नानक से भिन्न नहीं है किन्तु पंजाब के लोगों के मस्तिष्क के साथ जिस तरह नानक जुड़े हैं कबीर उसी तरह से नहीं है। भाषा और बिम्बों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक अर्थों के विपरीत जहां जिस रूप में प्रयोग हुए हैं वे कविता को सबल बनाने की अपेक्षा कही तोड़ते हैं। ये नमूने अगर संग्रह में जहां-तहां न होते तो शायद कविता अपने ध्यातव्यों में अधिक सफल होती। गाती हैं चिड़ियां लता मंगेशकर की तरह (बच्चों जनतंत्र) बच्चा कल्पना लोक में रमता है विचार है किन्तु उसकी कल्पना इस प्रकार के प्रयोग की ओर कदापि नहीं की जाएगी विशेषतया भारत जैसे देश के बहुसंख्यक बच्चे जिन्हें सिनेमा-दूरदर्शन जैसे वस्तुएं देखनी नसीब नहीं हुई। इसी कविता में आगे कवि कहते हैं—"दुख जहां/प्रवेश नहीं करते/नहीं अभाव/यह वर्जित प्रदेश है/चिंताओं के लिए/नफरत का/यानि कोई काम नहीं/" यह स्थिति एक खास वर्ग के बच्चों तक तो सटीक हो सकती है किंतु जहां बूढ़े बच्चे पैदा होते हैं अर्थात् हाथ-पैर निकलने पर जो अपने को सड़कों, कारखानों, फैक्टरियों में पाते हैं उनके प्रजातंत्र का तो यह जिक्र न हुआ। "सागर हंस रहा है फेन-फेन-फेन/उसके जवड़ों से फेन बह रहा है/सौदागर (पृष्ठ 43) सागर की हंसी से फेन बह रहा है यहां तक तो सही फिर उसके जवड़ों से फेन बह रहा है। यह उस किस्म के पूर्व प्रभाव को भी धूमिल कर देता है, इसी तरह "उसके थन/बर्छियों की तरह/धरती की ओर तने हुए थे। (दूध-2) गाय के थनों की तुलना बर्छियों से करना जो हमें अमृत प्रदान करते हैं। इस तरह जहां हम गाय को माता के समान मानते हैं वहां मां के स्तनों की तुलना भी बर्छियों से कर सकते हैं क्या। इसी कविता में—"बछड़ों को दुलारती/पनीली आंखों में/अविश्वास और नफरत/यदि कोई जानवर मनुष्य पर सहज विश्वास कर लेता है चाहे वह मनुष्य कसाई ही क्यों न हो तो वह गाय है। इस संदर्भ में महादेवी वर्मा का रेखाचित्र "गौरा" द्रष्टव्य है।

यह एक और विडम्बना है इस संग्रह के साथ कि जहां कुछ विशेष परिस्थितियों या कवियों और काव्य धाराओं को लेकर कविताएं रची गई हैं किन्तु ऐसी कविताओं के छपते-छपते संदर्भ बदल गए। उदाहरण के लिए "समकालीन" शीर्षक कविता में शायद कविताई के विरोध में "आक्रोश व्यक्त किया गया है किन्तु उन स्थितियों को गुजरे एक जमाना बीत गया। आज के संदर्भ वही नहीं है जो इस कविता में व्यक्त है। इस प्रकार के अन्य कई उदाहरण भी हैं जहां घटनाक्रम बडी तेजी से पलटा है और चीजों को अपने गर्भ में समेट के ले गया। उसके बाद उक्त विषयों पर लिखी गई कविताएं ऐतिहासिक महत्व की तो हो सकती है किन्तु समसामयिक नहीं, किन्तु इसमें कवि पर आक्षेप नहीं किया जा सकता।

सहमति और असहमति के बीच पाठक और समीक्षक के लिए यह संग्रह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि दोनों स्थितियों को वह बड़ी शिद्दत के साथ महसूस करता है। उपेक्षा करके किसी तरह आगे नहीं बढ़ पाता, श्याम कश्यप अपने अगले संग्रह में मूड, कालक्रम और समकालीनता की शर्तों का ध्यान रखेंगे, ऐसी आशा की जानी चाहिए।

गेरु से लिखा नाम(कविता संग्रह), कवि; श्याम कश्यप,
आकार प्रकाशन, सी- ३ १३ माडल टाऊन,दिल्ली,
मूल्य--६५ रुपए

कोहरा

—शांति कुमार स्याल

कमलेश्वर हिन्दी कथा-साहित्य में एक बहुचर्चित और लोकप्रिय नाम है। उनकी कहानियां उनके बहुआयामी सोच का परिणाम हैं। उनकी कहानियां जुझारू पात्रों से भरी पड़ी हैं। उन्होंने आम आदमी को खस्ताहाल जिन्दगी के दर्द को सार्थक अभिव्यक्ति दी है। तनावों और दबावों को जीते शहरी मध्यवर्गीय समाज की जितनी सशक्त कहानियां कमलेश्वर ने लिखी हैं उनकी पीढ़ी के शायद ही किसी लेखक ने लिखी हों। "कोहरा" कहानी संग्रह उनकी हाल ही में प्रकाशित कुछ अलग-सी रचना है।

लेखक के अपने ही शब्दों में "कोहरा" में संकलित अधिकांश कहानियों की पृष्ठभूमि विदेशी है। विदेशी पृष्ठभूमि पर लिखी गई ये कहानियां मेरे लिए नितांत भारतीय हैं, क्योंकि विदेश के हर देश में एक और देश मौजूद है और मेरे देश में एक विदेश मौजूद है।

इस संकलन की कहानियों में लेखक विदेशी भूमि पर नाजीवाद की चर्चा के माध्यम से अपने देश में उग्र राष्ट्रवादी प्रवाह में आ जाने के भय की ओर संकेत करता है। (सफेद सड़क), लेखक इसी प्रकार इन कहानियों में अपने चिंतन को साथ लिए चलता है। "हर नौजवान अपने देश में नाराज़ है" कोहरा जैसे वाक्य व्यवस्था के प्रति आक्रोश की तीखी अभिव्यक्ति है। "मानसरोवर" कहानी में सेनापति चाचा का यह कथन—"क्योंकि हर दौर राग-विराग, आसक्ति, अन्याय, किंचित न्याय, पश्चाताप्, त्याग और स्वार्थी का दौर रहा है... और हर दौर में मानसरोवर के हंस छले जाते हैं, "द्रष्टव्य हैं। लेखक इस प्रकार इन कहानियों में जीवन के अछूते और ज्वलंत प्रश्नों की और यथास्थान इंगित करता चलता है। "अपने देश में" कहानी में लेखक माइक के माध्यम से मानवीय यातनाओं का संकेत करता है—"हमने ही कटांगा और कांगो के अफ्रीकी कबीलों को सभ्य बनाने के नाम पर उन्हें बर्बर यातनाएं दी। उनकी बस्तियां जलाकर उन्हें जंगली और आदिम घाटियों में धकेल दिया।.... उन्हें यूरोप के बाजारों में बेचा।" इस प्रकार कमलेश्वर "कोहरा" में अपने कथा-प्रवाह के बीच अपने जीवन-दर्शन को व्यक्त करते जाते हैं। "कितने पाकिस्तान" का यह अंश देखिए—"ओफ़ा कितने पाकिस्तान पबन गये। एक पाकिस्तान बनने के साथ-साथ, कहां-कहां, कैसे-कैसे, सब बातें उलझ गई। सुलझा तो कुछ भी नहीं। चिंतन के धरातल पर यह वाक्य हमें निरूत्तर करता है। अपने देश की पृष्ठभूमि पर लिखी गई एक-दो कहानी दंगों की मानसिकता का सजीव चित्रण प्रस्तुत करती है। (सोलह छतों का घर, अजीत)।

इस संकलन की कहानियों में जीवन-दर्शन, चिंतन और व्यापक सोच के साथ-साथ रोचक प्रसंग, मनोरंजक वर्णन, विभिन्न जीवन-शैलियों, विविधता भरे पात्र, जीवन की रंगीनियां सभी कुछ है जो पाठक को बांधे रहती है। कुल मिलाकर इनमें से अधिकांश कहानियां जहां एक ओर विदेशी भूमि पर होने के कारण अच्छे लिखे संस्मरण जैसी लगती हैं तो दूसरी ओर ये कथा-साहित्य में अपेक्षित रोचकता, कौतूहल और अछूते प्रसंगों से भरपूर हैं। भाषा सरल सुपाठ्य है। प्रत्येक कहानी में कमलेश्वर के सशक्त व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

एक सौ अट्ठाईस पृष्ठों में छपा यह कहानी-संग्रह मुद्रण और साज-सज्जा में भी उत्तम है।

पुस्तकः कोहरा, लेखकः कमलेश्वर, मूल्यः 60.00, प्रकाशकः राजपाल एंड सन्ज कश्मीरी गेट, दिल्ली।

आधुनिक तेलुगु साहित्य

—राम निवास तिवारी

"आधुनिक तेलुगु साहित्य" यह प्रकाशन एक निबंध संग्रह है जो तेलुगु साहित्य के विभिन्न अंगों को क्रमबद्ध शैली में सरल एवं सुबोध बना कर प्रस्तुत करता है। डा० पी०वी० नरसा रेड्डी पच्चीस वर्ष की अवस्था से ही आंध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम, से हिंदी माध्यम से तेलुगु साहित्य की जानकारी देने में कार्यरत हैं, इसके लिऐ वे प्रशंसनीय हैं तथा केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, दिल्ली व राजभापा-विभाग बिहार सरकार से पुरस्कृत हैं।

भारत में प्रचलित विभिन्न भापाएं, धर्म, जाति, सम्प्रदाय व विभिन्न जीवन शैलियां देश की विराट व अतुल संस्कृति के रूप मात्र हैं। वास्तव में भापा, धर्म, जाति व सम्प्रदाय की दुहाई देकर विभिन्न प्रकार के लोग देश में अराजकता फैला रहे हैं तथा विघटन शक्तियों को बढ़ावा दे रहे हैं। देश की अखंडता को खतरा पैदा हो गया है। ऐसे में समीचीन साहित्यकार का उत्तरदायित्व और बढ़ गया है। भारत के अलग-अलग भापा साहित्य के बीच आदान-प्रदान, मेल-जोल तुलनात्मक अध्ययन व विभिन्न भापाओं की उपलब्धियों को राष्ट्रीय धरातल पर प्रस्तुत करना राष्ट्रीय हित में होगा। लेखक इस क्षेत्र में अनवरत कार्यरत है।

डा० पी०वी० नरसा रेड्डी की यह दूसरी निबंध रचना है। द्राविड़ भापा-परिवार की समृद्ध व लालित्य पूर्ण भापा है तेलुगु। तेलुगु भापा के सभी शब्द स्वरान्त व अकारान्त होने के कारण यह भापा विशेष रूप से संगीतमय है। संस्कृत भापा के निकट की भापा साहित्य की गतिविधियां को राष्ट्रभापा हिन्दी में प्रस्तुत करने के इस प्रयास से साहित्यक व सांस्कृतिक तेलुगु साहित्य को हिंदी में समन्वय-अभाव को कुछ हद तक दूर करने का प्रयास है।

वैसे "आधुनिक तेलुगु साहित्य" निबंध संग्रह केवल आधुनिक साहित्य पर ही प्रकाश न डाल कर आंध्र प्रदेश की पृष्ठभूमि "तेलुगु गद्यभापा एवं साहित्य, तेलुगु नाटक साहित्य, तेलुगु एंकांकी साहित्य, तेलुगु उपन्यास साहित्य, तेलुगु निबंध साहित्य, तेलुगु पत्रिका साहित्य, तेलुगु बाल साहित्य पर महाभारत का प्रभाव, आन्ध्र नाटक पितामह धर्मवरम् रामकृष्णमाचार्य, आधुनिक तेलुगु कवि डा०सी० नारायण रेड्डी, हिन्दी के कल्पतरू आचार्य जी० सुन्दर रेड्डी और आचार्य रामचन्द्रशुक्त और तेलुगु साहित्य के समालोचक डा० कट्टमंची रामलिंगा रेड्डी एक तुलना सहित इन सभी चौदह शीर्षक निबंधों के माध्यम से तेलुगु साहित्य के प्राचीन व आधुनिक सभी विधाओं का क्रमिक व ऐतिहासिक अवलोकन प्रस्तुत किया है।

आन्ध्र प्रदेश की पृष्ठभूमि से उत्तर व दक्षिण राज्यों के बीच जो संगम है उसे समझना सुगम हो जाता है। भापा के आधार पर पहली नवम्बर, 1956 में सभी तेलुगु भापी क्षेत्रों को मिलाकर तेलुगु भापियों के अनवरत संघर्ष के फलस्वरूप सुविशाल तेलुगु प्रदेश "आन्ध्र प्रदेश" के रूप में

स्थापित राज्य है जहां पर तेलुगु का बहुमुखी विकास हो रहा है।

अक्सर यह देखा जाता है कि किसी भाषा के आरम्भ काल में सर्वप्रथम पद्य काव्यों का सृजन होता है जैसे ग्रीक साहित्य का "इलियड" संस्कृत साहित्य का "बाल्मीकी रामायण" प्रथम काव्य ग्रन्थ हैं परन्तु तेलुगु साहित्य की प्रथम रचना चंपू काव्य शैली में में नन्नयभट्ट ने"आन्ध्रमहाभारतम" 1020 ई० के आसपास की। भाषा-शैली व रचना-चातुर्य की दृष्टि से यह एक मौलिक कृति समझी जा सकती है। तेलुगु गद्यभाषा को आधुनिक रूप में लाने का श्रेय अंग्रेजी पादरियों, धर्म प्रचारक, प्रशासक व प्रबुद्ध इन तीन वर्गों के व्यक्तियों को जाता है। 19 वी० शतीं के उत्तरार्ध में मुद्रण की सुविधा, पत्र पत्रिकाओं का प्रचलन व पुर्नर्जागरण की लालसा के कारण तेलुगु गद्य साहित्य का विकास तीव्र गति से होने लगा।

तेलुगु नाटक का प्रारम्भ श्री कृष्णमिश्र कृत "प्रबोध चन्द्रोदय" का संस्कृत से अनुदित नाटक से हुआ। फिर "अभिज्ञान शाकुन्तलम" का अनुवाद हुआ। मंजरीमधुकरीयम" प्रथम तेलुगु रूपक है। वास्तव में तेलुगु नाटक एवं प्रहसनों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है:—
(1) अंग्रेजी से अनूदित (2) संस्कृति से अनूदित
(3) मौलिक पौराणिक नाटक और (4) मौलिक सामासिक नाटक एवं प्रसहन।

आधुनिक तेलुगु नाटककारों में धर्मवरम् रामकृष्णामाचार्युल "आन्ध्र नाटक पितामह" उपाधि से सम्मानित हैं। इन्होंने 30 नाटकों प्रणयन किया था। एकांकी नाटकों का भी प्रभाव भी जोर शोर से नुक्कड़ नाटकों द्वारा हो रहा है और विकसित हो रहा है।

तेलुगु उपन्यास साहित्य "रंगराज चरित्र" के प्रकाशन से आरम्भ होता है। 1872 ई० से आधुनिक उपन्यास के युग प्रवर्तक कद्दकोर वीरेश लिंगम ने राजेशेखर चरित्र" उपन्यास लिखकर समीचीन भाषा शैली का प्रणयन किया। आजकल तेलुगु में उपन्यास को नवला कहा जाता है। इस प्रकार 1872 से लेकर आज तक तेलुगु उपन्यास साहित्य अनेक कदम पार कर विकास की दिशा में अग्रसर हो रहा है।

तेलुगु में बाल साहित्य का आरम्भ 19वीं शती के उत्तरार्ध से होता है। 1872 ई० में "नितिदीपिका" कंद्दकोर वीरेश लिंगम ने बच्चों के लिए प्रणयन किया। इसके अनेकों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। 1874 ई० में बालिकाओं के लिये "सतीहित संग्रह" और बालकों के लिए "विवेक संग्रह' प्रकाशित हुए गज्जेल रामानुजुल नायनिक द्वारा। चार पंक्तियां के छन्द थे। नमूने के तौर पर विवेक संग्रह" का एक पद्यापुवाद देखियेः—

> मां बाप और धन-दौलत
> बन्धुजन और प्राणमित्र किसी काम के नहीं
> केवल पढ़ाई ही ऐसी चीज है जो हमेशा संग रहती है
> और जो उसे प्राप्त करता है समझो सब कुछ उसके पास
> रहा है।

तेलुगु में भी बंगाली से ही अधिक रचनायें (उपन्यास) अनूदित हुई हैं। प्रेमचंद, जैनेन्द्र कुमार, राहुल सांकृत्यायन व किशन चन्दर के कई हिन्दी उपन्यासों का तेलुगु में अनुवाद हो चुका है। परन्तु सम्प्रति अनुवाद की गति धीमी हो चुकी है।

आधुनिक तेलुगु साहित्य पर महाभारत के प्रभाव को निबंध में भलीभांति दर्शाया गया है। आन्ध्र नाटक पितामह धर्मवरम् रामकृष्णामाचार्य व आधुनिक तेलुगु कवि डा० सी० नारायण रेड्डी से संबंधित निबंध समुचित जानकारी देते हैं। आचार्य जी० सुन्दर रेड्डी विषयक जानकारी महत्वपूर्ण है। आचार्य रामचन्द्रशुक्ल से तेलगू साहित्य के समालोचक डा० कट्टमंचि रामलिंगा रेड्डी की तुलना सहज व स्वाभाविक जान पड़ती है। कुल मिलाकर प्रस्तुत निबंध संग्रह ज्ञानवर्धक व जानकारीपूर्ण है।

पुस्तक का नामः आधुनिक तेलुगु साहित्य, लेखकः डा० पी० वी० नरसा रेड्डी, प्रकाशकः मिलिन्द प्रकाशन, हैदराबाद, मूल्यः 60/- रुपये।

बिक्री की आरंभिक जानकारी

"दिल्ली बिक्रीकर की हिन्दी में प्रथम पुस्तक"

—डा० (श्रीमती) निर्मल सिंहल

दिल्ली राज्य में बिक्रीकर सन् 1975 से लागू है। इस विषयक सारा कार्य अंग्रेजी में होता आ रहा है। आम व्यापारी खास तौर पर छोटे व्यापारियों को इस विषय की प्रारम्भिक जानकारी भी नहीं है। इसी को ध्यान में रखकर आम जनता और व्यापारी वर्ग को बिक्री संबंधी जानकारी देकर लाभान्वित करने के उद्देश्य से लेखक द्वय (श्री आर० बी० लाल और श्री अमरनाथ सिंधला) ने यह पुस्तक "बिक्रीकर की आरंभिक जानकारी" तैयार की है। लेखकों ने इस पुस्तक में वर्ष 1999 तक दिन, वर्ष व तारीख निकालने की विधि, 12 वर्ष का कलेंडर, पंजीकरण की आवश्यकताएं, कर अनुसूचियां, कर दरें, प्रथम बिक्री कर देय तालिकायें, कर जमा करने के अधिकृत मुख्य बैंक, सरलीकृत कर निर्धारण योजना के बारे में भी सरल भाषा में विवरण दिया है। उल्लेखनीय बात यह है कि इस पुस्तक में अधिकांश जानकारी द्विभाषिक (हिन्दी व अंग्रेजी) रूप में उपलब्ध है ताकि तकनीकी शब्दावली समझने में आसानी रहे। निश्चय ही पुस्तक की मदद से व्यापारी बिक्रीकर सम्बन्धी अपना समस्त कार्य स्वयं कर सकेंगे।

भारतीय रिज़र्व बैंक, 6 संसद मार्ग, नई दिल्ली—1

बिक्रीकर की आरंभिक जानकारी 1995—दिल्ली बिक्रीकर लेखकः सर्वश्री आर० बी० लाल और अमरनाथ सिंघला, सिंघल एवं सिंगला प्रकाशन—101, शिवलोक II,
कर्मपुरा कमर्शियल कम्पलैक्स, नई दिल्ली-15
सजिल्द मूल्य : 150 रूपये

1. शब्द चिह्न, शब्दाक्षर एवं प्रचलित रेखाकृतियां तथा विभागीय शब्दावलियां
2. हिन्दी आशुलिपि—डिक्टेशन पुस्तिका

—डा॰ पुरूषोत्तम छंगाणी

आज देश में अंग्रेजी आशुलिपि के साथ-ही-साथ हिन्दी आशुलिपि का प्रशिक्षण भी छात्र काफी संख्या में ग्रहण कर रहे हैं। जिस प्रकार अंग्रेजी आशुलिपि में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद सहायक साहित्य उपलब्ध है उनकी तुलना में हिन्दी में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद सहायक साहित्य की कमी को पूरा करने के लिए हिन्दी आशुलिपि की निम्नलिखित पुस्तकों का प्रकाशन किया गया है:—

1. शब्द चिह्न, शब्दाक्षर एवं प्रचलित रेखाकृतियां तथा विभागीय शब्दावलियां

इस पुस्तक में करीब 5000 शब्द चिह्नों, शब्दाक्षरों तथा प्रचलित रेखाकृतियों का समावेश कर शब्दकोश तैयार किया गया है। भारी भरकम शब्दचिह्नों को कम कर प्रत्येक अध्याय से संबंधित प्रचलित एवं प्रायोगिक शब्द-चिह्नों एवं शब्दाक्षरों का प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही बहुत से ऐसे कठिन शब्दों जिनको आशुलिपि में काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है, उनके विकसित एवं छोटे रूप दिये गये हैं, जो पूर्णतया प्रायोगिक हैं।

अकसर विद्यार्थियों की मांग रहती है कि विभिन्न विभागों की प्रचलित शब्दावलियां देखने को नहीं मिलती है जिससे छात्र आशुलिपि की गति बढ़ाने में परेशानी महसूस करते हैं लेखक द्वारा पुस्तक के भाग दो में विभिन्न विभागों से संबंधित करीब 1500 रेखाकृतियां प्रस्तुत की गई है। इस पुस्तक में मुख्य रूप से जिन विभागों को सम्मिलित किया गया है उनमें मुख्य है—मंत्री, मंत्रालय एवं विधायिका सभा, रेलवे, न्यायालय, कृषि एवं सहकारी शिक्षा, वित्त एवं लेखा, बैंक तथा वाणिज्य समाचार पत्र एवं जन-सम्पर्क, रेडियों एंव दूरदर्शन, बिजली, डाक-तार एवं पोस्ट आफिस, बीमा, चुनाव, चिकित्सा, पुलिस, सेना, जेल, नगर पालिका, स्टॉक ब्रोकिंग, कार्यालयों में प्रयुक्त होने वाले पदनाम आदि शब्दों के संकलन के साथ ही कई समितियों तथा रात-दिन प्रयोग में आने वाले मुहावरों एवं लोकोक्तियों का भी अपार भण्डार प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक के अंत में 100 श॰प्र॰मि॰ के गतिवर्धक अभ्यास भी दिये गये हैं। आशा है, इस पुस्तक से छात्रों को गतिवर्धन में काफी सहायता मिलेगी तथा काफी लम्बे समय से महूसस की जा रही कमी भी पूरी होगी। पुस्तक में प्रयुक्त रेखाकृतियों एवं विभिन्न विभागों से संबंधित वाक्यांशों का संकलन स्तरीय है। यह पुस्तक आशुलिपि से जुड़े विद्यार्थियों एवं अन्य सामान्य पाठक के लिए भी उपयोगी है।

2. हिन्दी आशुलिपि-डिक्टेशन पुस्तिका

हिन्दी आशुलिपि का प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद प्रशिक्षणार्थियों के सामने सबसे बड़ी समस्या आशुलिपि की गति में वृद्धि करने की आती है। आशुलिपि की गति वृद्धि हेतु इस प्रकार की पुस्तक की काफी लम्बे समय से कमी महसूस की जा रही थी। लेखक द्वारा इस पुस्तक का प्रकाशन कर इस कमी को पूरा किया गया है। इस पुस्तक में छोटे-छोटे डिक्टेशनों जैसे-30, 40, 50, 60, 70, 80, 90, 100 तथा 120 श॰प्र॰मि॰ की गति के अभ्यासों का प्रयोग कर छात्र उत्तरोत्तर आशुलिपि गति में वृद्धि कर सकते हैं। अभ्यासों की भाषा सरल, सुबोध एवं प्रचलित है जिससे छात्रों को गतिवर्धन में कोई परेशानी नहीं होगी। उल्लेखनीय है कि इन अभ्यासों में प्रचलित वाक्यांशों का प्रयोग किया गया है। उनकी रेखाकृतियां भी पुस्तक के अंत में दी गई हैं। छात्र इन रेखाकृतियों का अभ्यास कर आसानी से विभिन्न गतियों में इन अभ्यासों को लिख सकते हैं।

पुस्तक के भाग दो में व्यावसायिक पत्रों का संकलन भी किया गया है। अक्सर देखने में आता है कि औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं, कर्मचारी चयन आयोग तथा अन्य महत्वपूर्ण परीक्षाओं में व्यावसायिक पत्र प्रश्न-पत्र में दिये जाते हैं किन्तु इन पत्रों के अभाव में छात्र काफी परेशानी महसूस करते हैं। इसी पुस्तक के भाग दो में इस कमी को लेखक द्वारा पूरा किया गया है। साथ ही, कार्यालयों में प्रयुक्त होने वाले आधुनिक यंत्रों जैसे-टेलीफोन, टेलेक्स तथा फैक्स आदि उपकरणों के नामों का भी प्रयोग पत्र लेखन में किस प्रकार किया जाता है, उन्हें किस प्रकार से लिखा जाता है, उनका भी प्रयोग किया गया है। इन पत्रों का अध्ययन कर छात्र विभिन्न आयामों में पत्र लिखने की आदत डाल सकेंगे। पुस्तक के अंत में पत्रों में रात दिन प्रयुक्त होने वाले शब्दों एवं वाक्यांशों की रेखाकृतियां भी दी गई हैं। इस प्रकार छात्र इस पुस्तक का अध्ययन कर आशुलिपि की गति में वृद्धि के साथ ही साथ अपने बौद्धिक स्तर में भी वृद्धि कर सकेंगे।

पुस्तक में प्रयुक्त रेखाकृतियां सुंदर एवं स्पष्ट है। यह पुस्तक हिन्दी आशुलिपि से जुड़े छात्रों के साथ ही साथ सामान्य पाठकों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

पुस्तक का नामः 1. शब्द चिह्न, शब्दाक्षर एवं प्रचालित रेखाकृतियां तथा विभागीय शब्दावलियां, 2. हिन्दी आशुलिपि डिक्टेशन पुस्तिका, लेखकः विजय सिंह चौहान, प्रकाशकः पूजा प्रकाशन, 8 बी/4, जिंक पार्क, मोती मगरी स्कीम, उदयपुर, राजस्थान, मूल्यः 35.00 रुपए प्रति पुस्तक।

चर्चित कहानियां

—डा॰ पुरूषोत्तम छंगाणी

कहानी को परिभाषित करने के प्रयत्नों से उत्पन्न परिणामों को दरकिनार रखते हुए यदि सांकेतिक रूप में कहा जाये तो कहानी एक क्षण की चित्रमय प्रस्तुति है। "क्षण' यहां बहु आयामी है। इसका अर्थ एक छोटा काल-खण्ड भी हो सकता है और अल्पकालिक स्थिति भी। क्षण का अर्थ

हम एक दृष्टि, समझ कर एक आकस्मिक उन्मेष, संत्रास, तनाव या एक घटना अथवा एक प्रभावी संवाद लगा सकते हैं। रमेशचन्द्र शाह की "चर्चित कहानियां" में क्षणों की विविधता नहीं है, परंतु चित्रों की भिन्नता की रंगीन प्रस्तुति पाठकों को बांधे रखने की कमोबेश तासीर अवश्य रखती है।

संग्रह की सत्रह कहानियां, जो अलग-अलग कालावधि में लिखी गई हैं। लेखक की कथा-यात्रा को रेखांकित करती हुए उद्घाटित करती है कि वह अपने गंतव्य की तलाश में अत्र-तत्र पांव मार रहा है। लेखक की स्वीकारोक्ति है कि "मेरी कहानियां इस आत्मालापी दौर से भी क्रमशः उबरती हुई फिर से कथानक और चित्रांकन की ओर एक दूसरे स्तर पर लौटती दिखाई देती है।" परंतु यह सुखद स्थिति है कि उसका यह लौटना ठीक उसी पुराने बिन्दु पर नहीं होता, जहां से यात्रा का श्रीगणेश हुआ था।

आलोच्य कृति की कहानियां अपने परिवेश की विद्रूपताओं को बेनकाब तो करती है, परन्तु बेचैन मनःस्थितियों को भरपूर वाणी देने में चूक जाती हैं। तथापि, लेखक के पास वह सूक्ष्म दृष्टि अवश्य है जो सामान्य-सी घटना में भी प्रभावी कथा-सूत्र की पहचान कर लेती है। उदाहरण के लिए "किस्सा माल गांव का" कहानी को प्रस्तुत किया जा सकता है।

आधुनिक कहानी में सुगठित घटनाक्रम, प्रभावोत्पादक स्थिति अथवा सरल स्पष्ट चरित्र के लिए कोई विशेष आग्रह नहीं है। किस्सागोई से परहेज सर्वमान्य बनता जा रहा है। संग्रह की "ट्रेड अप्रेंटिस" तथा "मान-पत्र" आदि कहानियां एक विशिष्ट घटना-क्रम व चरित्र को लेकर लिखी गई हैं, इस कारण नये दौर में पिछड़ी लगती हैं। परंतु, "अंधड़" कहानी में लेखक "घटना" से मुक्ति पाने का दावा करता है और कहता है कि यह महज एक आदमी का आत्मालाप है। लेखक अब अपनी कहानियों का प्रमुख स्वर भी इसी आत्मालाप को मानने लगा है। संग्रह की "अंधड़" के अतिरिक्त "डंक", "स्पंज" और "कस्बे में कविता" सरीखी कहानियों में भी इसी आत्मालापी स्वर की ही गूंज है। इन कहानियों का "मैं" कोई व्यक्तिपरक नहीं है, बल्कि आम आदमी की छटपटाहट को अभिव्यक्ति देने वाला प्रतिनिधि स्वर है।

आलोच्य कृति की "केयर टेकर", "मुहल्ले का रावण", "अभिभावक" आदि कहानियों में संवेदनाओं के मार्मिक स्पर्श की सुखद अनुभूति होती है। "अभिभावक" के राजा का बाप, अपने बेटे की अनुशासनहीनता के लिए स्वयं को दोषी मानकर एक गहरे अपराध-बोध से ग्रस्त है। "केयर टेकर" का दामू अपनी छाप छोड़ता है। "मुहल्ले के रावण" में वक्त के बदलते मिजाज की विस्मयकारी पहचान है और इस पहचान पर पुरानी निशानियों के मिटने का एक टीसभरा दर्द बेरहमी से पुता हुआ है।

संग्रह में "रनिंग कमेंट्री", "लालू की कहानी" आदि कुछ कहानियां औसत दर्जे की हैं। यहां लेखक के हाथों से बहुत कुछ छूटा हुआ लगता है। इनमें विधान-कौशल तथा भाव-प्रवणता का वांछित स्तर लक्षित नहीं होता। इन कहानियों का चर्चित होना संदिग्ध है।

अंत में, आलोच्य कृति कुल मिलाकर पठनीय तो बन ही गई है। यह ऐसी संभावना भी जगाती है कि लेखक रमेशचन्द्र शाह भविष्य में और अधिक धारदार कहानियां पाठकों को अवश्य देंगे। पुस्तक का मुद्रण व साज-सज्जा स्तरीय एवं आकर्षक है।

पुस्तक का नामः चर्चित कहानियां, लेखकः रमेशचन्द्र शाह, प्रकाशकः सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, पृष्ठः 160, मूल्यः नब्बे रुपये।

ग्रामीण पुलिस—(समस्याएं और समाधान)

—माला गुप्ता

भारत की जनसंख्या 1991 में हुई नवीनतम जनगणना के आरंभिक आंकड़ों के अनुसार 84 करोड़ 39 लाख 30 हजार है, जिसका 80 प्रतिशत भाग गांवों में निवास करता है। अतः भारत की सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था, समृद्धि, विकास एवं कानून व व्यवस्था की स्थिति पर जनसंख्या वृद्धि का असर पड़ना अवश्यभावी है।

ऐसे महत्वपूर्ण विषय पर श्री रामलाल "विवेक" की पुस्तक ग्रामीण पुलिस-समस्यायें और समाधान' एक सराहनीय कदम है।

भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारियों को संबोधित करते हुए एक बार तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने पुलिस के संबंध में कितनी सटीक टिप्पणी की थी कि "झोपडी में रहने वाला एक बहुत ही गरीब व्यक्ति भी आपके बारे मे उतनी ही राय कायम कर सकता है जितना की न्यायधीश के पद पर आसीन व्यक्ति, क्योंकि आप हर प्रकार के व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं।"

प्रस्तुत पुस्तक में ग्रामीण पुलिस के विभिन्न पहलुओं-ग्रामीण समाज, ग्रामीण पुलिस एवं उनकी समस्याओं पर गहनता से प्रकाश डाला गया है। इस हेतु लेखक ने इसे सात अध्यायों में विभाजित करके अपने विचार विद्वतापूर्वक प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने ग्रामीण पुलिस से सम्बन्धित व्यक्तिगत समस्याओं और समाधान, प्रशासनिक समस्याओं, राजनैतिक समस्याएं, सामाजिक समस्याओं, कुल विशेष क्षेत्रीय समस्याओं एवं इन सभी के समाधान हेतु अपने स्पष्ट विचार विस्तारपूर्वक दिग्दर्शित किये हैं। साथ ही उन्होंने अन्त में पुलिस की सफलताओं हेतु विशेष सुझाव भी दिये हैं। लेखक को स्वयं ग्रामीण परिवेश का अनुभव है एवं वे सहायक लोक अभियोजक, प्रथम श्रेणी, बाली, राजस्थान में पदासीन हैं।

लेखक का यह कथन अवश्य ही विचारणीय है कि ग्रामीण भारत में, कानून एवं व्यवस्था को सुदृढ़ करके, अपराधों की रोकथाम करके ही हम आर्थिक आत्मनिर्भरता, राजनीतिक स्वतन्त्रता तथा सामाजिक न्याय के महान आदर्शों की स्थापना कर सकते हैं तथा ऐसा करके ही हम एक विकासमान समता मूलक भारतीय समाज व्यवस्था का निर्माण कर सकते है। किसी भी देश या समाज का विकास तभी संभव है, जबकि वहां कानून एवं व्यवस्था की स्थिति अच्छी हो, अपराधों को होने से पूर्व ही रोकथाम की व्यवस्था को तथा अपराधियों को दण्डित कराने की समुचित व्यवस्था हो।

ग्रामीण समाज में कानून और व्यवस्था को बनाए रखने की, अपराधों की रोकथाम तथा अपराधियों को न्यायालय में प्रस्तुत कर दण्डित कराने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारियों का निर्वाह ग्रामीण पुलिस को ही करना होता है। इसके लिए सक्षम, सुगठित, सक्रिय पुलिस बल की आवश्यकता है।

ग्रामीण पुलिस को कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखने, अपराधों की रोकथाम, प्रकरणों के अन्वेषण तथा अपराधियों को दण्डित कराने के महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व को पूरा करने में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं का बारीकी से अध्ययन कर उनके समाधान खोजना ही इस पुस्तक की विषय वस्तु है। लेखक इस कार्य में काफी हद तक सफल हुए हैं। लेखक द्वारा समाहित समस्याओं के समाधान निःसन्देह ही व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं।

पुस्तक की संरचना पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, भारत सरकार, नई दिल्ली के तत्वाधान में की गई है। इसका ध्येय है पुलिस को अधिक सक्षम, संवेदनशील और जनपयोगी बनाने में और उसकी समस्याओं के निराकरण करने में सहायक सिद्ध होना। यह पुस्तक सम्पूर्ण पुलिस व न्याय व्यवस्था से सम्बद्ध लोगों के लिए तो उपयोगी है ही, साथ ही योजना हेतु तथा जनसाधारण के लिए भी उतनी ही महत्वपूर्ण है।

पुस्तक का नामः ग्रामीण पुलिस—(समस्याएं और समाधान), लेखकः रामलाल "विवेक", प्रकाशकः पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली पुष्ठः 196, मूल्यः 70/-

हिंदी पत्रकारिता की दुनिया

—श्रवण कुमार

सविता चड्ढा मूलतः एक कहानीकार हैं, लेकिन उन्होंने हर विधा पर अपनी कलम आजमायी है। उधर उन्होंने पत्रकारिता पर भी कुछ पुस्तकें लिखी हैं। **'हिंदी पत्रकारिताः सिद्धांत और स्वरूप'** इसी विषय पर उनकी ताजा पुस्तक है जो आज की पत्रकारिता के कई पहलुओं से हमारा परिचय करवाती है। इसलिए पत्रकारिता के विद्यार्थियों के लिए यह उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

पुस्तक का विषयानुक्रम इस प्रकार हैः हिंदी पत्रकारिताः प्रारंभ एवं स्वरूप, समाचार, समाचारपत्र और समाचार समितियां, पत्र, पत्रकार और आचार संहिता, पत्रकारिता-तब की, अब की—तुलनात्मक अध्ययन, पत्रकारिता में नये तकनीक-फैक्स और मॉडम, बाल पत्रकारिता, दूरदर्शन और समाचार-लेखन, संसद और संसदीय पत्रकारिता, रेडियो और समाचार-लेखन, साहित्यिक पत्रकारिताः स्वतंत्र लेखन, गांधी युग और पत्रकारिता, प्रूफ पठन तथा संशोधन, शब्दावली।

निसंदेह विषयों का चयन बड़ी सूझ-बूझ से हुआ है जिससे आज की पत्रकारिता का स्वरूप समग्र रूप से हमारे सामने उभरकर आता है। कुछ विषय महत्वपूर्ण भी हैं। जैसे नये तकनीक-फैक्स और मॉडम, दूरदर्शन और समाचार-लेखन, रेडियो और समाचार-लेखन तथा साहित्यिक पत्रकारिताः स्वतंत्र लेखन ज्यादा महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके अंतर्गत 'कहानी', व्यंग्य, अनुवाद, एकांकी, लेख, समीक्षा इत्यादि पर भी विचार हुआ है। वैसे कहानी के साथ-साथ 'उपन्यास' पर भी विचार किया जा सकता था, क्योंकि अनेक पत्र-पत्रिकाएं उपन्यासों को भी धारावाहिक रूप से प्रकाशित करती हैं और कई बार उन्हें कहानी पर तरजीह देती हैं। लेखन जहां तक साहित्यिक पत्रकारिता से आजीविका उपार्जन का सवाल है, इसमें कुछ खास-खास लेखकों को ही सफलता मिलती है क्योंकि जहां गुटवाद का बोलबाला रहता है। फिर भी सविता जी ने पाठकों का हौसला अफज़ाई करते हुए कहा है कि 'लेखकों की जरूरत बराबर बनी हुई है और यह सदैव बनी रहेगी।' लेकिन प्रश्न उठता है कि आज भी एक स्वतंत्र लेखक को पारिश्रमिक के रूप में मिलता क्या है? क्या वह एक महीने मे तीन-चार कहानियां लिख पाना हर लेखक के बूते का है? और तो और इधर ऐसी पत्र-पत्रिकाओं का अकाल हो गया है जो राजनीति, खेल या फिल्मी दुनिया की तड़क-भड़क पर किसी साहित्यिक कृति को वरीयता देते हों। किसी एक मनोहर श्याम जोशी या कमलेश्वर की सफलता को हम कहानी लेखन में सफलता या जीविकोपार्जन का मापदंड नहीं बना सकते।

बहरहाल, सविता जी ने साहित्यिक पत्रकारिता में पर्दापण करने वाले लेखकों को सफलता की सीढ़ी चढ़ने के लिए कई गुर बताए हैं। जैसे एक सक्षम कहानी के क्या-क्या गुण होने चाहिए। बढ़िया अनुवाद क्या है, लेख और निबंध में क्या अंतर है, समीक्षा कैसे लिखनी चाहिए, इत्यादि। उदाहरणार्थ कहानी के बारे में लेखिका कहती हैः कहानी के लिए आवश्यक है कि उसमें एक ही कथावस्तु हो, चरित्रों का आधिक्य ना हो, और आरंभ, मध्य और अंत की स्थितियां सुविचरित हो।' भावी अनुवादक के लिए लेखिका का कहना हैः 'अनुवाद करते हुए मूल की प्रकृति को सुरक्षित रखना जरूरी है। अनुवाद चाहे शाब्दिक हो। व्याकरणिक प्रकार्य प्रधान हो मूलनिष्ठ हो, लेकिन अनुवाद को मूल भाषा की अलंकार वैशिष्ट्य, वागपद्धति और सांस्कृतिक सौष्ठव भी उसमें आ जाये तो सोने में सुगंध ही कहा जायेगा।' (पृष्ठ 122) लेख और निबंध में भेद करते हुए लेखिका कहती हैः 'लेख मुख्यतः विषयगत होता है, निबंध प्रायः विषयीगत होते हैं।' (पृष्ठ 125) पुस्तक समीक्षा के बारे में लेखिका के विचारों का निचोड़ इस प्रकार हैः 'किसी पुस्तक के बारे में कुछ अच्छाइयां हैं तो पहले उनका वर्णन करिये, बाद में पुस्तक की कमियों (यदि हो) की ओर। केवल बुराइयों की तरफ नजर रखकर पुस्तक न पढ़िए।' (पृष्ठ 131-132) संभव है कि लेखिका के इस सरलीकरण से अधिकांश समीक्षक सहमत न हों, क्योंकि एक अनुभवी समीक्षक अपनी समीक्षा-पद्धति धीरे-धीरे स्वयं विकसित करता है जो समीक्षाधीन पुस्तक के स्वभाव के अनुकूल होती है।

यहां अनेक संबद्ध ग्रंथों से उद्धरण भी जुटाये गये हैं जो प्रायः सटीक होने के साथ-साथ समीचन भी हैं, लेकिन कभी-कभी भ्रामक भी। पुस्तक के पहले अध्याय में पत्रकारिता और साहित्य लेखन' शीर्षक के अंतर्गत यह उद्धरण वरबस अपनी ओर ध्यान खींचता हैः 'साहित्य शैली में चरमावस्था या क्लाइमेक्स अंत में होता है और पत्रकारिता की शैली में आरंभ में। 'या' पत्रकार समाज शैली का अभस्थ होता है जबकि साहित्यकार व्यास शैली अपनाता है।' उत्कृष्ट अनुवाद का नमूना लेखिका ने अज्ञेय तथा रघुवीर सहाय द्वारा किये गये रोम्यां रोला द्वारा लिखित 'विवेकानंद' नामक पुस्तक - के अनुवाद के माध्यम से प्रस्तुत किया है जो कि अनुकरणीय है।

'गांधी युग और पत्रकारिता' अध्याय के अंतर्गत कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'मतवाला' की एक संपादकीय टिप्पणी (जिसके संपादक आचार्य शिवपूजन सहाय थे और जिससे निराला भी जुड़े थे) की छटा भी अपनी तरह की है : 'साहित्य में तो विचित्र धांधली मची हुई है। विशुद्ध साहित्य सूली पर चढ़ाया जा रहा है। भ्रष्ट साहित्य पालने में झूल रहा है। सच्चे इतिहास के मुंह में कपड़ा ठूंस दिया गया है, मिथ्या इतिहास सरे बाजार

गला फाड़कर चिल्ला रहा है। यथार्थवादी पत्र लोहे के चने चबा रहे हैं, हां [illegible] घाले बराबर हलवा गपक रहे हैं। लेखकों के छक्के-पंजे फूल गये हैं, [illegible] के पौ-बाहर हैं।' क्या यह सच आज भी उतना ही सार्थक नहीं है।

पुस्तक में प्रूफ-पठन तथा संशोधन' नाम का अध्याय एक उपयोगी अंध्याय है। पृष्ट 164 पर एक उद्धरण की पंक्तियां इस प्रकार हैं: 'कंपोज की गयी सामग्री शुद्ध या नहीं, यदि वह शुद्ध नहीं है तो कहां अशुद्धि रह गयी है और उसमें क्या शुद्धि की जानी आवश्यक है इसे ही प्रूफ संशोधन करते हैं।' निस्संदेह ये पंक्तियां संशोधन मांगती है। पुस्तक में ऐसी और भी पंक्तिया हैं जिनका 'परिमार्जन होना चाहिए था। शायद 'परिमार्जित' हो जाने पर यह पुस्तक और भी पठनीय, ग्राहय और उपादेय हो जाती।

हिन्दी पत्रकारिताः सिद्धांत और स्वरूप, लेखिकाः सविता चड्ढा, तक्षशिला प्रकाशन, 23/4762, अंसारी रोड, दरिया गंज, नयी दिल्ली110002, पृष्टः 192। मूल्यः 150 रुपये। 1995

उपासना —राकेश कुमार गुप्ता उज्ज्वल

काव्य, कागज के कैनवास पर उतरे मानव अनुभूतियों के चित्र हैं। कविता की उपादेयता तभी है, जब यह वैयक्तिक न होकर समष्टि की हो, अर्थात कविता अपने पूर्णस्वरूप में कविता तभी हो पाती है, जब वह साधारणीकृत होकर जन सामान्य की अनुभूतियों की घोतक हो जाती है। यदि कविता शब्दाडम्बर और अति बौद्धिकता से ओतप्रोत न हो तो कवि की अनुभूतियां क्लिष्ट और वैयक्तिक न होकर जनसाधारण की अनुभूतियां हो जाती हैं। श्री विपिन विहारी प्रसाद के कविता संग्रह "उपासना" की कविताओं में यह गुण अवश्य परिलक्षित होता है।

यह इनका दूसरा काव्य संग्रह है और इन कविताओं में कवि के मनोवेगों की विभिन्न वानगियां देखने को मिलती है।

प्रथम तीन कविताएं उनकी मातृभूमि प्रेम को दर्शाती है, जिनमें रांची, बिहार का निवासी यह कवि क्रमशः भारत, विहार और फिर रांची की गौरव गाथा गाते दिखाई पड़ता है। कवि देश, समाज की जर्जर दशा और आपराधिक राजनीतिकरण से त्रस्त और दग्ध हो कह उठता है—

"अपराध घृणा के आंसू पी
सज्जन जीवन को ढोते हैं,
जनतंत्र की बंदर बांट हुई
जो अच्छे हैं वे रोते हैं।"

तथा

"प्रजातंत्र खिलवाड़ यहां है
प्रजातंत्र गोली की भाषा
प्रजातंत्र का मतलब होता
गोली बर्दी और गड़ांसा।"

कवि इस संग्रह की आधी कविताओं की रचना के बाद विरह और प्रेम के सामान्य गीत गाने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है कि संग्रह दो भागों में बंटा है। प्रथम भाग में राष्ट्र, समाज और राजनीति के बारे में कवि सजग है और दूसरे भाग में वह विरह-प्रेम रस मे खोया तन्द्रामय प्रतीत होता है—

'आनन तेरा विधु उदय हास,
दमके कपोल, विद्युत विलास,
ओठों से पाता आमंत्रण,
जागृत करते हैं महाप्यास।

हां अपवाद स्वरूप कहीं-2 इस तन्द्रा से वह पुनः सजग हो उठता है।

सभी कविताएं सरल, सरस हैं और इनके भावों में गूढ़ता न होकर उनका प्रत्यक्ष उद्‌बोधन दृष्टिगोचर होता है।

कभी कहीं पर इन कविताओं में कविवर 'दिनकर' की तरह हुंकार भी सुनाई पड़ती है जैसे—

"विषधर तेराविषदन्त तोड़ दूंगा मैं,
कैसे तुमको स्वच्छन्द छोड़ दूंगा मैं?
जो क्रूर कुटिल, शोषक कैसे छोड़ूगां?
भारत, ज्वाला में इन्हें झोंक दूंगा मैं।"

इस पुस्तक की छपाई अच्छी है, हां कविताओं के चुनाव में भावों के दृष्टिकोण से लयबद्धता नहीं दिखती, जिससे संकलन पाठक के विचारों को निश्चित दिशा नहीं दे पाता तथापि संकलन पठनी तथा संग्रहणीय है।

काव्य संकलन का नामः "उपासना", कवि का नामः विपिन बिहारी प्रसाद, प्रकाशक का नामः 'साहित्यखोज एवं आपूर्ति संस्थान', निर्मल विहार, एम/48 (डी॰एस॰) के सामने हरमू आवासीय कालोनी रांची-834012

काव्य संकलन-पैगाम

—सैफ खान

"इरादे नेक हों अपने,
तो मंज़िल मिल ही जाती है"

कुछ इन्हीं भावनाओं की अक्कासी करती हुई "शाहनवाज़ मुजावर" की कविताओं का यह संकलन काफ़ी हद तक अपनी मंज़िल के करीब है। ऐसा प्रतीत होता है, कि इनमें ज्यादातर कविताएं, देश की भावी पीढ़ी, खास-तौर से बच्चों व युवा वर्ग को ज़ेहन में रखकर लिखी गयी हैं—ऐसा एहसास शायद इसलिए भी होता है, कि चाहे उनकी कविता का शीर्षक "एकता का परचम" हो या "नेकी का रास्ता" या फिर "ज़माने का दस्तूर", "दिल का हिना" अथवा "मोहब्बत का शिकार" "इन्सान" या "पैगाम"—हर "पंक्ति" में किसी न किसी तरह का "उपदेश" निहित है।

राष्ट्र प्रेम, एकता, भाईचारे और इन्सानियत के जज्बे किसी व्यक्ति अथवा सम्प्रदाय विशेष के एकाधिकार की वस्तु नहीं हैं, इसे किसी मज़हब या धर्म की परिधि में बांधा नहीं जा सकता—"शाहनवाज़" ने जिस अंदाज़ में अपनी कविताओं के माध्यम से देश प्रेम, बन्धुत्व व मानवता का अलख जलाने का प्रयास किया है, वह सराहनीय है। कभी-कभी

छोटे-छोटे चिराग़ भी अनगिनत दीप रौशन कर देते हैं। समाज के बदलते परिवेश में आज समय की पुकार यही है कि हर तरफ से इसी प्रकार का प्रयास हो, ताकि समाज में फैलते हुए साम्प्रदायवाद, नफ़रत व द्वेष के बादल छंटे और मोहब्बत व भाईचरे की किरण अपनी रौशनी बिखेर सके।

काव्य संग्रह का आगाज़ "वतन और फर्ज़ के वफ़ादार" नामक उनवान से होता है जो देश वासियों का भारत मां के प्रति वफ़ादारी का आह्वान है। साथ ही उन वीर सपूतों के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित करने का शाहनवाज साहब का अपना अलग नज़रिया है, जिन्होंने देश की सुरक्षा व अखण्डता की खातिर अपने प्राणों की आहुतियां दीं। कुल मिलाकर 51 कविताओं के माध्यम से मुजावर महोदय ने समाज के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालने की कोशिश की है। इनकी कविताओं में आम बोल-चाल की भाषा का प्रयोग कुछ इस तरह से किया गया है कि "पाठक" के समक्ष अमुक सामाजिक विषय वस्तु की तस्वीर उभरने लगती है। एक स्थिति ऐसी भी आती है कि जैसे हम किसी मुशायरे या कवि सम्मेलन में बैठे "शाहनवाज़ साहब" के बिल्कुल रुबरु हों।

मंदिर-मस्जिद, प्यास हिन्दुस्तान, व्यवहार, कुदरत, शराब, तहज़ीब, औरत, जंग, ज्योति, दर्द, दासी, आरजुओं का समन्दर, "उम्मीद के तबस्सुम" आदि जैसे शर्षिक, कवि की समाज में व्याप्त बुराइयों पर पैनी दृष्टि रखने की कुशलता का परिचायक है।

काव्य संग्रह का एख्तेताम "जलजला" नामक कविता से किया गया है, जो लातूर में आये तूफ़ान व जलजले की दुखभरी कहानी बयान करता है-"देवी प्रकोप" कभी भी किसी पर भी पड़ सकता है। ऐसे में हमें इन्सानियत का दामन नहीं छोड़ना चाहिये-धर्म, ऊंच-नीच, जात-पात से ऊपर उठकर हमें मानवता की सेवा करनी चाहिए—वो जिनका सब कुछ ज़लज़ले में तबाह हो गया—उकी मदद करना हम सबका कर्तव्य है। मुजावर साहब ने हर उस मुद्दे को अपनी लेखनी का विषय बनाया है, जो आज वक्त की पुकार है। क़लम की ताकत किसी भी ताकत से कम नहीं। यह अंततः निर्णायक भूमिका अदा करती है, और यदि हममें एकता हो तो:—

"जब मिलके उठे हम तो तक्दीर बदल जाये,
वह हौसला है हममें ज़ंजीर पिघल जाये"।

काव्यः पैगाम, लेखकः शहानवाज अ० गनी मुजावर, प्रकाशकः मुजावर प्रकाशन, शहानवाज मुजावर, जूनी टाटा कालिनी, घ०न० 159/8, भारत नगर, बान्द्रा (पूर्व) बम्बई-51, मूल्यः 35 रुपए,

पृष्ठ 71 का शेषांश

स्त्री-पुरुष जब समाज में बराबर हैं तो उनकी परस्पर मैत्री की क्या सीमा निर्धारित की जा सकती है?

भारतीय समाज में स्त्री-पुरुष मैत्री अभी प्रारंभिक अवस्था में है। समाज में अभी इससे कई बुराइयां भी उत्पन्न हो रही हैं। धीरे-धीरे जब इसमें परिपक्वता आ जाएगी तो इस प्रकार का दुराचार समाप्त होने लगेगा। स्त्री-पुरुष मित्रता ही समझना चाहिए। यदि मित्रता प्रेम में बदल जाए तो विवाह किया जा सकता है। जैसे पुरुष पुरुष की मैत्री है स्त्री-स्त्री की मैत्री है, उसी प्रकार स्त्री-पुरुष की मैत्री परस्पर होनी चाहिए। यदि इसमें यौन संबंध का प्रवेश हो जाए तो वह मैत्री नहीं रहेगी उसका रूप बदल जाएगा।

साहित्य की भाषा संस्कृतनिष्ठ हो या लेखक को सहज भाषा का प्रयोग करना चाहिए

लेखन स्वांतः सुखाय होता है परंतु जब उसे प्रकाशित कराया जाता है तो पाठकों के प्रति लेखक का दायित्व बढ़ जाता है। अतः भाषा ऐसी हो जो पाठक से सीधा संप्रेषण कर सके। सहज भाषा पाठकों के अधिक निकट रहती है फिर भी रचना की गरिमा के अनुसार ही भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

साहित्यिक विधाओं के पूर्व निर्धारित ढांचे अपर्याप्त सिद्ध हो रहे हैं? आप क्या इससे सहमत हैं

काल कभी रुकता नहीं। इसी काल चक्र के साथ परंपराओं में भी परिवर्तन आता है। परंपराएं एक जंजीर की कड़ी के समान हैं ....यह परिवर्तन इतना धीरे होता है कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में अंतर आता जाता है। बहुत सी पीढ़ियों के बाद इस अंतर का अहसास हो पाता है। समय के साथ साहित्य में भी अंतर आना आवश्यक भी है। इस प्रकार साहित्य भी है, कालक्रमानुसार इसके शिल्प, पारम्परिक ढांचे आदि में परिवतर्न होना स्वाभाविक है। इसमें हर दिन एक नई कड़ी जुड़ती जाती है

क्या साक्षात्कार एक साहित्यिक विधा है?

यूरोप में तो इस विद्या को मान्यता दी जांच चुकी है। अब हमारे देश में भी इसका बहुत प्रचलन होने लगा है। फिर भी मैं यह कहूंगा कि इसका स्वरुप अभी तक सुनिश्चित नहीं है। कई साहित्यिक साक्षात्कार बहुत उपयोगी और सूचनात्मक हैं बहुत से साक्षात्कर्त्ता ऐसे प्रश्न पूछ लेते हैं कि लेखक से सब कुछ उगलवा लेते हैं। तब स्वयं लेखक को भी आश्चर्य होता है। इस रूप मे साक्षात्कार भी साहित्य की एक विधा बन गया है।

आप युवा लेखकों को क्या संदेश देना चाहेंगे?

मैं यही संदेश देना चाहूंगा कि अपने से बड़ों का सम्मान करो। नई पीढ़ी हमारे कंधों पर चढ़ कर ही तो युवा हुई है उसे यह सदा याद रखना चाहिए। विचारों के मतभेद का यह अर्थ कदापि नहीं है कि व्यक्ति "सम्मान" भी भूल जाए।

साहित्य का क्या प्रयोजन है? लेखक का दायित्व क्या है?

साहित्यकार काल-दृष्टा होता है। उसका समाज के प्रति उत्तरदायित्व है। वह जो कुछ भी समाज को दे उससे समाज समस्याओं के साथ-साथ कुछ सुझाव प्राप्त कर सके। साहित्यकार भविष्य वक्ता होता है। इन्हीं अर्थों में वह समाज का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। साहित्य और समाज के बीच सम्प्रेषण, न न्म लेखक करता है। किसी भी समाज की समृद्धि उसका साहित्य ही है। लेखक समाज को नए मूल्य बतलाए। यही साहित्य का प्रयोजन और लेखक का दायित्व है।

प्रस्तुतिः कामिनी बाली

राजभाषा सम्मेलन/संगोष्ठियां

पश्चिम क्षेत्र में राजभाषा सम्मेलन

अहमदाबाद के अटारा सभागार में दिनांक 28 दिसम्बर, 94 को राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें पश्चिम क्षेत्र में स्थित गोवा, महाराष्ट्र व गुजरात के केन्द्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों तथा बैंकों के राजभाषा अधिकारियों/वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया। सम्मेलन में गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के सचिव, श्री आर०के० सिन्हा, संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप, मुख्य अतिथि श्री वासाणी, कुलपति, गुजरात विश्वविद्यालय, विशषे अतिथि श्री चंद्रकांत मेहता उपस्थित थे।

श्री कृष्ण नारायण मेहता, उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय राजभाषा विभाग, बंबई तथा मदन मोहन मनुज, केन्द्र निदेशक, आकाशवाणी, अहमदाबाद सम्मेलन के आयोजक थे।

सम्मेलन में संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप ने श्री रामलाल राही, उपगृह मंत्री के संदेश को पढ़कर सुनाया। इसके पश्चात वर्ष 1992-93 व 1993-94 के लिए हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने वाले केन्द्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों तथा बैंकों को पुरस्कार व प्रमाणपत्र प्रदान किए गए। गुजरात हिंदी साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डा० अंबाशंकर नागर को हिंदी के लिए उनके उत्कृष्ट योगदान था। पुस्तक लेखन के उपलक्ष्य में पुरस्कार के रूप में शाल व नारियल से सम्मानित किया गया।

सभी महानुभावों ने कार्यालय में हिंदी प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए अपने-अपने सुझाव दिए। इस बात पर बल दिया गया कि हिंदी की भाषा सरल हो, दूसरी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया जाए। हस्ताक्षर हिंदी में किए जाएं तथा प्रतिदिन एक दो वाक्य हिंदी में लिखें जाएं, हिंदी शब्दों का प्रयोग किया जाए।

हमें अंग्रेजी की मानसिकता को छोड़कर निःसंकोच हिंदी का प्रयोग करके राष्ट्रीय गौरव को बढ़ाना चाहिए। जब जापान, चीन, फ्रांस, रूस, जर्मनी में उनकी में कार्य करना संभव है तो भारत में हिंदी भाषा में क्यों नहीं। यदि कोई कमी है तो भाषा में नहीं हममें कमी है। अपने देश में अपनी भाषा होनी चाहिए।

राष्ट्रीय एकता की दिशा में भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन

"बम्बई तिरुवल्लुवर मन रम" बम्बई संस्था की ओर से प्रथम बार देश की राजधानी दिल्ली में राष्ट्रीय एकता की दिशा में भारतीय भाषाओं का मधुर मिलन समारोह दिनांक 15-16 अप्रैल, 1995 को नेहरू सभागार, तीन मूर्ति भवन नई दिल्ली में किया गया।

श्री एस०वी० गिरि, सचिव मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार ने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। उन्होंने देश की भावनात्मक एकता की दिशा में इस प्रकार के सम्मेलनों को बहुत उपयोगी बताया। डा० बी० आर० नारायण, श्री सुभाष विद्यालंकार, श्री एम० सुब्रमण्यम्, श्री चन्द्रधर त्रिपाठी, सचिव राष्ट्रपति महोदय ने इस अवसर पर अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

दो दिवसीय इस सम्मेलन में कुल पांच सत्र चले। इनमें "राष्ट्रीय एकता भारतीय भाषाएं", "अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारतीय भाषाएं", "भारतीय भाषाओं में अनुवाद", "भारतीय भाषाओं में कंप्यूटर,; "भारतीय भाषाओं का राजभाषा से समन्वय" विषयों पर अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर विभिन्न भाषाओं के विद्वानों, लेखकों जैसे माननीय डा० ब्रिस्की, राजदूत पोलैण्ड ने अपने सुमधुर हिन्दी भाषण से सबका मन जीत लिया। इनके अलावा डा० महेश चन्द्र गुप्त, श्री हरिबाबू कंसल, डा० गार्गी गुहा, डा० पाण्डुरंग राव, प्रो० एवं कवि बलदेव वंशी, डा० गंगा प्रसाद विमल ने भी अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर कम्प्यूटर एवं भारतीय भाषाओं के विषय पर वरिष्ठ इंजीनियरों—डा० एस० के० अग्रवाल, श्री रमेश कुमार वर्मा तथा कंप्यूटर इंजीनियरी से जुड़े श्री रंजन कुमार उप सम्पादक, नवभारत टाइम्स आदि ने बहुत ही उपयोगी सूचनापरक भाषण दिए।

संस्था की ओर से श्री बी०आर० नारायण, डा० रवीन्द्र कुमार सेठ, श्री हरिबाबू कंसल जैसे विद्वानों का सम्मान माननीय शंकर दयाल सिंह, सांसद के कर-कमलों से शाल ओढ़ाकर किया गया।

समापन समारोह के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए श्री शंकर दयाल सिंह ने दो महत्वपूर्ण सुझाव दिए।

(1) भारत सरकार में भारतीय भाषाओं का एक विभाग खुलना चाहिये।

(2) प्रत्येक राज्य की राजधानी में भारत की भाषाओं का एक पुस्तकालय खुलना चाहिये।

श्री रामनाथ सहगल ने अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री त०शि०क० कण्णन एवं उनके साथियों की सराहना की।

इस सम्मेलन के आयोजन में तमिल भाषी हिन्दी लेखक श्री त०शि०क० कण्णन ने अपना तन मन धन लगाकर इस दिशा में योगदान देकर एक प्रशंसनीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

इन सम्मेलनों में डा० किशोर वासवानी, जत्थेदार श्री दर्शन सिंह, श्री महेश चन्द्र गुप्त आदि ने अपना योगदान देकर सक्रिय भूमिका निभाई।

केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चण्डीगढ़ में हिन्दी संगोष्ठी

केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन में दिनांक 6-7 अप्रैल, 1995 को दो दिवसीय अखिल भारतीय अन्तर-परिषदीय हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में परिषद की देशभर में फैली 42 प्रयोगशालाओं से वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली मुख्यालय सहित 35 प्रयोगशालाओं के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। संगोष्ठी का उद्घाटन श्री पवन कुमार बंसल, सांसद, चण्डीगढ़ ने किया। इस अवसर पर एक स्मारिका भी जारी की गई। माननीय सांसद ने अपने मुख्य अतिथि सम्बोधन में कहा कि हिन्दी एक अत्यन्त समृद्ध भाषा है। देश में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए लोगों के मन से हिन्दी के प्रति हीन भावना को खत्म करना होगा।

संगठन द्वारा परिषद् की विभिन्न प्रयोगशालाओं से उद्योगों को प्रदान की जाने वाली सेवाओं के संबंध में तैयार की गई एक निदेशिका का भी संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में परिषद् के संयुक्त सचिव (प्रशासन) श्री दिलीप कुमार द्वारा लोकार्पण किया गया। आपने प्रतिभागियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि परिषद् की प्रयोगशालाएं अपने दैनिक कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयास कर रही हैं तथा ऐसी कोशिश की जा रही है कि वैज्ञानिकों द्वारा अपने शोध पत्र हिन्दी में ही लिखे जाएं। इससे पूर्व संगठन निदेशक प्रो० क०रा० शर्मा ने मुख्य अतिथि, संयुक्त सचिव (प्रशासन) तथा प्रतिभागियों का संगठन में स्वागत करते हुए कहा कि "विज्ञान के विषय में हिन्दी का प्रयोग कठिन है" के विचार को हमें संगोष्ठी में एक भ्रांति मात्र ही सिद्ध कर पाए तो हम सोचेंगे कि हमारा प्रयास सार्थक हुआ। संगोष्ठी आयोजन समिति अध्यक्ष डा० आर०पी० बाजपेयी ने अपने परिचयात्मक सम्बोधन में कहा कि परिषद् की प्रयोगशालाओं ने अपने अनुसंधान तथा विकास कार्यों से देश को विश्व के मानचित्र पर ला दिया है। इन प्रयोगशालाओं की उपलब्धियों को राष्ट्र व राजभाषा हिन्दी के माध्यम से जनमानस तक पहुंचाना ही इस संगोष्ठी का लक्ष्य है।

संगोष्ठी में निम्नलिखित 4 विषयों पर व्याख्यान आमंत्रित किए गए थेः—

1. सी०एस०आई०आर० की विभिन्न प्रयोगशालाओं एवं उपकरण निर्माण।
2. विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग कठिन क्यों?
3. परिषद् की प्रयोगशालाओं में राजभाषा नीति को लागू करने में आने वाली कठिनाइयां।
4. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में उपकरणों का महत्व।

इन में से वैज्ञानिक विषयों पर वैज्ञानिकों तथा राजभाषा नीति से सम्बन्धित विषयों पर हिन्दी अधिकारियों द्वारा परचे पढ़े गए। संगोष्ठी में कुल 4 सत्रों में 30 परचे पढ़े गए। इन 4 सत्रों की अध्यक्षता हिन्दी तथा अन्य भरतीय भाषाओं के सुप्रसिद्ध लेखक श्री गुणाकर मुले, पंजाब विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० लक्ष्मी नारायण शर्मा, चण्डीगढ़ से प्रकाशित होने वाले दैनिक समाचार पत्र "दैनिक ट्रिब्यून" के सम्पादक श्री विजय सहगल तथा संगठन के वरिष्ठ वैज्ञानिक श्री पी०सी० बैनर्जी ने की।

संगोष्ठी के अन्त में आयोजित किए गए खुले सत्र में प्रतिभागियों से संगोष्ठी के आयोजन की सार्थकता तथा सफलता पर विचार आमंत्रित किए गए। प्रतिभागियों की प्रतिक्रियाएं बहुत उत्साहजनक थीं।

करनाल क्षेत्र के राजभाषा अधिकारियों की वार्षिक बैठक

दिनांक 19 जनवरी, 1995 को हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, व चंडीगढ़ स्थित शाखाओं/कार्यालयों में कार्यरत राजभाषा प्रतिनिधियों (अधिकारी वर्ग) की वार्षिक बैठक का आयोजन विकास भवन, करनाल में किया गया। बैठक के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता केनरा बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय करनाल के सहायक महाप्रबंधक श्री सी० वेंकटेसन ने की तथा श्री राजवीर देसवाल (आई०पी०एस), अपर पुलिस अधीक्षक, करनाल ने मुख्य अतिथि एवं श्री विमल नागपाल, प्रधान संपादक, कलम युग (पाक्षिक), करनाल ने विशेष अतिथि के रूप में उद्घाटन समारोह की गरिमा बढ़ायी। केनरा बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, करनाल के मंडल प्रबंधक श्री रमेश चंद्र, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल के सदस्य-सचिव श्री रामशंकर गौतम, श्री हरिओम गाँधी, दैनिक पंजाब केसरी, चंडीगढ़, श्री नरेन्द्र नाथ चौधरी, प्रेस संवाददाता ट्रिब्यून डेली, चंडीगढ़ ने अपनी उपस्थिति से बैठक को गौरवान्वित किया। इस अवसर पर क्षेत्रीय कार्यालय, करनाल के सभी अनुभाग प्रमुख तथा लगभग 45 शाखाओं/कार्यालयों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। बैठक का प्रारंभ क्षेत्रीय कार्यालय के अधिकारी श्री पी० एन० मूर्ति द्वारा प्रस्तुत सुमधुर सरस्वती वंदना से हुआ। मुख्य अतिथि श्री राजवीर देसवाल (आई० पी० एस०) ने अपने संबोधन में संपर्क भाषा के रूप में संपूर्ण भारत में हिंदी की व्यापक मान्यता के बारे में प्रकाश डाला तथा

आम व्यक्ति द्वारा प्रयोग की जाने वाली सहज-सरल व आसान हिंदी का प्रयोग पत्राचार एवं अन्य माध्यमों में करने पर बल दिया ताकि जनता द्वारा सभी संदेश आसानी से समझे जा सकें। आम व्यक्ति की भाषा में अंग्रेजी, पंजाबी, उर्दू आदि अन्य देशी-विदेशी भाषा के शब्द बिना किसी आग्रह या दुराग्रह के आते हैं अतः ऐसी ही भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए।

समारोह अध्यक्ष श्री सी॰ वेंकटेसन, सहायक महाप्रबंध, क्षेत्रीय कार्यालय, करनाल ने राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में केनरा बैंक की उपलब्धियों पर प्रकाश डालते हुये सभी राजभाषा प्रतिनिधियों से अपनी-अपनी शाखाओं में सभी शत-प्रतिशत कार्य हिंदी में कराने का अनुरोध किया। वार्षिक बैठक के समापन सत्र की अध्यक्षता केनरा बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय के मंडल प्रबंधक श्री यू॰जी॰ आचार्य ने की, श्री आचार्य ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में राजभाषा कार्यान्वयन से संबंधित रिकार्ड के उचित रख-रखाव पर बल दिया तथा बैठक में लिये गये निर्णयों के अनुरूप उन सभी क्षेत्रों में हिंदी को ईमानदारी के साथ अपनाने का अनुरोध किया जिनमें अभी तक हिंदी का प्रयोग नहीं हो रहा है, अथवा बहुत कम हो रहा है।

इस अवसर पर विशष अतिथि, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल के सदस्य-सचिव एवं राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल के सहायक निदेशक राजभाषा श्री रामशंकर गौतम ने सभी राजभाषा प्रतिनिधियों से शाखा-स्तर पर राजभाषा कार्यान्वयन को गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों रूपों में प्रभावी रूप से क्रियान्वित किये जाने की पुरजोर सिफारिश की तथा क्षेत्रीय कार्यालय के राजभाषा अधिकारी श्री अशोक कुमार सक्सेना द्वारा नगर राजभाषा कार्यन्वयन समिति, करनाल की सभी गतिविधियों में सक्रिय सहयोग की सराहना की।

बैठक का सफल आयोजन एवं संचालन क्षेत्रीय कार्यालय के राजभाषा अधिकारी श्री अशोक कुमार सक्सेना द्वारा किया गया।

हिंदी साहित्य संगम के तत्वाधान में बोकारो स्टील सिटी में कवि सम्मेलन

26 मार्च, 1995 को राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में तेजी लाने के उद्देश्य से एक भव्य हिन्दी कवि सम्मेलन का आयोजन "हिन्दी साहित्य संगम" के तत्वाधान में हुआ। इस कवि सम्मेलन में जिन कवियों/साहित्यकारों ने भाग लिया उनमें सर्वश्री विनोद कुमार दूबे, दयानाथ लाल, श्री अवधेश कुमार "बारुदी", कवि सुखनन्दन सिंह "सदय", बालकवि आर्य, सुश्री अर्पिता श्वाती, मनोज कु॰ चौबे, डा॰ परमेश्वर भारती, डा॰ अमर नाथ झा, देवेन्द्र प्रसाद कन्थवे, बुद्धिनाथ झा और महेश शर्मा "मेहन्दी" इत्यादि श्रोताओं के बीच छाए रहे। इस साहित्यिक आयोजन के मुख्य अतिथि थे—श्री बालाकान्त झा, उपमुख्य प्रशासन, वित्त एवं लेखा विभाग बोकारो स्टील प्लांट, बोकारो स्टील सिटी, बिहार। राजभाषा हिन्दी की गरिमा पर एक ओर इन्होंने प्रकाश डाला तो दूसरी ओर राष्ट्र के विकास में कवियों द्वारा दिए जाने वाले योगदानों की भी विस्तृत चर्चा की। इस मौके पर स्मृति, रिंकु सिन्हा एवं उमेश कुमार ने उपस्थित कवियों एवं श्रोताओं का स्वागत किया। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता स्थानीय साहित्यिक संस्था "हिन्दी साहित्य परिषद "के प्रधान सचिव श्री बाल कवि आर्य ने की तथा इसका सफल संचालन "हिन्दी साहित्य संगम" के संरक्षक तथा वित्त एवं लेखा विभाग, बोकारो स्टील प्लांट के मनोनीत हिन्दी अधिकारी श्री दयानाथ लाल ने जो एक नई शैली के माध्यम से किया उसकी अत्यधिक प्रशंसा श्रोताओं एवं विद्वत जनों के बीच हुई। जहा तक कवियों का सवाल है तो इस कवि सम्मेलन में भाग लेने वाले सभी कवि अपने-अपने क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण साबित हुए। "बारुदी कवि" अवधेश कुमार की कविता "जिने का है अधिकार नहीं" राष्ट्रिय भावनाओं से जो काफी ओत-प्रोत थी उसे श्रोताओं ने काफी सराहा। सुखनन्दन सिंह "सदय" ने तो हास्य-व्यंग्य के माध्यम से अपनी अनूठी पहचान बना ली। श्री बाल कवि आर्य के गीतों को क्या कहना? "नए-नए पात लगे आने" जो बसन्त गीत उन्होंने पढ़ा उसकी वजह से वे हिन्दी जगत् के एक बहुत अच्छे गीतकार प्रमाणित होकर ही रहे। कवि, लेखक एवं समीक्षक श्री दयानाथ लाल ने "हे राम तुम्हारी दुनिया में सब लोग हलाहल पीते हैं।" जो काव्य पढ़ा उसका स्वागत उसकी एक-एक कड़ी पर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच तब तक होता रहा जब तक वे काव्य पाठ करते रहे। डा॰ परमेश्वर भारती के गीत भी कम आकर्षक नहीं रहे। मनोज कुमार चौबे एवं डा॰ अमर नाथ झा के गीत और गजलों से सभी लोग आहलादित हुए। श्री बुद्धि नाथ झा ने महाभारत की कथा कविता के माध्यम से भारतीय स्वर्णिम अतीत की सुधी ताजी हुई। इस प्रकार कुल मिला कर सम्पूर्ण कार्यक्रम बहुत ही रोचक रहा।

भिलाई इस्पात संयंत्र में तकनीकी सम्मेलन

भिलाई इस्पात संयंत्र के जवाहरलाल नेहरु चिकित्सालय एवं अनुसंधान केन्द्र में विश्व एड्स दिवस (1 दिसम्बर) के अवसर पर एक तकनीकी सम्मेलन का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन भिलाई इस्पात संयंत्र के अधिशासी निदेशक (परियोजाएं) श्री युद्धवीर सिंह ने किया। अपने अतिथि उद्बोधन में उन्होंने चिकित्सा विभाग द्वारा इस्पात कार्मिकों हेतु आम भाषा में किये जाने वाले सम्मेलनों व प्रकाशनों की सराहना की। एड्स पर आयोजित इस सम्मेलन को उन्होंने सामयिक बताया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवा विभाग के निदेशक डा॰ जे॰ एन॰ मिश्र ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने एड्स की विभीषिका एवं इसके नियंत्रण की तत्काल आवश्यकता पर बल दिया। इस अवसर पर चिकित्सा विभाग की संयुक्त निदेशिका डा॰ (सुश्री) पी॰ वारे ने भी अपने विचार रखे। एड्स रोग से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर सभी वक्ताओं ने अपने व्याख्यान राजभाषा हिन्दी में प्रस्तुत किए। वक्ता थे-डा॰ एस॰ ए॰ रिजवी, डा॰ (श्रीमती) मोहन्ती, सुश्री इंद्रजीत कौर, सुश्री नन्दिता एवं भिलाई इस्पात संयंत्र के मुख्य विधि अधिकारी श्री बद्री प्रसाद मिश्र। इस सम्मेलन हेतु राजभाषा विभाग ने प्रेरणादायी भूमिका अदा की।

उक्त अवसर पर जवाहरलाल नेहरु चिकित्सालय एवं अनुसंधान केन्द्र के क्लीनिकल बायोकैमेस्ट्री विभाग के विशेषज्ञ एवं प्रभारी डा॰ अनुराग श्रीवास्तव द्वारा एड्स रोग पर जनसाधारण के लिए लिखी गई एक पुस्तक का विमोचन भी मुख्य अतिथि द्वारा किया गया।

कार्यक्रम के विशेष अतिथि महाप्रबंधक (कार्मिक व प्रशासन) श्री जी॰ उपाध्याय ने भी चिकित्सा विभाग द्वारा समय-समय पर सामाजिक चेतना

जागृत करने व अपने नैतिक दायित्वों के प्रति पूर्ण सजग रहने की प्रशंसा की। कार्यक्रम की गरिमा को बढ़ाने वाले अन्य अतिथि थे—इस्पात कर्मचारी संघ के उपाध्यक्ष श्री रवि आर्या व अधिकारी संगठन के श्री महापात्रा जी। धन्यवाद ज्ञापन चिकित्सा विभाग के अपर निदेशक डा॰ समर के॰ घोष ने किया एवं कार्यक्रम का सफल संचालन विभागीय राजभाषा समन्वय अधिकारी डा॰ अनुराग श्रीवास्तव ने किया।

कोचिन में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन

राजभाषा विभाग, भारत सरकार के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, कोचिन द्वारा 10 फरवरी 1995 को होटल आबाद प्लाजा, एरणाकुळम् में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप ने प्रशासन में भाषा की भूमिका पर प्रकाश डाला। उन्होंने सम्मेलन के आयोजन पर प्रसन्नता व्यक्त की।

आयकर आयुक्त, कोचिन श्री मुत्तु रामलिंगम् जो कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (सरकारी कार्यालय), कोचिन के अध्यक्ष हैं और श्री लासर, क्षेत्रीय प्रबंधक, यूनियन बैंक आफ इंडिया और अध्यक्ष, टोलिक (बैंक), कोचिन ने भी इस अवसर पर भाषण दिये।

राजभाषा विभाग के सेवा निवृत्त अधिकारीगण श्रीमती मेरी कुरियाकोस एवं डा॰ जोस ओस्टिन ने भी अपने विचार व्यक्त किए। श्री एम॰ श्रीधरन, उप निदेशक (कार्यान्वयन), क्षेत्रीय कर्यालय, कोचिन ने सभा का स्वागत किया और श्री डी॰ कृष्ण पणिक्कर, उप निदेशक (कार्यान्वयन) क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, बेंगलूर ने धन्यवाद प्रस्ताव किया।

इस अवसर पर वर्ष 1991-92, 1992-93 एवं 1993-94 के लिए टोलिक (बैंक), तिरुवनंतपुरम (जिसका संयोजक हमारा अंचल कार्यालय है) को प्रथम स्थान प्राप्त हुए जबकि 1992-93 के लिए द्वितीय पुरस्कार मिला। इसके अलावा 1991-92 के लिए हमारे अंचल कार्यालय को भी प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

हमारे बैंक एवं टोलिक की तरफ से श्री पी॰ प्रशान्त मेनोन, मंडल प्रबंधक, श्री एम॰ गोपालन नायर, मंडल प्रबंधक तथा श्री एम॰पी॰ गोपालकृष्णन, प्रबंधक ने पुरस्कार प्राप्त किए।

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड (रिफाइनिंग डिविजन), बंबई के हिंदी समन्वयकों का सम्मेलन

राजभाषा हिंदी के प्रचार और प्रसार को अधिकाधिक बढ़ावा देने के लिए भारत पेट्रोलियम हमेशा प्रयासरत रहा है। इसी की एक कड़ी के रूप में हमारे कार्यालय के प्रत्येक विभाग में हिंदी समन्वयक नामित किये गये हैं। ये समन्वयक अपने विभाग के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं तथा हिंदी कक्ष और अपने संबंधित विभाग के बीच में प्रभावी कड़ी के रूप में बखूबी भूमिका निभाते हैं। इन हिंदी समन्वयकों का वार्षिक सम्मेलन दिनांक 21 फरवरी, 95 को बंबई में आयोजित किया गया। सम्मेलन का उद्घाटन श्री एस॰ विश्वनाथन, महाप्रबंधक (प्रभारी) ने किया। इस एक दिवसीय सम्मेलन में राजभाषा हिंदी की संवैधानिक अपेक्षाएं, कार्यालय में चलाई जा रही विभिन्न प्रोत्साहन योजनाएं, संसदीय राजभाषा समिति की प्रथम उपसमिति को दिये गये आश्वासन आदि विभिन्न विषयों के संबंध में सत्र आयोजित किये गये।

केनरा बैंक, मंडल कार्यालय, मेरठ में हिन्दी प्रतिनिधियों की बैठक

दिनांक 22 फरवरी, 1995 को मेरठ मंडल की शाखाओं के वरिष्ठ प्रबंधक/प्रबंधक वर्ग के हिन्दी प्रतिनिधियों की बैठक का सफल आयोजन किया गया, इस अवसर पर मेरठ मंडल के मंडल प्रबंधक श्री टी॰ चौकलिंगम्, तथा गाजियाबाद मेरठ, बुलंदशहर, रामपुर, मुरादाबाद जनपद की 30 शाखाओं के वरिष्ठ प्रबंधक/प्रबंधक गण मौजूद थे। भारत सरकार के राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, गाजियाबाद के सहायक निदेशक श्री सोमदत्त शर्मा ने अतिथि के रूप में भाग लिया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ श्रीमती हर्ष छावड़ा द्वारा की गई ईश वंदना से हुआ। अतिथि श्री सोमदत्त शर्मा, सहायक निदेशक, राजभाषा विभाग ने अपने कर कमलों से दीप प्रज्ज्वलित करके कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। मण्डल प्रबंधक श्री टी॰ चौकलिंगम् ने शाखाओं के वरिष्ठ प्रबंधकों/रबंधकों की शाखा के दैनिक कामकाज के हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की प्रेरणा दी। राजभाषा प्रबंधक श्रीमती जीवनलता जैन ने सभी का हार्दिक स्वागत करते हुए कार्यक्रम के उद्देश्य पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम के सभी मुद्दों के अनुपालन पर गहन विचार विमर्श हुआ और सभी वरिष्ठ प्रबंधकों/प्रबंधकों ने यह आवश्वासन दिया कि बैंक के लखनऊ अंचल के अन्तर्गत मेरठ मंडल बैंकिंग के अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ हिन्दी के क्षेत्र में भी अग्रणी स्थान प्राप्त करेगा। सहायक निदेशक श्री सोमदत्त शर्मा ने शाखा प्रधानों द्वारा प्रस्तुत की गई प्रगति और उनके विचार सुझाव जानने के पश्चात् अपने प्रेरणा संदेश में केनरा बैंक के सदप्रयासों की प्रशंसा की तथा शाखा प्रधानों को शाखा स्तर पर हिन्दी में ही कार्य करने/कराने की प्रेरणा दी। उल्लेखनीय है वर्ष 1993-94 में, अंचल की श्रेष्ठ शाखा जहांगीराबाद को मुख्य अतिथि ने राजभाषा ट्राफी और प्रशस्ति पत्र प्रदान किया। अंचल की हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता 94 का सांत्वना पुरस्कार श्रीमती कंचन लता गुप्ता की ओर से श्रीमती हर्ष छाबड़ा ने प्राप्त किया।

अरूणाचल नागरी संस्थान में विचार गोष्ठी

दिनांक 19-02-1995 को "अरुणाचल नागरी संस्थान" ईटानगर के तत्वावधान में एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें देश के

विभिन्न भागों से आए हुए कवियों, बुद्धिजीवियों तथा पत्रकारों ने भाग लिया। इस गोष्ठी का उद्देश्य अरूणाचल प्रदेश जैसे अहिन्दी भाषी और दुरस्थ राज्य में हिन्दी भाषा एंव नागरी लिपि के विकास की संभावनाओं का पता लगाना एवं विचार-विमर्श करना था। इस विचार-गोष्ठी की अध्यक्षता डा० सोहनपाल "सुमनाक्षर", नई दिल्ली, ने की। मुख्य अतिथि के पद से बोलते हुए प्रख्यात कवि, लेखक, नृविज्ञानी और भाषाशास्त्री पद्मश्री डा० श्याम सिंह शशि ने कहा कि अरूणाचल प्रदेश में लोक-साहित्य में बहुत कार्य किया जाना शेष है। उन्होंने कहा कि इस दूरस्थ अंचल में हिंदी के विकास की असीम संभावनाएं हैं। हिंदी जनसाधारण की भाषा है। इस क्षेत्र में अरूणाचल नागरी संस्थान की महत्ता स्वयंसिद्ध है। इस संस्थान से यहां के स्थानीय लोगों को अधिक से अधिक जोड़ना चाहिए। यह संस्थान इस क्षेत्र में बहुत अच्छा कार्य कर रहा है।

इस गोष्ठी के अध्यक्ष पद से बोलते हुए डा० सोहनपाल 'सुमनाक्षर' ने कहा कि इस सीमावर्ती प्रदेश में लोगों का इतना स्नेह प्राप्त हुआ है कि मैं आनंदविभोर हो गया हूं। हम लोग यहां से जब जायेंगे तो अपने साथ बहुत कुछ लेते जायेंगे। यहां के निवासियों के निश्छल व्यवहार और सरलता को देखकर में इतना प्रभावित हुआ हूं जिसका वर्णन करना शब्दों के बाहर है।

इस विचार-गोष्ठी का संचालन "अरूणाचल नागरी संस्थान" के अध्यक्ष डा० धर्मराज सिंह ने किया। उन्होंने डा० शशि और अन्य विद्वानों का स्वागत करते हुए कहा कि एक साथ इतने विद्वानों ने संस्थान में पधारकर हमें और हमारे संस्थान को गौरवान्वित किया है। डा० सिंह ने यहां की जनजातियों के हिन्दी प्रेम की चर्चा करते हुए कहा कि इस प्रदेश के दूरस्थ क्षेत्रों में भी लोग हिंदी बोलते समझते हैं और हिंदी में बातें करते हैं। उन्होंने कहा कि दुर्भाग्यवश इस प्रदेश की अपनी कोई लिपि नहीं है और किसी भी प्रदेश के विकास के लिए लिपि की महत्ता स्वयंसिद्ध है। इसलिए देवनागरी या कोई अन्य लिपि को स्वीकार करना इस प्रदेश की महती आवश्यकता है। देवनागरी लिपि यहां की बोलियां/भाषाओं के लिए सबसे वैज्ञानिक और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सर्वथा अनुकूल लिपि है। डा० सिंह ने उपस्थित विद्वानों से कहा कि वे इस संस्थान को सहयोग एवं आशीर्वचन देकर मार्गदर्शन करें।

अरूणाचल नागरी संस्थान के उपाध्यक्ष डा० प्रसिद्ध नारायण चौबे ने उपस्थित भाषाकर्मियों एवं कवियों को धन्यवाद ज्ञापित किया। इसी के साथ गोष्ठी का समापन हुआ।

इस्को, बर्नपुर राजभाषा क्लब का वार्षिकोत्सव

दिनांक 25-3-95 को राजभाषा क्लब, बर्नपुर ने अपने वार्षिकोत्सव के अवसर पर अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन किया। रात भर चलने वाले इस कवि सम्मेलन में देश के कोने-कोने से स्वनाम धन्य कवि व कवयित्री पधारे थे। कार्यक्रम के शुरू में सभी उपस्थित लोगों ने खड़े होकर एक मिनट का मौन रखकर बंगला के सुख्यात कवि स्वर्गीय शक्ति चट्टोपाध्याय के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। महाप्रबंधक (कार्मिक व प्रशा०) की पत्नी श्रीमती चन्द्रा दासगुप्ता ने दीप प्रज्ज्वलित कर कार्यक्रम का औपचारिक उद्घाटन किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे कंपनी के कार्यपालक निदेशक (वर्क्स) डा० एस०एस० ऐरन। राजभाषा क्लब के कार्यकारी अध्यक्ष व महाप्रबंधक (का० व प्रशा०) श्री विश्व बन्धु दासगुप्ता ने कहा कि "संघ सरकार की राजभाषा हिन्दी का प्रगामी प्रयोग सुनिश्चित करना हम सभी का कर्तव्य है। इस्को में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन व उसके निरन्तर प्रगामी प्रयोग के लिए सतत् प्रयत्न जारी हैं। "कार्यपालक निदेशक (वर्क्स) डा० एस०एम० ऐरन ने अपने भाषण में कहा कि "भाषा जोड़ने का काम करती है और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमारे संविधान ने केन्द्र सरकार की एक राजभाषा की बात की तथा साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं के विकास की बात कही।" कार्यक्रम के इसअंश का संचालन व अंत में धन्यवाद ज्ञापन किया वरिष्ठ प्रबंधक (हिन्दी) व राजभाषा क्लब के सचिव श्री पौहारी शरण सिन्हा ने।

कार्यक्रम का दूसरा भाग था कवि सम्मेलन। श्री सुरेश उपाध्याय की अध्यक्षता में श्री धमचक मुलथानी द्वारा संचालित इस कवि सम्मेलन में लगभग 3 हजार श्रोता उपस्थित थे। कवि सम्मेलन में जहां हास्य व्यंग्य के श्रेष्ठ कवि श्री प्रदीप चौबे, श्री सुरेश उपाध्याय, डा० श्याम ज्वालामुखी थे, वहीं ओज व वीर रस के कवि श्री भूषण त्यागी भी उपस्थित थे, व्यंग्यकार श्री धमचक मुलथानी और श्री दिलीप चंचल के साथ ही गीतकार श्री नूर मुहम्मद नूर, श्री विनीत वातायन, सुश्री रेहाना नवाब, श्री माधव पाण्डेय 'निर्मल', और सुश्री आरिफा शबनम भी थीं

धनबाद से पधारे श्री दिलीप चंचल की ये पंक्तियां साहित्य प्रेमियों के मन को छू गई।

"गर्म मुल्क में ठंडी कविताएं
लिख नहीं सकता
मैं साहित्य का पैदल सिपाही ही सही
लेकिन बिक नहीं सकता।"

ओज के प्रसिद्ध कवि श्री भूषण त्यागी की यह रचना सराही गई:—

"अपने घर में घर बनाकर और मत घर दीजिए
अगर गैरत हो तो अब हाथों में पत्थर लीजिए
दंभ के पर्वत ढहें और न्याय का परचम तने
फिर महाभारत मचे, ऐसा स्वयंवर कीजिए।"

मैनपुरी, उत्तर प्रदेश से आई कवयित्री सुश्री आरिफा शबनम ने तो दर्शकों पर लम्बे समय के लिए अपनी छाप छोड़ दी। जन्म से ही देखने की सुविधा से वंचित आरिफा शबनम की रचनाएं भी दर्शकों के अन्तर्मन को छूने वाली थीं। भोर साढ़े चार बजे घर लौटते दर्शकों की भीड़ में इनकी रचना की गुनगुनाहट को कुछ इस प्रकार सुना गया:—

"मैंने कोई सूरज कोई तारा नहीं देखा,
किस रंग का होता है, उजाला नहीं देखा,
सुनते हैं कि अपने ही थे, घर लूटने वाले
अच्छा हुआ कि मैंने ये तमाशा नहीं देखा।"

श्री विनीत वातायन के प्रश्न ने सबको सोचने पर विवश किया कि:—

"पर्व है पर प्रश्न ये है
पर्व की पहचान क्या है?

विविधा

"निकनेट" पर राजभाषा सूचना प्रणाली

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय ने राजभाषा हिन्दी से संबंधित विभिन्न प्रकार की सूचना "नि-नेट" पर उपलब्ध कराने के आशय से "राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र", नई दिल्ली से एक "राजभाषा सूचना प्रणाली" विकसित करवाई गई है। यह सूचना प्रणाली आंशिक दस्तावेज के रूप में "बेसिस प्लस" में विकसित की गई है। इस सूचना पद्धति का उद्देश्य निम्नलिखित के संबंध में समय से तथा अद्यतन सूचना उपलब्ध कराना है:—

"संघ की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिये वार्षिक कार्यक्रम, राजभाषा हिन्दी के प्रयोग के संबंध में समय-समय पर जारी विभिन्न आदेशों की नियम पुस्तक, केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा की वरिष्ठता सूची, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के अनुवाद पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण कैलेण्डर और केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान के हिन्दी भाषा/हिन्दी टाइपिंग/आशुलिपि पाठ्यक्रम।"

इस व्यवस्था से देश के विभिन्न भागों में स्थित केन्द्र सरकार के सभी कार्यालयों को राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्रों पर यह सूचना हिन्दी या अंग्रेजी में आसानी से उपलब्ध हो सकेगी।

यह कार्यक्रम मेनू.के अनुसार चलाया जाता है और 'प्रयोक्ता मैनुअल' संबंधी जानकारी सुलभ संदर्भ के लिए यहां दी गई है। इस प्रणाली को चलाने के लिए किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है और इस संबंध में राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र के सूचना अधिकारियों से सहायता ली जा सकती है। इस सूचना को समय-समय पर अद्यतन किया जायेगा और इस प्रणाली के अंतर्गत यथासमय राजभाषा विभाग द्वारा और सूचना भी उपलब्ध कराई जायेगी। आशा है कि ऊपर उल्लिखत सूचना प्राप्त करने के लिए प्रयोगकर्ता "निक-नेट" प्रणाली का पर्याप्त प्रयोग करेंगे।

प्रयोक्ता मैनुअल राजभाषा सूचना प्रणाली

आवश्यकताएं

1. 'यूनिक्स/जेनिक्स' आपरेटिंग सिस्टम पर आधारित कंप्यूटर तथा Radix साफ्टवेयर
2. 'जस्ट' टर्मिनल
3. डाट मैट्रिक्स या लाईन-प्रिंटर

आरम्भ करने के लिए

1. टर्मिनल को शुरु करने के लिए बटन दबाइए। loginA : प्राम्पट का इन्तजार कीजिए।
2. loginA प्राम्पट आने पर guest टाइप कीजिए। अब कंप्यूटर $ प्राम्पट दिखाएगा।
3. 'जिस्ट' टर्मिनल को देवनागरी मोड में सैट करें। (यह Alt-S-DV कुंजियां दबाने पर आएगा) टर्मिनल को 7-bit में लाने के लिए Alt-M-7 कुंजियां दबाएं।
4. अब $ प्राम्पट पर radix टाइप करके Enter कुंजी दबाएं।
5. अब टर्मिनल पर NICNET> या * प्राम्पट दिखाएगा।
6. NICNET> या * प्राम्पट पर Basis plus 486 सिस्टम का निकनेट नम्बर (40445004860900) टाइप कीजिए। टर्मिनल सक्रीन पर login प्राम्पट दिखाएगा।
7. login प्राम्पट पर dol टाइप कीजिए। सिस्टम Password पूछेगा, अब पुनः dol टाइप कीजिए।
8. सिस्टम अब निम्न प्रकार दिखाएगा।

—DOL circular system
1. Hindi version
2. English version
3. Exit

अब आपका सिस्टम निम्नलिखित राजभाषा सूचना प्राप्त करने व देखने के लिए तैयार है:—

1. राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए वार्षिक कार्यक्रम
2. राजभाषा हिन्दी के प्रयोग संबंधी नियम पुस्तक
3. केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा-वरियता सूची
4. केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो द्वारा संचालित अनुवाद प्रशिक्षण कार्यक्रम
5. केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा संचालित हिन्दी शिक्षण योजना, हिन्दी टाइपिंग, हिन्दी आशुलिपि पाठ्यक्रम।
6. राजभाषा हिंदी के प्रयोग संबंधी वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट का प्रोफार्मा
7. हिंदी पुस्तक सूचियां

यदि आप हिन्दी में उपरोलिखित सूचनाओं को देखना/प्रिंट करना चाहते हैं तो विकल्प 1 चुनिए और यदि अंग्रेजी में सूचनाओं को देखना चाहते हैं तो विकल्प 2 चुनिए और बाहर आने के लिए विकल्प 3 चुनिए। यदि आपने विकल्प 1 या 2 को चुना है तो सिस्टम Term ID तथा TERM (अध्यायों के नाम) दिखाएगा, जैसे:—

(यदि हिन्दी में देखने के लिए विकल्प 1 चुना तो नेटवर्क में हिन्दी में जानकारी प्राप्त करने हेतु Ctrl-W कुंजियां दबाएं)।

Term Id	Members	References	Term
1	1	1	राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए वार्षिक कार्यक्रम
2	1	1	राजभाषा हिन्दी के प्रयोग संबंधी नियम पुस्तिका

Enter Term Id number:

अब जिस अध्याय को आप देखना चाहते हैं उस अध्याय का Term ID number टाइप करें, सिस्टम इस अध्याय का विवरण दिखाएगा। सिस्टम एक समय में टर्मिनल स्क्रीन पर 15 पक्तियां दिखाएगा, उसके बाद सिस्टम पुछेगा:—

<Enter scroll command>

Scroll Commands निम्नलिखित प्रकार की हैं:—

N W (Next Window) - अगली 15 पंक्तियां देखने के लिए
N L (Next Line) - अगली लाइन में जाने के लिए
N S (Next Section) - अगला सैक्शन देखने के लिए
P W (Prior Window) - पिछली 15 लाइनें देखने के लिए
P L (Prior Line) - पिछली लाइन देखने के लिए
P S (Prior Section) - पिछला सैक्शन देखने के लिए
TOP - पूरा अध्याय एक ही बार देखने के लिए

अपनी मनपसन्द Text में जाने के लिए उपर्युक्त में से कोई कमांड <Enter Scroll Command> के आगे टाइप कीजिए।

यदि आप चुने हुए अध्याय के sections को देखना चाहते हैं तो <Enter Scroll Command> के आगे toc टाइप कीजिए। सिस्टम अब चुने अध्याय के सभी Sections दिखाएगा। जैसे:—

ID	Section Entries
1	5.1 पत्राचार में हिन्दी का प्रयोग
2	5.2 तार/बेतार/फैक्स/आरेख
3	5.3 देवनागरी टाइपराइटर

यदि आप कोई विशेष Section चुनना चाहते हैं तो <Enter Scroll Command> के आगे gs तथा ID number टाइप कीजिए। जैसे:—

<Enter Scroll Command> g s 1 (1 = ID number)

अब, सिस्टम सैक्शन 1 का विवरण दिखाएगा। 15 लाइनें दिखाने के बाद सिस्टम <Enter Scroll Command> पूछेगा।

Direct Movement Commands
Go to Section Id show screen

यदि आप इस सूचना प्रणाली से बाहर आना चाहते हैं तो <Enter Scroll Command> के आगे Exit टाइप कीजिए।

सिस्टम अब FQM> 5म्पट दिखाएगा। FQM> के आगे फिर से exit टाइप कीजिए व return कुंजी दबाइए। सिस्टम फिर से निम्न प्रकार दिखाएगा।

- DOL Circular system>
- 1. Hindi version
- 2. English version
- 3. Exit

यदि आप अगला अध्याय देखना चाहते हैं तो फिर से उपर्युक्त विवरण repeat कीजिए अन्यथा 3 टाइप कीजिए। सिस्टम radix menu से बाहर आ जाएगा।

यदि आपको कोई कठिनाई हो तो कृपया इस पते पर संपर्क करें।

केवल कृष्ण
प्रणाली विश्लेषक
राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र
योजना आयोग
'ए' ब्लाक, सी॰ जी॰ ओ॰ काम्पलैक्स

नई दिल्ली - 110 003.
फोन : 4362371 । 4362386

email address:
sec dol @ x400.nicgw.nic.in

प्रस्तुतिः तकनीकी कक्ष

हिन्दी शिक्षण योजना
परीक्षा स्कंध

शोमनाथ त्रिपाठी

हिन्दी प्रशिक्षण के विविध सोपान

भारत सरकार की राजभाषा नीति के सम्यक अनुपालन के लिए केन्द्र सरकार के उपक्रम, बैंक, कंपनी कार्यालयों के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान होना आवश्यक है, इसी तरह कार्यालयों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने के लिए हिन्दी टंकण तथा हिन्दी आशुलिपि का प्रशिक्षण आवश्यक है जिससे कार्यालयों में अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में किया जा सके।

संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठापित हो जाने के पश्चात से आज तक हिन्दी प्रशिक्षण के विविध रूपों को अपनाया गया और यह प्रयत्न किया जा रहा है कि पूरे देश के सभी केन्द्रीय कार्यालयों में प्रशिक्षण का कार्य त्वरित गति से पूरा हो जाए। किसी कार्यालय को यह कहने का अवसर न मिले कि हम प्रशिक्षण के कार्य को कैसे पूरा करें।

ये प्रशिक्षण निम्न लिखित रूप से चलाए जा रहे हैं:—

1. हिन्दी शिक्षण योजना: राष्ट्रपति महोदय के आदेशानुसार यह योजना, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत एक पुरानी योजना है। इसके द्वारा देश के विभिन्न भागों में हिन्दी तथा हिन्दी टंकण/आशुलिपि के पूर्णकालिक/अंशकालिक केन्द्र चलाए गए हैं। यह नियमित प्रशिक्षण हैं इसमें नामित प्रशिक्षार्थियों को परीक्षा में बैठना अनिवार्य है। यह सेवाकालीन प्रशिक्षण है।—

पाठ्यक्रम 1. प्रबोध - प्राइमरी स्तर
2. प्रवीण - मिडिल स्तर
3. प्राज्ञ - हाई स्कूल स्तर

पात्रता 1. जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु, मलयालम हो या कन्नड़ हों सीधे प्रबोध में दाखिल हो सकते हैं।
2. जिनकी मातृभाषा-बंगला, उड़िया, असमिया, मराठी, गुजराती हो, प्रवीण में दाखिला ले सकते हैं।
3. जिनकी मातृभाषा पंजाबी सिंधी उर्दू कश्मीरी सीधे प्राज्ञ में दाखिल हो सकते हैं।
4. इसके अतिरिक्त ये सभी भाषा-भापी यदि इन्हें हिन्दी का काफी ज्ञान है तो प्राज्ञ में भी सीधे दाखिला ले सकते हैं।

प्रशिक्षण अवधि: पांच महीने प्रत्येक पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया है।

परीक्षाएं: वर्ष में दो बार आयोजित की जाती हैं
जनवरी से मई सत्र (5 महीने)
जुलाई से नवम्बर सत्र (5 महीने)

शुल्क: केन्द्र सरकार के कर्मचारियों को निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जाता है जबकि उपक्रम/बैंक/निगम के कर्मचारियों को उनके विभागों द्वारा पूर्ति की जाती है।

टंकण/आशुलिपि: टंकण - 5 महीने
आशुलिपि-एक वर्ष

परीक्षाएं: वर्ष में दो बार परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं।
अगस्त से जनवरी सत्र
फरवरी से जुलाई सत्र

शुल्क: केन्द्र सरकार के कर्मचारियों को निःशुल्क प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है जबकि उपक्रम/निगम/बैंक से क्रमशः 40 रूपए 50 रूपए लिए जाते हैं।

2. केंन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान

राजभाषा विभाग के अन्तर्गत केंन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना 21 अगस्त 1985 को की गयी।

केन्द्र सरकार/उपक्रम/निगम/बैंक/कंपनी कार्यालयों में नए भर्ती होने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए हिन्दी तथा हिन्दी टंकण/आशुलिपि का पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण दिया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु देश में विभिन्न उपसंस्थान खोले गए हैं:—

उत्तर क्षेत्र : दिल्ली

पूर्व क्षेत्र : 1. राइफल फैक्ट्री ईशापुर
2. दक्षिण पूर्व रेलवे गार्डनरीच, कलकत्ता
3. आयुध निर्माणी बोर्ड, कलकत्ता
4. किरणशंकर राय रोड, कलकत्ता
5. आयकर आयुक्त कार्यालय, कलकत्ता

पश्चिम क्षेत्र : 6. ब्लेर्ड इस्टेट कामर्स हाउस
7. फाइनेन्स रोड, पुणे
8. एच॰ए॰एल॰ रोड, पुणे
9. मंगलूर

दक्षिण क्षेत्र : 10. पोर्ट ट्रस्ट, मद्रास
11. दक्षिण रेलवे, मद्रास
12. भारी वाहन निर्माणी
13. रेलवे मुख्यालय, हैदराबाद
14. केन्द्रीय उत्पादशुल्क सीमा शुल्क
15. राष्ट्रीय खनिज विभाग

उपसंस्थानों द्वारा गहन प्रशिक्षण

यह प्रशिक्षण पूरे दिन का होता है। इसमें विभिन्न विभागों द्वारा अधिकारी/कर्मचारी पूरे दिन के लिए नामित किए जाते हैः—

प्रोबध	25	कार्यदिवसीय
प्रवीण	20	कार्यदिवसीय
प्राज्ञ	15	कार्यदिवसीय
टंकण	40	दिवसीय
आशुलिपि	80	कार्यदिवसीय

गहन प्रशिक्षण द्वारा उत्तीर्ण प्रशिक्षार्थियों को वे सभी सुविधाएं, नकद पुरस्कार तथा वेतन वृद्धियां मिलती हैं जो योजना द्वारा उत्तीर्ण प्रशिक्षार्थियों को मिलती हैं।

पत्राचार पाठ्यक्रमः प्रचालन कर्मचारियों या ऐसे कर्मचारी जो ऐसी जगहों पर तैनात हैं जहां हिन्दी प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं है ऐसे प्रशिक्षार्थियों के लिए राजभाषा विभाग ने पत्राचार पाठ्यक्रय की व्यवस्था की है। पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी प्रबोध, प्रवीणं, प्राज्ञ तथा टंकण का प्रशिक्षण दिया जाता है।

पाठ्यक्रम अवधिःएक वर्ष

प्रशिक्षण माध्यमः अंग्रेजी

प्रशिक्षण विधिः उत्तर पत्रों द्वारा तथा पढ़ने की सहायक सामग्री द्वारा तथा समय-समय पर दिए गए निर्देशों द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। पत्राचार पाठ्यक्रम के प्रशिक्षार्थियों को भी वे सभी सुविधाएं मिलती हैं जो योजना या संस्थान द्वारा पढ़ने वाले प्रशिक्षार्थियों को मिलती हैं।

परीक्षाएंः इन सभी पाठ्यक्रमों की परीक्षाएं देशभर में बनाए गए परीक्षा केन्द्रों के माध्यम से होती है। वर्ष में दो बार होती हैं। परीक्षा संचालन का पूरा उत्तरदायित्व परीक्षा स्कंध को दिया गया है।

परीक्षा संचालन तथा परीक्षा परिणाम इत्यादि कम्प्यूटर की सहायता से बहुत कम समय में ही अर्थात एक महीने के अन्दर ही निकाल दिए जाते हैं। इससे प्रशिक्षार्थियों को दूसरी कक्षाओं में दाखिल होने में कोई असुविधा नहीं होती तथा उनको मिलने वाले नकद पुरस्कार तथा वेतन वृद्धि आदि समय से मिल जाते हैं।

प्रशिक्षण का कार्य एक बहुत महत्व का कार्य है। अतः इसे निःस्वार्थ भाव से भी करना अपेक्षित है।

चूंकि इसमें पढ़ने वाले प्रशिक्षार्थी अहिन्दी भाषी होते हैं जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं होती, ऐसी स्थिति में उनके उच्चारण तथा व्याकरण आदि संबंधी त्रुटियों को उदारतापूर्वक देखना चाहिए।

यदि हिन्दी को हमें राष्ट्रभाषा राजभाषा बनाना है तो कुछ त्रुटियों को नजरअंदाज भी करना पड़ेगा।

कार्यालयों में फाइलों पर सरल हिन्दी का प्रयोग किया जाए तो इससे बहुत आसानी होगी। हिन्दी भाषी कठिन शब्दों के अर्थ भी समझ सकते हैं लेकिन तथाकथित अहिन्दी भाषी सरल हिन्दी ही समझ सकते हैं।

प्रशिक्षण के इस विस्तार से जहां एक ओर लोग राष्ट्रभाषा का अध्ययन करेंगे वहीं दूसरी तरफ उन्हें राजभाषा की नीतियों को लागू करने में भी कोई कठिनाई नहीं होगी तथा अपने-अपने कार्यालयों में आसानी से हिन्दी में काम-काज कर सकेंगे। हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा भी है। हिन्दी राष्ट्र की एकता की कड़ी है।

मई, 1995 में आयोजित प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ परीक्षा की समय-सारणी

परीक्षा	प्रश्न-पत्र	दिन	दिनांक	समय
प्रबोध	प्रथम	मंगलवार	23-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक
प्रबोध	द्वितीय	मंगलवार	23-5-1995	2.00 से 5.00 बजे तक
प्रबोध	मौखिक	बुधवार	24-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक
प्रवीण	प्रथम	बुधवार	24-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक
प्रवीण	द्वितीय	बुधवार	24-5-1995	2.00 से 5.00 बजे तक
प्रवीण	मौखिक	बृहस्पतिवार	25-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक
प्राज्ञ	प्रथम	बृहस्पतिवार	25-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक
प्राज्ञ	द्वितीय	बृहस्पतिवार	25-5-1995	2.00 से 5.00 बजे तक
प्राज्ञ	मौखिक	शुक्रवार	26-5-1995	10.00 से 1.00 बजे तक

हिन्दी टाइपलेखन परीक्षा का कार्यक्रम (समय-सारणी)

परीक्षा की तारीख	दिन	बैच	समय
18-7-95	मंगलवार	1	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
18-7-95	मंगलवार	2	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
19-7-95	बुधवार	3	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
19-7-95	बुधवार	4	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
20-7-95	बृहस्पतिवार	5	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
20-7-95	बृहस्पतिवार	6	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
21-7-95	शुक्रवार	7	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
21-7-95	शुक्रवार	8	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
24-7-95	सोमवार	9	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
24-7-95	सोमवार	10	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक

हिन्दी आशुलिपि परीक्षा का कार्यक्रम (समय-सारणी)

परीक्षा की तारीख	दिन	बैच	समय
25-7-95	मंगलवार	1	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
25-7-95	मंगलवार	1	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
26-7-95	बुधवार	2	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
26-7-95	बुधवार	2	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
27-7-95	बृहस्पतिवार	3	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
27-7-95	बृहस्पतिवार	3	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक
28-7-95	शुक्रवार	4	प्रातः 10.00 बजे से 12.00 तक
28-7-95	शुक्रवार	4	सायं 02.00 बजे से 04.00 तक

हिंदी शिक्षण योजना की परीक्षाएं एक नजर में

शोमनाथ त्रिपाठी
उपनदिशक (परीक्षा)

केन्द्र सरकार तथा केन्द्र सरकार के नियंत्रणाधीन कार्यालयों के हिन्दी न जानने वाले अधिकारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कराने के उद्देश्य से राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण योजना कार्य कर रही है। राजभाषा नीति के लागू करने के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी प्रशिक्षण का कार्य अपनी अहम् भूमिका रखता है।

विभिन्न पाठ्यक्रमों में पढ़ रहे प्रशिक्षार्थियों के लिए परीक्षा का आयोजन किया जाता है। पहले ये परीक्षाएं शिक्षा मंत्रालय के निदेशालय के सहयोग से आयोजित की जाती थीं लेकिन अब इसके लिए योजना के अन्तर्गत एक परीक्षा स्कंध बनाया गया है जिसे परीक्षाओं के संचालन की पूरी जिम्मेदारी दी गई है।

पहले केवल हिन्दी प्रबोध/प्रवीण/प्राज्ञ तथा हिन्दी टंकण/आशुलिपि के पाठ्यक्रम चलते थे लेकिन जब से केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान की रचना की गई तब से प्रशिक्षण के कार्य का विस्तार किया गया गया है जहां केवल पूर्णकालिक/अंशकालिक केन्द्र ही चलते हैं अब गहन प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा पत्राचार पाठ्यक्रम भी चलाए जा रहे हैं जिससे पहले की तुलना में प्रशिक्षार्थियों की संख्या काफी बढ़ गई है।

पूर्णकालिक/अंशकालिक केन्द्र के नियमित प्रशिक्षार्थी, निजी प्रयत्नों से बैठने वाले प्रशिक्षार्थी, गहन प्रशिक्षण में भाग लेने वाले, पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा पढ़ने वाले सभी प्रशिक्षार्थियों की संख्या को जोड़ा जाए तो लगभग वर्ष में एक लाख के करीब प्रशिक्षार्थी परीक्षा में शामिल होते हैं।

परीक्षा संचालन की प्रक्रिया एक श्रृंखलाबद्ध रूप में अपना कार्य करती रहती है। फार्मों को समेकित करने से लेकर प्रश्न-पत्र निर्माण, मुद्रण, परीक्षा अधीक्षकों की नियुक्ति परीक्षा केन्द्रों का चयन, जांच केन्द्रों का चयन, जांच केन्द्र से प्राप्त अंकों को केन्द्रवार, कार्यालय-वार समेकित कर कम्प्यूटर में फीड करना एक कठिन प्रक्रिया होती है।

एक निश्चित समयावधि में सब काम पूरा करके परीक्षा परिणाम निर्धारित तिथि तक भेज देना होता है। इस दौरान परीक्षा स्कंध में बहुत सारी समस्याएं आती हैं परीक्षा केन्द्र का चयन, परीक्षा अधीक्षकों की नियुक्ति प्रश्नपत्रों को भेजा जाना आदि आदि। लेकिन ये सभी समस्याएं पत्र व्यवहार तथा दूसरे विभागों के सहयोग से दूर कर ली जाती है।

परीक्षा कार्य के सफलतापूर्वक संचालन में जहां एक ओर विभाग के अधिकारी/कर्मचारी सजगता और अपनी कार्यकुशलता से पूरी प्रक्रिया को अंजाम देते हैं वहीं दूसरे विभागों के अधिकारियों द्वारा दिया गया सहयोग भी सराहनीय होता है।

कभी-कभी इतने पैकेज तैयार हो जाते हैं कि उन्हें भेजने के लिए आस-पास के पांच छः डाकघरों का सहयोग लेना पड़ता है।

परीक्षा स्कंध के सभी कार्य पूर्व नियोजित और समयबद्ध होते हैं। कुछ नगरों में तो हमारे प्रशिक्षण केन्द्र हैं और सारी सुविधाएं उपलब्ध रहती है। लेकिन कुछ जगहों पर हमारे केन्द्र नहीं हैं और दूरदराज स्थित कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों को परीक्षा देने हेतु केन्द्र का आवंटन करना होता है। ऐसी स्थिति में भारत का नकशा देख कर प्रशिक्षार्थी को कम से कम असुविधा हो केन्द्र आवंटित किए जाते हैं।

कुछ परीक्षा केन्द्र पूर्वांचल की पहाड़ियों पर तथा कुछ लेह में वर्फ से ढकी चोटियों पर स्थित हैं जहां हमारे सजग प्रहरी काम कर हैं उनके लिए भी उन्हीं की मदद से परीक्षा केन्द्र बनाए जाते हैं। इन सभी जगहों पर समय से सभी चीजें उपलब्ध करा देना एक चुनौती भरा कार्य होता है लेकिन आपसी सहयोग और सौहार्द से सभी काम आसान हो जाते हैं।

परीक्षा के इस पूरे कार्य को अंजाम देने के लिए बहुत धैर्य और साहस की जरूरत होती है। सतत् परिश्रम और लगन की आवश्यकता होती है जिसे परीक्षा शाखा के अनुभवी और कार्यकुशल अधिकारी, कर्मचारी अंजाम देते हैं।

परीक्षा के कार्य को कम्प्यूटर ने बहुत आसान कर दिया है जो कार्य बहुत समय में पूरा किया जाता था अब थोड़े समय में ही पूरा कर लिया जाता है। परीक्षा स्कंध का पूरा कार्य कम्प्यूटरकृत कर दिया गया है तभी तो कम समय में ही परीक्षा परिणामों की घोषणा तथा प्रमाण पत्रों का वितरण संभव हो पाता है।

परीक्षा कार्य में निरन्तर सुधार लाया जा रहा है और यह प्रयत्न किया जा रहा है कि योजना में पढ़ रहे प्रशिक्षार्थियों को परीक्षा में शामिल होने में कोई कठिनाई न हो उनका परीक्षा परिणाम भी समय से घोषित हो प्रमाण पत्र भी समय से प्राप्त हो जाएं।

परीक्षकों, अधीक्षकों आदि के मानदेय बढ़ाने का मामला राजभाषा विभाग के विचाराधीन है आशा की जाती है कि संतोषजनक परिणाम सामने आएंगे।

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा परीक्षा संचालन की सभी आवश्यकताओं को प्राथमिकता के आधार पर पूरा किया जाता है।

परीक्षा स्कंध का कार्य और कार्यालयों के कार्य से भिन्न होता है। समूचे देश के प्रशिक्षार्थियों तथा कार्यालयों से संपर्क बनाए रखने की प्रक्रिया बराबर चलती रहती है। परीक्षा स्कंध सभी सुविधाएं उपलब्ध कराने को भरसक कोशिश करता रहता है।

परीक्षा स्कंध के अन्तर्गत निदेशक महोदय की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया है जिसकी बैठकें कुछ अन्तराल में बराबर होती रहती है और समस्याओं के सामाधान का हल निकाला जाता रहता है और परीक्षा परिणाम आदि का समेकित रूप से जायजा लिया जाता है।

परीक्षा स्कंध को तकनीकी कक्ष का तथा निदेशक (तकनीकी) का विशेष सहयोग प्राप्त होता रहता है। राजभाषा विभाग के वरिष्ठ अधिकारी हमेशा सचेष्ठ रहते हैं कि परीक्षा का कार्य सुचारू रूप से संचालित होता रहे।

पत्राचार के माध्यम से हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण

सोने लाल कौल उप निदेशक

भारत सरकार के आदेशानुसार केन्द्रीय सरकार के प्रतिष्ठानों, निगमों, बैंकों और संस्थानों आदि में कार्य कर रहे अवर श्रेणी लिपिकों, अंग्रेजी टाइपिस्टों के लिए सेवाकालीन हिन्दी टाइपलेखन प्रशिक्षण अनिवार्य है। भारत सरकार, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय), केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली द्वारा संचालित "हिन्दी टाइपलेखन पत्राचार पाठ्यक्रम" का दसवां सत्र 10 अगस्त, 1995 से प्रारम्भ किया जा रहा है, जिसमें प्रवेशन के लिए पात्र कर्मचारियों से आवेदन-पत्र मांगें जा रहे हैं। इस पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए आवश्यक जानकारी निर्धारित विवरण में दी जा रही है। इस पाठ्यक्रम की अवधि 6 माह की होगी। पात्र कर्मचारियों के आवेदन-पत्र संबंधित मंत्रालयों/विभागों/अधीनस्थ कार्यालयों आदि के प्रशासनिक प्रधान निर्धारित प्रपत्र में भरकर 15 जून, 1995 तक उप निदेशक, हिन्दी टाइपलेखन पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, (गृह मंत्रालय) नई दिल्ली, 110011 को भेज दें।

कर्मचारियों के नामांकन के समय कृपया निम्नलिखित बातों विशेष रूप से ध्यान रखा जाए ताकि इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की उपयोगिता और प्रशिक्षण क्षमता का पूरा लाभ उठाया जा सके।

1. केवल उतने ही कर्मचारियों को नामित किया जाए, जिन्हें कार्यालय में अभ्यास के लिए हिन्दी टाइपराइटर उपलब्ध कराया जा सके।

2. नामांकित कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण पूरा करना और परीक्षा में बैठना अनिवार्य है और गैरहाजिरी को कर्तव्य की अवहेलना माना जाता है; अतः यह सुनिश्चित कर लिया जाए कि—

(क) प्रशिक्षण के दौरान शैक्षिक या विभागीय परीक्षा या किसी अन्य कारणों के लम्बी छुट्टी पर जाने वाले अथवा लम्बी अवधि तक दौरे पर रहने वाले कर्मचारियों को इस प्रशिक्षण के लिए नामित न किया जाए।

(ख) जिन कर्मचारियों की प्रशिक्षण-सत्र के दौरान पदोन्नति की संभावना हो और जिन्हें पदोन्नति के उपरांत हिन्दी टाइप करना अनिवार्य न हो, उन्हें नामित न किया जाए।

(ग) प्रशिक्षण के दौरान यदि कर्मचारी का अन्यत्र स्थानांतरण होने की संभावना हो, उन्हें नामित न किया जाए।

पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से प्रशिक्षण समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसार दिया जाता है। प्रशिक्षणार्थियों के प्रवेश के लिए आवेदन-पत्र प्राप्त करने, परीक्षा फार्म भरने व प्रशिक्षण से संबंधित अन्य जानकारी प्राप्त करने आदि के लिए समय निश्चित हैं, जिसके बारे में प्रशासनिक कार्यालयों को समय-समय पर इस कार्यालय द्वारा सूचित किया जाता है। अतः संबंधित प्रशिक्षार्थियों के प्रशासनिक प्रधानों को चाहिए कि वे समय-सीमा का ध्यान अवश्य रखें, ताकि अनावश्यक पत्राचार से बचा जा सके। इस बात का भी विशेष ध्यान रखा जाए कि प्रशिक्षण के दौरान किसी भी कर्मचारी को किसी कारण से नाम वापस लेने अथवा प्रशिक्षण बंद करने या किसी दूसरे प्रशिक्षण पर जाने की अनुमति न दी जाए।

इस प्रशिक्षण से संबंधित अन्य विस्तृत जानकारी इस प्रकार है:—

1. पात्रता:

(1) यह पाठ्यक्रम केन्द्रीय सरकार और केन्द्रीय सरकार के उपक्रमों, निगमों आदि के उन अवर श्रेणी लिपिकों/टाइपिस्टों आदि के लिए है जो हिंदी टाइपलेखन नहीं जानते हैं और जिनके लिए हिन्दी टाइपलेखन का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य है तथा जो ऐसे स्थानों पर कार्यरत हैं जहां राजभाषा विभाग के अन्तर्गत हिन्दी टाइपलेखन प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं है।

(2) इस पाठ्यक्रम में केवल वही कर्मचारी भाग ले सकेंगे, जो पहले से ही अंग्रेजी टाइपलेखन जानते हैं और जिन्हें हिन्दी का कम से कम प्रवीण अथवा मिडिल (कक्षा-8) स्तर तक का ज्ञान है।

(3) जिन कर्मचारियों के कार्यालय/कार्यस्थल हिन्दी टंकण प्रशिक्षण के नियमित अथवा अंशकालिक केन्द्रों से 8 किलोमीटर अथवा इससे अधिक की दूरी पर स्थित हैं, उन्हें आवागमन की कठिनाइयां को ध्यान में रखते हुए इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है।

बैंकों अथवा उपक्रमों आदि के कर्मचारियों को भी यह छूट दी जा सकती है। परन्तु उसके प्रशिक्षण के लिए प्रथम प्राथमिकता नियमित प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश लेने के लिए ही होगी।

(4) जिन कर्मचारियों को संख्या की अधिकता अथवा अन्य कारणों से नियमित अथवा अंशकालिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश नहीं मिल पाता, उन्हें पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है बशर्ते कि ऐसे कर्मचारियों के आवेदन-पत्र उनके कार्यालय प्रमुखों द्वारा इस आशय के प्रमाण-पत्र के साथ भेजा जाए कि उन्हें नियमित/अंशकालिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रवेश नहीं मिल सकता है।

(5) वे आशुलिपिक जो केवल हिन्दी टंकण का प्रशिक्षण लेना चाहते हैं और जिन्हें उनके कार्यालयों द्वारा नियमित प्रशिक्षण के लिए छोड़ा जाना सम्भव नहीं है, उन्हें पत्राचार पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है।

(6) उच्च श्रेणी लिपिकों, सहायकों और हिन्दी अनुवादकों को स्वैच्छिक आधार पर इस पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी टाइपलेखन के प्रशिक्षण के लिए नामित किया जा सकता है। (सहायकों और उच्च श्रेणी लिपिकों के पदों में ग्रुप "ग" के वे कर्मचारी भी शामिल होंगे जो दूसरे कार्यालयों में उससे मिलता-जुलता कार्य करते हों न कि पर्यवेक्षक कार्य और जिनके भिन्न पदनाम हैं जैसे परीक्षा लेखा विभाग में प्रवरण लेखा परीक्षक/ या लेखा परीक्षक। हिन्दी अनुवादकों के पदों का अभिप्राय ग्रुप "ग" के उन कर्मचारियों से भी है जो अनुवाद कार्य करते हों, जैसे लेखा

परीक्षा विभाग में अनुवाद के कार्य में लगे हुए कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक आदि या अनुभाग अधिकारी, प्रवर लेखा परीक्षक, लेखा परीक्षक)।

(7) जो राजपत्रित अधिकारी हिन्दी टाइपलेखन सीखना चाहते हैं, परन्तु अपनी कार्य की प्रकृति के कारण नियमित प्रशिक्षण व्यवस्था का लाभ नहीं उठा सकते, उन्हें भी इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जा सकता है परन्तु उन्हें इसके लिए किसी भी प्रकार का वित्तीय अथवा अन्य प्रोत्साहन नहीं दिया जाएगा।

(8) शर्त यह है कि:—

(क) जो कर्मचारी केन्द्रीय सरकार की सेवा में प्रवेश करने से पहले यह बता चुका है कि वह हिन्दी टाइपलेखन जानता है, या

(ख) जो कर्मचारी सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त किसी संस्थान से पहले ही हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका हो,

(ग) जो कर्मचारी हिन्दी शिक्षण योजना (परीक्षा स्कंध) द्वारा आयोजित हिन्दी टाइपलेखन की परीक्षा में फेल हो चुका हो,

(घ) जो कर्मचारी तदर्थ आधार पर नियुक्त किया गया हो, वह इस पाठ्यक्रम में प्रवेश का पात्र नहीं होगा।

2. प्रवेश शुल्क/परीक्षा शुल्क:

(1) किसी भी प्रशिक्षार्थी से कोई प्रवेश शुल्क नहीं लिया जायेगा।

(2) केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों से कोई परीक्षा शुल्क नहीं लिया जाएगा किन्तु निगमों/उद्यमों/कम्पनियों आदि को अपने प्रति प्रशिक्षार्थी के लिए रुपये 40/- (रुपये चालीस मात्र), परीक्षा शुल्क बैंक ड्राफ्ट द्वारा "उप निदेशक (परीक्षा), हिन्दी शिक्षण योजना, नई दिल्ली" के पदनाम से देय होगा। परीक्षा शुल्क परीक्षा आवेदन पत्रों के साथ उप निदेशक (टंकण पत्राचार) को भेजा जाएगा।

3. सुविधाएं:

(1) इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रविष्ट कर्मचारियों को निर्देश-पत्रक और पाठ्य सामग्री उप निदेशक (टंकण पत्राचार) द्वारा मुफ्त भेजी जाएगी और परीक्षा की समाप्ति पर वापिस नहीं ली जाएगी।

(2) कर्मचारियों को अभ्यास करने के लिए हिन्दी टंकण मशीनें उनके कार्यालयों द्वारा उपलब्ध करवाई जायेंगी।

4. प्रोत्साहन:

(1) एक मुश्त पुरस्कार—इस पाठ्यक्रम द्वारा प्रशिक्षण लेने वाले कर्मचारियों के लिए माना जाएगा कि वे प्रशिक्षण निजी तौर पर ले रहे हैं इसलिए वे प्रशिक्षण के बाद हिन्दी टाइपलेखन परीक्षा पास करने पर रुपए 400/- (रुपये चार सौ मात्र) के एकमुश्त पुरस्कार के पात्र होंगे।

(2) वैयक्तिक वेतन*—एकमुश्त पुरस्कार के अलावा समय-समय पर जारी किए गए आदेशों के अनुसार कर्मचारी परीक्षा पास करने पर 12 महीने की अवधि के लिए एक वेतन वृद्धि की राशि के बराबर वैयक्तिक वेतन के हकदार भी होंगे।

(3) नकद पुरस्कार 90% या अधिक अंक प्राप्त करके परीक्षा पास करने पर कर्मचारी निम्नलिखित नकद पुरस्कार पाने के हकदार भी होंगे:—

97% या उससे अधिक अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 600 रुपये का नकद इनाम
95% या इससे अधिक परन्तु 97% से कम अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 400 रुपये का नकद इनाम
90% या इससे अधिक परन्तु 95% से कम अंक प्राप्त करने पर	प्रत्येक को 200 रुपये का नकद इनाम

(4) स्वैच्छिक आधार पर प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उच्च श्रेणी लिपिक, सहायक और हिन्दी अनुवादक भी हिन्दी टाइपलेखन परीक्षा पास करने पर अवर श्रेणी लिपिक की भांति इस संबंध में पहले से निर्धारित शर्तों के अनुसार विभिन्न सुविधाएं तथा वित्तीय प्रोत्साहन पाने के हकदार होंगे।

(5) ऐसे स्थानों पर तैनात आशुलिपिकों को जहां हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत हिन्दी आशुलिपि प्रशिक्षण केन्द्र नहीं हैं यह सुविधा दी गई है कि वे चाहें तो हिन्दी टाइपिंग की परीक्षा पास करें और फिर आशुलिपि की। दूसरी स्थिति में ऐसे कर्मचारियों को प्रोत्साहन के रूप में मिलने वाली एकमुश्त पुरस्कार की आधी राशि (हिन्दी टंकण परीक्षा पास करने पर दी जाएगी और बाकी आधी राशि हिन्दी आशुलिपि की परीक्षा पास करने पर दी जाएगी। लेकिन आशुलिपिकों को हिन्दी टाइपिंग का प्रशिक्षण लेने अथवा परीक्षा पास करने के लिए अन्य कोई प्रोत्साहन (वैयक्तिक वेतन या नकद पुरस्कार) नहीं दिया जाएगा परन्तु हिन्दी टाइपिंग परीक्षा देने के लिए उन्हें वे सभी सुविधाएं दी जाएंगी जो उन कर्मचारियों को दी जाती हैं जिनके लिए हिन्दी टाइपिंग का प्रशिक्षण अनिवार्य है।

5. पाठ्यक्रम की अवधि:

पत्राचार पाठ्यक्रम की अवधि 1 अगस्त, 1995 से 31 जनवरी, 1996 तक कुल 6 माह होगी।

6. पाठ्यक्रम में प्रवेश और संचालन-व्यवस्था:

(1) उपनिदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध, केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली 110011 द्वारा इस पाठ्यक्रम का संचालन किया जाएगा।

(2) इस पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के पात्र कर्मचारियों के नाम और उनके आवेदन-पत्र देश के विभिन्न भागों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और सार्वजनिक उपक्रमों, निगमों, उद्यमों, निकायों, अभिकरणों, राष्ट्रीयकृत बैंकों आदि के प्रशासनिक कार्यालय उप निदेशक (हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम, स्कंध केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-110011 को संलग्न प्रोफार्माओं में 15 जून, 1995 तक अवश्य भेज दें।

(3) सामान्य रूप से इस पाठ्यक्रम में दाखिले का नियम यह होगा कि जिन कर्मचारियों के नाम विहित प्रोफार्मा में उनके प्रशासनिक कार्यायलों के माध्यम से उपनिदेशक, हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध के कार्यालय में पहले प्राप्त होंगे, उन्हें प्रवेश में प्राथमिकता दी जाएगी।

(4) प्रशिक्षण के लिए सामग्री (स्टेशनरी) और डाक भेजने के लिए टिकटों का प्रयोग संबंधित कर्मचारी अपने निजी खर्च से करेंगे।

7. प्रशिक्षण व्यवस्थाः

(1) इस पाठ्यक्रम में प्रवेश और आवंटित अनुक्रमांक की सूचना प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को उप निदेशक, पत्राचार पाठ्यक्रम-हिन्दी टाइपलेखन स्कंध का कार्यालय देगा।

(2) प्रशिक्षण अवधि में प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को पाठ्य-सामग्री समय निर्देश पत्रक के किश्तों में उप निदेशक, हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध द्वारा भेजी जाएगी, जिसके आधार पर टाइप की हुई अभ्यास सामग्री प्रत्येक प्रशिक्षार्थी प्राप्त तिथि के 15 दिन के भीतर उप निदेशक, पत्राचार पाठ्यक्रम-हिन्दी-टाइपलेखन स्कंध को जांच के लिए भेजेगा।

(3) अक्टूबर के महीने में प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को नमूने के प्रश्न-पत्र भेजे जाएंगे।

(4) पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षार्थियों का मार्गदर्शन करने तथा उनकी व्यक्तिगत कठिनाइयों को दूर करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रमों (पर्सनल कंटैक्ट प्रोग्राम्स) की व्यवस्था की जाएगी।

8. परीक्षाः—

इस पाठ्यक्रम के प्रशिक्षार्थियों की परीक्षा व्यवस्था उपनिदेशक, हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध के माध्यम से उपनिदेशक (परीक्षा), हिन्दी शिक्षण योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 10वां तल, मयूर भवन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली-1 द्वारा की जाएगी। परीक्षा जनवरी, 1996 में होगी।

9. पत्र-व्यवहारः

पत्राचार पाठ्यक्रम के अन्तर्गत परीक्षा, प्रवेश आदि के संबंध में विशेष जानकारी अथवा स्पष्टीकरण उपनिदेशक, हिन्दी टाइपलेखन-पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, 2-ए, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली-110011 के कार्यालय से प्राप्त किया जा सकता है। दूरभाष नं०-3018196

एकमुश्त पुरस्कार और वैयक्तिक वेतन संबंधित कर्मचारियों को पहली बार परीक्षा में शामिल होने की तारीख से 15 महीने की अवधि के अन्दर परीक्षा पास करने पर ही दिये जायेंगे।

भूख ने कल मुझसे पूछा
ये बता भगवान क्या है?

कुछ कवियों की कुछ गंभीर रचनाओं को छोड़कर कवि सम्मेलन का मूल स्वर हास्य का ही रहा और हास्य व्यंग्य के रचनाकारों ने श्रोता समुदाय को भरपूर गुदगुदाया और हंसाया, रूलाया। कुल मिलाकर राजभाषा क्लब इस आयोजन के माध्यम से अपने लक्ष्य पथ पर एक डग और आगे बढ़ा। ■

प्रोफार्मा

केन्द्रीय हिन्दी, प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा संचालित हिन्दी टाइपलेखन के पत्राचार में प्रवेश के लिए कर्मचारियों की सूची

क्रम सं०	कर्मचारी का नाम	जन्म तिथि	पदनाम	कार्यालय का पूरा पता
1	2	3	4	5

क्या कर्मचारी अंग्रेजी टाइप जानता है?	हिन्दी ज्ञान का स्तर हिन्दी की कौन-सी परीक्षा पास की है?	प्रशिक्षार्थी से पत्राचार करने का पूरा पता	अभ्यास के लिए उपलब्ध हिन्दी टाइप मशीनों की संख्या तथा उनका विवरण	कार्यालय से हिंदी शिक्षण योजना के नियमित/ अंशकालिक प्रशिक्षण केन्द्र (यदि है) की दूरी	कैफियत
6	7	8	9	10	11

तारीख

स्थान

सम्पर्क अधिकारी (हिन्दी) /
प्रशासनिक अधिकारी के कार्यालय मोहर के साथ
हस्ताक्षर

नोटः—आवेदन-पत्र प्राप्त करने की अंतिम तिथि 15 जून, 1995

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली

आवेदन-पत्र

पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा हिन्दी टाइपलेखन का प्रशिक्षण

सत्र: 1 अगस्त, 1995 से 31 जनवरी, 1996

सेवा में,

उपनिदेशक,
हिन्दी टाइपलेखन पत्राचार पाठ्यक्रम स्कंध,
केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
2-ए, पृथ्वीराज रोड,
नई दिल्ली-110011

महोदय/महोदया,

मैं आपके कार्यालय द्वारा संचालित पत्राचार पाठ्यक्रम की हिन्दी टाइपलेखन प्रशिक्षण कक्षा में प्रवेश लेना चाहता/चाहती हूं। मेरा विवरण नीचे लिखे अनुसार है:—

1. नाम
2. पिता/पति का नाम
3. पदनाम
4. कार्यालय का पूरा पता
5. जन्म तिथि
6. मातृभाषा
7. हिन्दी ज्ञान का स्तर (हिन्दी की कौन-सी परीक्षा पास की है?)
8. अंग्रेजी टाइपलेखन में गति
9. हिन्दी टाइप मशीन का विवरण जो कार्यालय में अभ्यास के लिए तत्काल उपलब्ध है?

मैं घोषित करता/करती हूं कि (1) मैंने हिन्दी टाइपलेखन में न तो पहले कोई प्रशिक्षण प्राप्त किया है और न ही कोई मान्यता प्राप्त परीक्षा पास की है। (2) प्रशिक्षण के दौरान मेरे लम्बी छुट्टी पर जाने की कोई संभावना नहीं है। अपरिहार्य परिस्थिति में छुट्टी पर जाने की स्थिति में मैं अभ्यास की कमी को विशेष प्रयत्नों द्वारा पूरा करूंगा/करूंगी।

प्रशिक्षार्थी के हस्ताक्षर

तारीख:

नोट: आवेदन-पत्र प्राप्त करने की अंतिम तिथि 15 जून, 1995

मई, 1995 माह में गहन हिन्दी टंकण/आशुलिपि केन्द्र की गतिविधियां

2-ए, पृथ्वीराज रोड स्थित गहन हिन्दी टंकण/आशुलिपि केंन्द्र में दिनांक 8.3.95 से 5.5.95 तक चलने वाले हिन्दी टाइपलेखन सत्र तथा दिनांक 6.1.95 से 5.5.95 तक चलने वाले हिन्दी आशुलिपि सत्र की परीक्षा आयोजित की गई। परीक्षा में कुल 56 परीक्षार्थी बैठे जिनमें 2 पूरक परीक्षार्थी भी थे। दिनांक 15.5.95 को उक्त परीक्षा का परिणाम घोषित किया गया जिसमें कुल 2 पूरक परीक्षार्थियों सहित 44 परीक्षार्थी उत्तीर्ण घोषित किये गये जबकि 10 परीक्षार्थी पूरक व 2 अनुत्तीर्ण रहे। हिन्दी आशुलिपि परीक्षा में कुल 24 परीक्षार्थी परीक्षा में बैठे जो सभी उत्तीर्ण रहे। इनमें से 5 परीक्षार्थियों ने शत प्रतिशत अंक प्राप्त किये।

उसके उपरान्त 26.5.95 से हिन्दी टंकण का 40 दिवसीय गहन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारंभ हो चुका है जिसमें कुल 77 प्रशिक्षार्थी प्रशिक्षण ले रहे हैं। इस पाठ्यक्रम की परीक्षा 21 जुलाई, 1995 को होगी।

चालू वर्ष के दौरान हिन्दी टाइपलेखन एवं आशुलिपि के शेष चलने वाले सत्रों का विवरण इस प्रकार है:—

हिन्दी टाइपलेखन

16.8.95 से 13.10.95 तक
16.10.95 से 12.12.95 तक

हिन्दी आशुलिपि

16.8.95 से 12.12.95

दिल्ली स्थित गोल मार्किट एवं शंकर नगर शाखाओं में हिंदी डेस्क प्रशिक्षण का आयोजन

वर्ष 1994-95 के दौरान केनरा बैंक, दिल्ली अंचल कार्यालय के राजभाषा अनुभाग द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाली शाखाओं विशेषकर दिल्ली महानगर में स्थित शाखाओं तथा कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन के कार्य को अपेक्षित तेजी प्रदान करने के उद्देश्य से कई नवीन कदम उठाये गये हैं। इनमें से बहुत महत्वपूर्ण निर्णय यह लिया गया कि दिल्ली स्थित 5 शाखाओं को आदर्श हिंदी शाखा के रूप में विकसित किया जाए तथा इन्हें राजभाषा अधिनियम 1976 की धारा (8), उपधारा (4) के अंतर्गत विनिर्दिष्ट कराने हेतु उपयुक्त कार्रवाई की जाए।

इस उद्देश्य से जिन 5 शाखाओं का चयन किया गया वे हैं भोगल शाखा, शंकर नगर शाखा, बहादुर शाह जफर मार्ग शाखा, राजा गार्डन शाखा तथा गोल मार्किट शाखा। हिन्दी कार्यान्वयन को सही दिशा एव गति प्रदान करने के लिए इन शाखाओं में ऑन दि जॉब डेस्क प्रशिक्षण आयोजित करने का भी निर्णय लिया गया था।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम का आरंभ वर्ष 1994 में भोगल शाखा में 3 दिनों के व्यावहारिक प्रशिक्षण के द्वारा किया गया। तीन दिनों के प्रशिक्षण के दौरान शाखा में काउंटर सेवा, ग्राहक सेवा तथा आंतरिक कार्यों में हिन्दी का प्रयोग किया जाने लगा।

भोगल शाखा में आयोजित इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की सफलता को देखते हुए दिनांक 13 फरवरी 95 से 15 फरवरी 95 तक हमारी गोल मार्किट शाखा तथा 16 फरवरी 95 से 18 फरवरी 95 तक हमारी शंकर नगर शाखाओं में लगातार 3 तीन दिवसीय डेस्क प्रशिक्षण कार्यक्रम अत्यन्त सफलतापूर्वक आयोजित किये गये। इसके दौरान दोनों शाखाओं में राजभाषा से संबंधित सांविधिक आवश्यकताओं का अनुपालन सुनिश्चित कराया गया एवं शाखा के आंतरिक कार्यों से लेकर ग्राहक सेवा के स्थलों, रजिस्टरों एवं रिकार्डों से लेकर काउंटरों पर हिन्दी का बखूबी प्रयोग किया जाने लगा। ग्राहकों के साथ बातचीत करते हुए उनसे भी इस दिशा में सहयोग की अपील की गयी जिसका सकारात्मक उत्तर प्राप्त हुआ।

इन सभी कार्यक्रमों का आयोजन, संयोजन एवं संचालन अंचल कार्यालय के राजभाषा अनुभाग में प्रबंधक सुश्री तिवारी ने किया तथा उसमें राजभाषा अधिकारी श्री प्रेम नारायण शुक्ल तथा राजभाषा कक्ष, क्षेत्रीय कार्यालय के प्रबंधक एवं राजभाषा अधिकारी श्री खेमराज गुप्ता एवं श्री निरुपम शर्मा का भी सहयोग प्राप्त हुआ।

सिंडिकेट बैंक
शाखा स्तर पर हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम

भारत सरकार की हिन्दी शिक्षण योजना के समानान्तर सिंडिकेट बैंक ने प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया और अपने कर्मचारी प्रशिक्षण महाविद्यालयों के माध्यम से हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन भी किया। परन्तु फिर भी हिन्दी प्रशिक्षण के अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंचा जा सका।

उपर्युक्त के दृष्टिगंत बैंक ने नैगम स्तर पर हिन्दी प्रशिक्षण की समीक्षा करके यह निश्च्य किया कि शाखा स्तर पर हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम आरंभ किए जाएं। इसके लिए यह कार्यपद्धत्ति अपनायी गयी कि प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षक, प्रशिक्षुओं के पास जाएं। यह जिम्मेदारी आंचलिक कार्यालयों और मंडल कार्यालयों के राजभाषा अनुभागों को सौंपी गई।

बैंक के दिल्ली स्थित आंचलिक कार्यालय के राजभाषा अनुभाग ने उपर्युक्त योजनाओं को एक चुनौती की तरह स्वीकार करके अपनी दिल्ली स्थित शाखाओं में इन कार्यक्रमों का आयोजन आरम्भ किया था और इ[illegible] वर्ष अब तक ऐसे 20 कार्यक्रमों में कुल मिलाकर 560 कर्मचारियों [illegible] प्रशिक्षण प्रदान किया जो अपने आप में एक रिकार्ड है।

उल्लेखनीय है कि नुक्कड़ नाटकों की तर्ज पर ये कार्यक्रम बिना [illegible] औपचारिकता के शाखा भवन में उपलब्ध किसी भी सुविधाजनक स्था[illegible] चलाये गए और इनमें अधिकारियों, कर्मचारियों और प्रबन्धकों सभी ने उत्साह और उन्मुक्त भाव से भाग लिया। प्रशिक्षण में निम्नलिखित [illegible] को सम्मिलित किया गया:

1. राजभाषा नीति
2. वार्षिक कार्यक्रम

3. बैंकिंग शब्दावली
4. हिन्दी पत्राचार और टिप्पण
5. फार्मों को हिन्दी में भरना

इसके अतिरिक्त प्रसंगानुसार बीच-बीच में हिन्दी व्याकरण पर भी प्रकाश डाला गया। इन सभी विषयों पर हैंड आउट भी दिए गए।

ये कार्यक्रम न केवल प्रतिभागियों के लिए ज्ञानवर्द्धक और उपयोगी रहे बल्कि समय, खर्च और जन शक्ति के उपयोग की दृष्टि से बैंक के लिए भी नितान्त उपादेय सिद्ध हुए हैं।

इन कार्यक्रमों का आयोजन मुख्यतः आंचलिक कार्यालय के दोनों राजभाषा अधिकारियों सुश्री ज्ञानकौर और श्री कर्ण ने किया।

समाचार दर्शन

पुरस्कार विज्ञप्ति

आलोचना के लिए देवीशंकर अवस्थी सम्मान

पुरस्कार समितिः

सदस्य— श्री नेमिचन्द्र जैन, कुंवर नारायण, श्री लाल शुक्ल, निर्मल वर्मा एवं अशोक वाजपेयी

पुरस्कार समिति की अवधि तीन वर्ष।

यह पुरस्कार प्रतिवर्ष देय होगा।

पुरस्कार की राशि इक्कीस सौ रुपए (2,100 रुपए) होगी।

यह पुरस्कार 35 (पैंतीस) वर्ष तक की आयु वाले आलोचक को दिया जायेगा।

पुरस्कार का आधार उत्कृष्टता, प्रासंगकिता, वैचारिक क्षमता, जिम्मेदारी और विश्लेषण की सामर्य होंगे।

पुरस्कार प्रकाशित कृति पर ही दिया जायेगा। यदि उपर्युक्त मानदण्डों पर कोई कृति उपलब्ध नहीं होती है तो समिति को अधिकारा होगा कि किसी आलोचनात्मक निबन्ध, पुस्तक समीक्षा या संकलन-सम्पादन को भी अपने निर्णय के विचार शामिल कर ले।

अगर किसी वर्ष कोई आलोचनात्मक कृति इन आधारों पर खरी उतरने वाली न हुई तो पुरस्कार समिति को पूरा अधिकार होगा कि वह उस वर्ष किसी को पुरस्कार न दे। पहला पुरस्कार 1995 की अवधि में प्रकाशित आलोचना-कृति के लिए देय होगा। फिर पुरस्कार के लिये विचारार्थ अवधि पिछला वर्ष ही होगा।

संयोजक— श्रीमती कमलेश अवस्थी

पता— श्रीमती डा॰ कमलेश अवस्थी
2/346 ए आजाद नगर,
कानपुर— 20800/2
दूरभाष— 549737

बीच बहस में से उठ कर चले गए देवी शंकर अवस्थीः नामवर सिंह

नई दिल्ली 25 अप्रैल, मंगलवार को त्रिवेणी सभागार में देवी शंकर अवस्थी की याद सातवें दशक के हिन्दी साहित्य के माहौल को फिर से महसूस करने का मौका बन गया। नामवर सिंह ने अपने भावपूर्ण और विदग्धता से भरे व्याख्यान में अपने समकालीन और लगभग समवयस्क आलोचक मित्र देवी शंकर अवस्थी को याद करते हुए कहा कि सन् छियासठ में दो मौतें एक ही दिन हुई थी लाल बहादुर शास्त्री और देवीशंकर अवस्थी की। दोनो ही मौतें असमय थीं और अलग अलग स्तर पर एक समान दुखदायी थी। दोनों व्यक्तियों में गहरी विनयशीलता थी और वे संभावनाओं से भरे थे। देवीशंकर अवस्थी के साथ तब के बीते दिल्ली के माडल टाउन वाले दिनों को याद करते हुए नामवर सिंह ने कहा कि उस समय रात भर सड़को पर चलते हुए बहसें होती थी। लोग एक दूसरे की भी आलोचना करते थे। खासकर एक दूसरे की गैरमौजूदगी में। इसलिए रात भर सड़क पर घूमते हुए साहित्य की चर्चा छोड़कर कोई इसलिए नहीं जाता था कि कहीं उसकी गैरमौजूदगी में उसकी आलोचना न हो जाए। इसलिए बहस और चर्चा रात भर चलती थी और अतं में सब एक ही साथ घर जाते थे। इस माहौल में देवी शंकर अवस्थी ने अपनी पुस्तक "विवेक के रंग' तैयार की। इस तरह यह पुस्तक आलोचना में सामूहिक प्रयास का परिणाम है।

हिन्दी आलोचना में उनके योगदान की चर्चा करते हुए नामवर सिंह ने कहा कि उनके लेखन में जीवंतता और संवेदना थी। कुछ कहानीकारों ने उन्हें अपनी राजनीति में उन्हें अपना पहलवान भी बनाना चाहा पर एक सच्चे आलोचक की तरह वे रचना के प्रति संपृक्त रहे। दुख इस बात का है वे हमारे बीच से बीच बहस में से उठकर चले गए।

कार्यक्रम में वरिष्ठ कवि त्रिलोचन शास्त्री ने देवी शंकर अवस्थी की वाणी प्रकाशन से छपी तीन किताबों 'विवेक के रंग', 'रचना और आलोचना' और 'आलोचना और आलोचना' का लोकार्पण भी किया। इस मौके पर अवस्थी जी की पत्नी कमलेश अवस्थी ने इस बात की भी घोषणा की कि देवी शंकर जी की याद में हर साल पैंतीस साल से कम उम्र के युवा आलोचक को उसकी आलोचनात्मक कृति पर इक्कीस सौ रुपए का इनाम भी दिया जाएगा।

देवी शंकर अवस्थी के योगदान पर तीन आलेख भी पढ़े गए। नित्यानंद तिवारी ने अपने आलेख में कहा कि देवी शंकर जी नए लेखकों के अलावा साहित्य के आचार्यों के भी प्रिय थे। उनकी यह सर्वप्रियता चकित करने वाली थी पर इसके पीछे साहित्य के लिए उनका अनुराग ही था। विजय मोहन सिंह ने कहा कि देवी शंकर जी समकालीन साहित्य के विलक्षण पक्षधर थे। अशोक वाजपेयी ने कहा कि देवी शंकर अवस्थी ने पुस्तक समीक्षा को हिन्दी में वयस्क बनाया। विजयेंद्र स्नातक ने भी अपने विचार रखे। कार्यक्रम की अध्यक्षता नेमिचंद्र जैन ने की।

अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी की लिखाई के लिए पेन्टरों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था

नई दिल्ली में 11-12 मार्च, 1995 को नागरी लिपि परिषद के तत्वावधान में 18वां नागरी लिपि सम्मेलन आयोजित हुआ। इसमें कुछ प्रतिनिधियों ने यह बात उठाई थी कि हिन्दी भाषी क्षेत्रों के जिन नगरों में वहां के कार्यालय, व्यवपारिक प्रतिष्ठान अथवा व्यक्ति अपने नाम-पट्ट आदि हिन्दी में अथवा प्रादेशिक भाषा—हिन्दी में लिखवाना चाहते हैं वहां उन्हें ऐसे पेन्टर नहीं मिल पाते जो हिन्दी में अक्षर ठीक प्रकार से लिख सकें। उनकी यह कठिनाई वास्तविक है। किन्तु इस कठिनाई को आसानी से दूर किया जा सकता है। कई वर्ष पूर्व सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय के द्वारा एक पुस्तक छपवाई गई थी, जिसमें कलात्मक लिखाई के अनेक नमूने सुन्दर रूप में प्रस्तुत किए गए थे। यह पुस्तक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली से प्राप्त की जा सकती है। यदि अहिन्दी भाषी क्षेत्र के विभिन्न हिन्दी सेवी संस्थाओं तथा हिन्दी प्रेमी व्यक्ति उस पुस्तक को प्रकाशन विभाग से मंगवा लें और अपने-अपने नगर में पेन्टरों के अभ्यास वर्गों का आयोजन करें तो कुछ समय के भीतर ही उन्हें अपने नगर में हिन्दी के अच्छे नाम-पट्ट तथा साईन-बोर्ड लिखने वाले पेन्टर उपलब्ध हो सकेंगे। उपर्युक्त पुस्तक बहुत साधारण मूल्य की है। आशा है स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएं इस पुस्तक का लाभ उठाकर अपने-अपने नगर में ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करेंगी जिससे कि विनोबा जन शताब्दी समारोह के दौरान देश के अनेक भागों में देवनागरी के साईन बोर्ड तथा नाम-पट्ट अधिक संख्या में लिखावाए जा सके।

प्रस्तुतिः हरिबाबू कंसल

सुप्रसिद्ध गीतकार वीरेन्द्र मिश्र का स्वर्गवास

अत्यंत क्षोभ का विषय है कि दिल्ली के यशस्वी गीतकार श्री वीरेन्द्र मिश्र का दिनांक 1 जून, 1995 को अचानक हृदय गति रूक जाने से दिल्ली में स्वर्गवास हो गया। उनकी आयु लगभग 68 वर्ष की थी। मिश्र जी का जन्म ग्वालियर रियासत के मुनैरा गांव में सन् 1927 में हुआ था। 13 वर्ष की आयु में वे कविता लिखने लगे थे। उन्होंने एक मराठी महिला से प्रेम विवाह किया था जिसका उस समय काफी विरोध हुआ था। वे सीहोर, ग्वालियर आदि में रहने के बाद बम्बई चले गए थे। वहां आकाशवाणी, दूरदर्शन और कवि सम्मेलनों में तो उनको बहुत लोकप्रियता मिली थी। वे सारे देश भर के कवि सम्मेलनों में भाग लेते थे। आपने फिल्मों के लिए भी गीत और कहानियां लिखीं। आपकी कविताओं को उचित सम्मान प्राप्त हुआ। एक वर्ष पूर्व आप बम्बई से दिल्ली आ गए थे और स्थायी रूप से यहीं रहने लगे थे। आपकी कविताओं के कई संग्रह प्रकाशित हुए जिनके नाम उस प्रकार हैं:

1. लेखनी बेला 2. गीतम 3. अविराम चल मधुवंती 4. झुलसा है छाया नट छूप में 5. धरती गीताम्बरा 6. शांति गंधर्भ 7. कांपती बांसुरी 8. गीत पंचम 9. गूंज और एकांत 10. चंदन है माटी मेरे देश की 11. आवाज आ रही है 12. दो निबंध संग्रहः (i) पंख और बांसुरी (ii) वीरेन्द्र मिश्र का गद्य लेखन।

प्रस्तुतिः कृष्ण विहारी मिश्र,

पंजाब सरकार द्वारा हिन्दी में पत्राचार

निदेशक, भाषा विभाग, पंजाब ने अपने 15.11.94 के पत्र संख्या-विकास-94/31809 द्वारा सूचित किया है कि राज्य सरकार की ओर से केन्द्र सरकार के कार्यालयों तथा हिन्दी भाषी राज्यों से प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाता है। भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला तथा पंजाब सचिवालय, चण्डीगढ़ में स्थित भाषा विभाग, पंजाब के हिन्दी सैल द्वारा यह कार्य किया जाता है।

प्रस्तुतिः जगन्नाथ

विदेशी एयर लाइन्स ने हिन्दी में को अपनाया

भारत सरकार की उदारीकरण नीति के अनुसार जैसे-जैसे सरकारी कम्पनियों में निजी क्षेत्र की भागीदारी होती जा रही है वैसे-वैसे उनमें से कुछ मे राजभाषा नियमावली का अनुपलान यह कहकर नहीं किया जा रहा है कि निजी क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग की बाध्यता नहीं है। यह भुला दिया जाता है कि देश के सभी नागरिकों को हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग स्वाभिमान के नाते भी करना आवश्यक है जो कि सरकारी आदेशों और नियमों से भी ऊपर है। उनके अपने व्यापारिक हित में भी हिन्दी एवं आवश्यकतानुसार अन्य भारतीब भाषाओं का प्रयोग किया जाना भी आवश्यक है। हिन्दी के प्रयोग की आवश्यकता को विदेशी कंपनियों ने भी समझ लिया है। सिंगापुर एयर लाइन्स दुनिया की एक बेहतरीन विमान सेवा समझी जाती है जिस पर न तो हमारा राजभाषा नियम लागू हैं और न ही भारत सरकार ने उनसे हिन्दी के प्रयोग प्रसार का अनुरोध किया है। मगर यह कंपनी अपनी भारतीय उड़ानों की घोषणाएं तो हिन्दी में करती ही हैं, साथ ही अपना मीनू कार्ड भी हिन्दी में छपवाती हैं। इस मीनू कार्ड (भोजनों एवं पेय पदार्थों के नामों की सूची) के अंत में निम्न वाक्य भी हिन्दी में रहते हैं:—

> आपके अनुरोध पर केबिन क्रू को आपको शीतल पेय, डीकैफीनेटेड काॅफी और कैलोरीरहित चीनी उपलब्ध कराने में प्रसन्नता होगी। किसी व्यंजन की हमारे अनुमान से अधिक मांग हो जाने पर यदि कभी आपको अपनी पसंद का व्यंजन प्राप्त नहीं होता है, तो इसके लिए हम क्षमा चाहते हैं।

इस सूझ-बूझ भरे कदम के लिए हम सिंगापुर एयर लाइन्स की सराहना करते हैं और भारत की निजी विमान तथा अन्य कंपनियों से भी अनुरोध करते हैं कि वे राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करके अपने व्यवसाय को प्रगति दें और राष्ट्रीय प्रेम का प्रमाण दें।

(दि ओरिएण्टल इंश्योरेंस कंपनी लि० के बम्बई क्षेत्रीय कार्यालय क्र-1 की फरवरी 1995 की 'परिचय' में छपी एक सूचना पर आधारित)

दूरसंचार वाहिनी की भर्ती परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प

उपरोक्त विषय में केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के संयोजक, राजभाषा कार्य के 14 फरवरी 1995 के पत्रोत्तर में दूर संचार वाहिनी, भारत तिब्बत सीमा पुलिस, (गृह मंत्रालय) भारत सरकार, ने अपने 15.3.95 के पत्र संख्या-भातिसीपु/दूर सं०/स्था०-3/भर्ती/95—3671 द्वारा सूचित किया है कि दूर संचार वाहिनी द्वारा की जा रही समस्त प्रतियोगी परीक्षाओं में प्रश्न पत्र हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किए जाते हैं एवं परीक्षार्थियों को हिन्दी माध्यम का विकल्प दिया जा रहा है।

अनुरोध है कि अन्य बलों की परीक्षाओं में भी उक्त आधार पर हिन्दी के विकल्प के लिए प्रयत्न किए जायें।

प्रस्तुतिः जगन्नाथ

सत्यपाल सिंह को राष्ट्रीयकृत बैंकों में हिन्दी के प्रयोग जैसे अद्भुत विषय पर मेरठ वि०वि० द्वारा पी०एच०डी० की उपाधि

सिंडिकेट बैंक, मण्डल कार्यालय, मेरठ की स्थापना के समय से राजभाषा हिन्दी के कार्य-प्रचलन से जुड़े हुए एक विद्वान सहकर्मी श्री सत्यपाल सिंह को चौधरी चरण सिंह विश्व विद्यालयं (मेरठ विश्व विद्यालय), मेरठ द्वारा "राष्ट्रीयकृत बैंकों में राजभाषा प्रयोग, प्रगति, समस्याएं एवं समाधान" जैसे अपने प्रकार के विशिष्ट विषय पर पी०एच०डी० (विद्या वाचस्पति) की उपाधि प्रदान की गई है।

डा० सत्यपाल सिंह ने उत शोधकार्य अत्यन्त परिश्रम, लगन एवं स्वाध्याय से किया है। पूरे देश में यह अपने प्रकार का प्रथम मौलिक शोध कार्य है।

दिनांक 10 अप्रैल, 1995 को मेरठ में हुए चौ० चरण सिंह वि०वि० के दीक्षान्त समारोह में उ०प्र० के महामहिम राज्यपाल श्री मोती लाल वोरा के कर कमलों द्वारा डा० सत्यपाल सिंह को उक्त उपाधि प्रदान की गई।

डा० सत्यपाल सिंह ने अपने शोध कार्य को सफल बनाने में अपने राजभाषा अधिकारी डा० देशबन्धु राजेश तिवारी एवं राजभाषा सहकर्मी श्री सुधीर कुमार के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की है।

संसदीय राजभाषा समिति के पूर्व सचिव के सरकारी सेवा से निवृत्त होने से समिति सचिवालय में विदाई-समारोह

संसदीय राजभाषा समिति के पूर्व सचिव श्री कृष्ण कुमार ग्रोवर को जो कि सरकारी सेवा से 31-12-94 को सेवानिवृत्त हो गये हैं, संसदीय राजभाषा समिति सचिवालय में दिनांक 4 मई, 1995 को भावभीनी विदाई दी गयी। विदाई समारोह की अध्यक्षता समिति के उपाध्यक्ष माननीय शंकर दयाल सिंह जी ने की।

इस अवसर पर समिति के उपाध्यक्ष महोदय ने अपने उद्गार प्रकट करते हुए कहा कि श्री ग्रोवर समिति से वर्ष 1976 से ही जुड़े रहे हैं तथा श्री ग्रोवर ने समिति सचिवालय में अवर सचिव, उप सचिव तथा सचिव के रूप में सराहनीय कार्य किया तथा उनके विभिन्न पदों पर कार्यरत रहने के दौरान समिति ने अपने प्रतिवेदन के 5 खण्ड राष्ट्रपति जी को प्रस्तुत किये तथा भविष्य में भी इनकी सेवाएं समिति को चाहिए। इस अवसर पर समिति के अन्य माननीय सदस्य, सर्वश्री-लक्ष्मीनारायण पाण्डेय, रामपूजन पटेल, कबीन्द्र पुरकायस्त, रासा सिंह रावत, उदय प्रताप सिंह, चुन चुन प्रसाद यादव, (श्रीमती) संतोष चौधरी, जगदीश प्रसाद माथुर, आई०जी०सनदी, विष्णु कान्त शास्त्री तथा ईशदत्त यादव ने भी अपने उद्गार प्रकट करते हुए श्री ग्रोवर के कार्यों की सराहना की।

उपाध्यक्ष महोदय की ओर से समिति के पूर्व सचिव को शाल भेंट की गई तथा अन्य प्रतीक चिह्न भी भेट किये गए। श्री ग्रोवर ने संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष तथा समिति के सदस्यों का आभार व्यक्त किया।

विदाई समारोह के अवसर पर भारत सरकार के मंत्रालयों / विभागों / कार्यालयों / उपक्रमों आदि के कई वरिष्ठ अधिकारी, जिनमें राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री देव स्वरूप तथा निदेशक (अनुसंधान) श्री राजकुमार सैनी भी शामिल हैं, उपस्थित थे। इस अवसर पर समिति के सचिव श्री रमेश कुमार, अवर सचिव श्री प्रेम सागर और श्री साहिबराम बतरा, वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी श्री नाहर सिंह वर्मा तथा समिति सचिवालय के अन्य अधिकारीगण तथा कर्मचारी भी उपस्थित थे।

आयकर आयुक्त जालन्धर

आयकर विभाग जालन्धर की गृह पत्रिका "आयकर दोआबा" के तृतीय अंक का औपचारिक विमोचन, मार्च, 1995 के अंतिम सप्ताह में आयकर आयुक्त व अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, श्री एस०सी० ग्रोवर के कर-कमलों से हुआ। इस अवसर पर आयकर आयुक्त (अपील) श्री सोहन लाल, आयकर विभाग के अन्य उच्च-अधिकारी, दूरदर्शन, आकाशवाणी, न्यू इंडिया इश्योरेंस कं० तथा पत्र सूचना कार्यालय के प्रतिनिधि भी उपस्थित थे। इस पत्रिका का उद्देश्य जालन्धर नगर में स्थित आयकर विभाग तथा केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए अधिकारियों / कर्मचारियों को प्रोत्साहित करना है।

प्रस्तुतिः अनिल कुमार

मास्को में हिन्दी पत्रिका

रूस में भारतीय समुदाय के लिए पहली हिन्दी मासिक पत्रिका निकलनी शुरू हो गई है। रूस में भारत के राजदूत की पत्नी श्रीमती सेन ने कल यहां एक सादे समारोह में पत्रिका का विमोचन किया। 'भारत भूमि' नामक इस पत्रिका के संपादक प्रसन्न वर्मा हैं, जो मास्को में कम्प्यूटर साइंस के छात्र हैं। श्री वर्मा ने कहा कि पत्रिका का मकसद रूस में रह रहे भारतीय समुदाय के लोगों के विचारों का आदान-प्रदान तथा उन्हें स्वदेश की घटनाओं से अवगत कराना है।

प्रस्तुतिः जगन्नाथ

हिन्दी के प्रचार / प्रसार को बढ़ाने के लिए "संकल्प"

कर्मचारी राज्य बीमा निगम ने 1995-96 वर्ष को स्वाभिमान वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय लिया है। इस संबंध में निगम मुख्यालय में आयोजित अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन में सर्वसम्मति से निम्नलिखित संकल्प पारित किया गया है:—

"यह सभा संकल्प करती है कि निगम कार्यालयों में हिन्दी के प्रसार एवं विकास को गति बढ़ाने के लिए और संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी का उत्तरोत्तर प्रयोग बढ़ाने की दृष्टि से 1 अप्रैल, 1995 से शुरू होने वाले वित्त वर्ष 1995-96 को स्वाभिमान वर्ष के रूप में मनाया जाए। इस प्रयोजन के लिए विभिन्न निगम कार्यालयों में तैनात हिन्दी कार्मिक अपने सघन सम्पर्क के माध्यम से निगम के सभी अधिकारियों के मन में अपने देश, अपनी भाषा और अपनी संस्कृति के प्रति जागरूकता उत्पन्न करते हुए एक स्वाधीन देश के स्वाभिमानी नागरिक के रूप में सरकारी कामकाज में राजभाषा का अधिक से अधिक प्रयोग करने की भावना जागृत करेंगे ताकि सरकार की राजभाषा नीति का निगम कार्यालयों में सुचारू कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जा सके।"

मैनेजमेंट ट्रेनीज़ की चयन परीक्षा में हिन्दी का विकल्प

दैनिक नवभारत टाइम्स में 11 मई 1995 के अंको में छपे एक समाचार के अनुसार नेशनल फर्टीलाइजर्स लिमिटेड (भारत सरकार का उपक्रम) में मैनेजमेंट ट्रेनीज की नियुक्ति के लिए एक लिखित परीक्षा ली जाएगी जिसमें प्रश्न-पत्र दोनों भाषाओं अर्थात हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे।

मैनजमेंट ट्रेनीज कैमिकल, मैकेनिकल, इलैक्ट्रीकल, इन्स्ट्रूमेंटेशन, इंड॰इंजी॰ / कम्प्यूटर, वित्त विधि, विपणन, जन सम्पर्क एवं सुरक्षा विषयों में रखे जाएंगे।

उपरोक्त विकल्प की जानकारी अधिक से अधिक उम्मीदवारों को दी जाए और उन्हें हिन्दी माध्यम का विकल्प लेने के लिए प्रेरित किया जाए। अन्य कंपनियों में भी मैनेजमेंट ट्रेनीज की परीक्षा में हिन्दी के विकल्प के लिए प्रयत्न किए जाएं।

श्री नाथ को पी॰एच॰डी॰ की उपाधि

बेंगलूर विश्वविद्यालय, बेंगलूर ने श्री जी॰आर॰ श्रीनाथ को उनके हिन्दी में लिखित शोध प्रबन्ध "अहिन्दी क्षेत्र में राजभाषा हिन्द कार्यान्वयन की समस्याएं और समाधान" पर पी॰एच॰डी॰ उपाधि प्रदान की है। जी॰आर॰ श्रीनाथ इस समय भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन में के हिन्दी से जुड़े कर्मचारी है।

राष्ट्रीय सूचना-विज्ञान केन्द्र, मुख्यालय में राजभाषा हिंदी प्रमाणपत्र वितरण समारोह

गत वर्षों की भांति, इस वर्ष भी राष्ट्रीय सूचना-विज्ञान केन्द्र मुख्यालय में 1993-94 में आयोजित विभिन्न हिन्दी प्रतियोगितों के विजेताओं को प्रमाणपत्र वितरित करने के लिए दिनांक 26 अप्रैल, 1995 को एक भव्य समारोह धूमधाम से मनाया गया। समारोह की अध्यक्षता डा॰ भारतेन्दु कुमार गैरोला, उप महानिदेशक ने की और विभिन्न प्रतियोगिताओं और राजभाषा विभाग द्वारा संचालित परीक्षाओं के सभी 64 विजेताओं को प्रमाणपत्र वितरित किए।

समारोह के आरम्भ में श्री अशोक कुमार चोपड़ा, वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी ने उपस्थित सभी पदाधिकारियों का हार्दिक स्वागत किया। तत्पश्चात् डा॰ भारतेन्दु कुमार गैरोला ने हिन्दी निबंध, सुलेख, हिन्दी में मूल टिप्पण व प्रारूपण प्रतियोगिता, भाषण प्रतियोगिता आदि में क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय व सांत्वना पुरस्कार प्राप्त करने वाले विजेताओं, मूलरुप से टिप्पण / आलेखन योजनाओं के अंतर्गत प्रथम, द्वितीय व तृतीय पुरस्कार प्राप्त करने वाले पदाधिकारियों के साथ-साथ राजभाषा विभाग द्वारा संचालित हिन्दी आशुलिपि, टाइपिंग, हिंदी प्रबोध, प्रवीण व प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले पदाधिकारियों एवं हिन्दी कार्यशाला में भाग लेने वाले पदाधिकारियों को भी अपने कर कमलों से प्रमाणपत्र वितरित किये।

डा॰ भारतेन्दु कुमार गैरोला ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि इस समारोह में सदस्यों की इतनी ज्यादा संख्या में उपस्थिति को देखते हुए मुझे बेहद खुशी का अनुभव हो रहा है। मैं मानता हूं कि वैज्ञानिक व तकनीकी कार्य-प्रक्रिया होने के कारण व स्नातकोत्तर स्तर तक अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा अर्जित करने की वजह से हमें हिंदी लिखने में कठिनाई महसूस होती है। फिर भी, हम सब का यही प्रयास होना चाहिये कि हम अपने वैज्ञानिक चिंतन को हिन्दी में अभिव्यक्त करते हुए कोई दिक्कत महसूस होने पर मिली-जुली हिंदी का इस्तेमाल करें। ऐसा करने से हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा मिलेगा और वैज्ञानिक तबका इससे प्रेरित होकर अपना कार्य हिन्दी में करेगा। उन्होने सभा में उपस्थित सदस्यों के उत्साह व अभिरुचि को मद्देनजर रखते हुए ऐसे हिन्दी समारोह बार-बार आयोजित करने पर जोर दिया। इसके साथ ही उन्होंने हिन्दी एकक के सदस्यों के सक्रिय सहयोग के लिए उन्हें धन्यवाद दिया। अन्त में उन्होंने कहा कि अन्य पदाधिकारी भी इसी प्रकार हिन्दी प्रतियोगिताओं में अधिक-से-अधिक संख्या में भाग लेकर राजभाषा हिन्दी को गौरवान्वित करें।

राजभाषा विभाग, तकनीकी कक्ष के सहायक निदेशक श्री राजेन्द्र सिंह राजपूत ने इस तथ्य का स्पष्ट उल्लेख किया कि हमें हिन्दी में लिखते हुए अन्य भाषाओं के शब्दों का इस्तेमाल करने में संकोच नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से ही हिन्दी भाषा समृद्ध व समुन्नत होती है।

अंत में, श्री अशोक कुमार चोपड़ा, वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी ने कहा कि जिस लगन से वैज्ञानिक / तकनीकी व प्रशासनिक पदाधिकारियों ने हिन्दी प्रतियोगिताओं में भाग लिया है उसी तरह सभी पदाधिकारी अपना कार्य भी हिन्दी में करें—इस समारोह से यही अभिप्रेत है। उन्होंने कहा कि केन्द्र की राजभाषा नीति के अनुसार ही इस प्रकार के समारोह को खुले तौर पर और आकर्षक ढंग से मनाये जाने का प्रावधान है। उन्होंने इस अवसर पर अहिंन्दी भाषी पदाधिकारियों की भी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि अहिन्दी भाषी होते हुए भी जिस निष्ठा से उन्होंने हिन्दी प्रतियोगिताओं में भाग लेकर हिन्दी में अपनी अभिरुचित दिखाई है उसके लिए वे बधाई के पात्र है। उन्होने कहा कि हमें राजभाषा हिन्दी की प्रगति के लिए ऐसा मानसिक वातावरण तैयार करना होगा जिससे प्रेरित होकर अधिक से अधिक अधिकारी/कर्मचारी अपना काम हिन्दी में करें।

गोपीनाथ बरदोलोई उत्तर पूर्वांचल राजभाषा पुरस्कार

गुवाहाटी रिफाइनरी द्वारा प्रयोजित "गोपीनाथ बरदोलोई उत्तर-पूर्वांचल राजभाषा पुरस्कार" के अंतर्गत प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान पाने वाले लेखकों को पुरस्कृत किया गया।

पुरस्कार संबंधित विवरण निम्नलिखित है:—

	स्थान	पुस्तक का नाम
1.	प्रथम	अपरिचित परिचय
2.	द्वितीय	आदमी का बच्चा
3.	तृतीय	असम के खुशबू

लेखक का नाम	राशि
श्री वीरेन्द्र कुमार गौड़	रु० 5,000/-
श्री सुरेन गोस्वामी	रु० 3,000/-
डा०एम०के० कृष्णामूर्ति एवं डा० ए०के० गोस्वामी	रु० 2,000/-

यह पुरस्कार राशि संसदीय राजभाषा समिति के संयोजक माननीय शंकर दयाल सिंह के हाथों प्रदान किया गया।

प्रस्तुतिः एस०के० त्रिपाठी

हिन्दुस्तान जिंक लि० बन्डलमोट्ट में हिन्दी अनुवाद प्रतियोगिता

दिनांक 26-2-1995 को हिन्दुस्तान जिंक मनोविनोद क्लब में केवल कामगारों के लिए "हिन्दी अनुवाद प्रतियोगिता" आयोजित की गई। उक्त प्रतियोगिता में 15 कामगारों ने सोत्साह भाग लिया। विजेताओं को पुरस्कार दिए गए

प्रथम : श्री टी०एस० निरीक्षणराव, द्वितीय : श्री वी० सत्यप्रसाद, तृतीय : श्री डी० चेन्नय्या

शेष सभी प्रतिभागियों को सांत्वाना पुरस्कार प्रदान किए गए।

इसी दिन प्रतियोगिता के बाद आयोजित एक कार्यक्रम में प्रबंधक (का०प्राशा) श्री ए०वी० अप्पाराव ने इकाई में आयोजित हिन्दी गतिविधियों के बारे में बताया और कामगारों एवं अधिकारियों को ज्यादा संख्या में हिन्दी प्रतियोगिताओं में सोत्साह भाग लेने के लिए प्रेरित किया। प्रबन्धक (भूविज्ञान) श्री के०एस०एम०ए० अहमद ने उक्त प्रतियोगिता में विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किया। हिन्दी आशुलिपिक श्री पी० नागेश्वरराव के धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

बैंक आफ इण्डिया, जयपुर मुख्य शाखा में हिन्दी सामान्य ज्ञान-प्रश्नोत्तर-प्रतियोगिता

दिनांक 23 मार्च, 95 को हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रयोगिता का आयोजन किया गया। इस रोचक कार्यक्रम में स्टाफ सदस्यों ने बड़ी रुचि एवं उत्साह से भाग लिया। बैंक के क्षेत्रीय प्रबन्धक श्री मिहिर साहा ने कार्यक्रम को हिन्दी के प्रयोग की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बताया।

कार्यक्रम के आयोजन की प्रेरणा शाखा के मुख्य प्रबन्धक श्री समर घोषाल ने दी, जो बंगला भाषी होते हुए भी हिन्दी के कार्य में प्रगाढ़ रूचि लेते हैं। कार्यक्रम के आयोजन में विशेष सहयोग शाखा के नामित राजभाषा अधिकारी श्री आर०एस० मौर्य, वरिष्ठ अधिकारी सर्वश्री बी०सी० सोगानी एवं वी०के० बत्रा का रहा।

स्मरणीय है कि शाखा में राजभाषा सम्बन्धी आयोजन होते रहे हैं। खुले मंच का यह प्रथम आयोजन था, जिसकी सभी ने सराहना की इसी दिन शाखा से हिन्दी समिति की भी तिमाही बैठक का आयोजन किया गया, जिसमें हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की समीक्षा की गई एवं कई महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये।

यूनियन बैंक आफ इंडिया, मध्य प्रदेश अंचल कार्यालय को राजभाषा पुरस्कार

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, मध्य प्रदेश अंचल के प्रमुख श्री एस० पी० एस० वालिया, उप महाप्रबंधक ने दिनांक 17 फरवरी, 1995 को जयपुर में आयोजित क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन में, राजस्थान के राज्यपाल महामहिम श्री बलीराम भगत से, राजभाषा के क्षेत्र में श्रेष्ठ कार्य निष्पादन के लिए ट्राफी व प्रमाण पत्र प्राप्त किया। यह पुरस्कार यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के अंचलीय कार्यालय को राजभाषा विभाग, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, भोपाल द्वारा प्रदान किया गया। इस समारोह में अंचलीय कार्यालय के प्रबंधक (राजभाषा) श्री सुभाष देवल को भी राज्यपाल महोदय ने प्रशंसा पत्र प्रदान किया। इस समारोह में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के सचिव श्री वीरेन्द्र प्रकाश और संयुक्त सचिव श्री देवस्वरुप भी उपस्थित थे।

इस समारोह में यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के रायपुर स्थित क्षेत्रीय कार्यालय को भी ट्राफी व प्रमाणपत्र प्रदान किया गया।

श्री एम०एस० पाल को प्रशस्ति पत्र

आयकर अपीलीय अधिकरण नई दिल्ली के कैशियर श्री एम०एस० पाल को शत-प्रतिशत कार्य हिंदी में करने के लिए केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद के 36वें स्थापना दिवस समारोह में दिनांक 5 मई, 1995 को माननीय श्री बूटा सिंह, नागरिक आपूर्ति मंत्री जी ने प्रशस्ति पत्र देकर पुरस्कृत किया।

आदेश / अनुदेश

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग का दिनांक 24.4.95 का. का॰ज्ञा॰सं॰ 130 34/25/95-राभा (नी॰व॰स॰)

विषयः—केन्द्रीय सचिवालय राजभाषासेवा के सदस्यों द्वारा अपने कार्यालयों के अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने में सहयोग देना।

राजभाषा संबंधी सांविधानिक उपबन्धों, राजभाषा अधिनियम, 1963, राजभाषा नियम, 1976 तथा समय-समय पर इनके अंतर्गत जारी आदेशों का अनुपालन आवश्यक है। राजभाषाई व्यवस्था के अनुसार केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में कई कार्य केवल हिन्दी में तथा कई द्विभाषी रूप में किये जाने अपेक्षित हैं। द्विभाषी कार्यों में अक्सर पहले कागज़ात अंग्रेजी में तैयार किये जाते हैं और बाद में उनका हिन्दी अनुवाद किया जाता है। अनुवादी हिन्दी के प्रभाव से हिन्दी भाषायी मूल लेखन भी कई बार सहज नहीं बन पाता। यह आवश्यक है कि कार्यालयीन हिन्दी सरल तथा स्वाभाविक हो ताकि वह पढ़ने व समझने के लिए आसान हो।

2. केन्द्रीय सरकार के हर मंत्रालय/विभाग तथा सम्बद्ध कर्यालय में पर्याप्त मात्रा में केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा के कर्मचारी/अधिकारी तैनात हैं। सरकार के अधीनस्थ कार्यालयों, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तथा सरकारी निगमों/स्वायत संस्थाओं में भी आवश्यकतानुसार राजभाषा अधिकारी तथा अनुवादक उपलब्ध हैं। ये सभी अधिकारी/कर्मचारी राजभाषा हिन्दी में कार्य को निपटाने तथा बढ़ाने के साथ-साथ इसी कार्य में सुगमता लाने में महत्वपूर्ण योगदान देने की सामर्थ्य रखते हैं। दूसरी ओर देखने में आया है कि संगठनों/कार्यालयों में ऐसे बहुत कर्मचारी हैं जो चाहते हुए भी झिझक या कुछेक भाषाई नुक्तों की कठिनाईयों के कारण राजभाषा हिन्दी में काम करने की पहल नहीं कर पाते। कर्मचारी के इस समूह को अपनी झिझक से निपटने, छोटे-मोटे भाषाई नुक्तों को समझने तथा राजभाषा हिन्दी में काम शुरू करने के लिए प्रेरित करने के लिए राजभाषा अधिकारी, अनुवादक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। यदि सभी राजभाषा अधिकारी एवं अनुवादक हिन्दी के प्रति जिज्ञासा तथा रूझान रखने वाले कर्मचारियों के लिए प्रेरणा एवं सहायता का स्रोत बन जाएं तो न केवल राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग में बढ़ोत्तरी होगी अपितु सरल कार्यालयी भाषा का प्रयोग व प्रसार भी होगा और हिन्दी में मूलतः कार्य करने का माहौल सुधरेगा।

3. अतः केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों को सुझाव दिया जाता है कि वे अपरकथित प्रयोजन के लिए राजभाषा सेवा के अधिकारियों से कार्य लेने के बारे में विचार कर अवस्थानुसार निर्देश दें। कदाचित ये अधिकारी प्रतिदिन या सप्ताह में तीन बार एक पूर्व निर्धारित समयावधि में अन्य कर्मचारियों को हिन्दी संबंधी सहायता दे सकते हैं। राजभाषा अधिकारी स्वयं पहल करते हुए राजभाषा के प्रति रूझान रखने वाले कर्मचारियों को सुविधानुसार यथा-आवश्यक भाषाई जानकारी भी दे सकते हैं। इस सारी व्यवस्था का प्रयोजन मात्र यह होना चाहिए कि कर्मचारियों एवं राजभाषा अधिकारियों/अनुवादकों के बीच आदान-प्रदानमुखी अनौपचारिक सम्पर्क बने तथा रहे ताकि राजभाषा हिन्दी में कार्य करने के लिए सभी कर्मचारियों को सहयोग व सहायता मिलती रहे। यह भी अनुरोध है कि ऐसी व्यवस्था अपने सभी सम्बद्ध एवं अधीनस्थ संगठनों में लाने की कृपा की जाए।

4. इस संबंध में की गई कार्रवाई से राजभाषा विभाग को अवगत कराने की कृपा की जाए।

ह॰/-
(देव स्वरुप)
संयुक्त सचिव, भारत सरकार
दूरभाषः 4611031

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग का दिनांक 7 अप्रैल 1995 का पत्र संख्या 12024/6/94-राभा(क-2)

सेवा में,

वेतन एवं लेखा अधिकारी,
वेतन एवं लेखा कार्यालय (सचिवालय),
गृह मंत्रालय,
सी-I, हट्मेंट्स,
डलहौजी रोड, नई दिल्ली-3

विषयः नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों पर होने वाले खर्च की प्रतिपूर्ति के संबंध में।

महोदय,

मुझे यह सूचित करने का निदेश हुआ है कि भारत सरकार ने वर्ष 1995-96 से नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों पर होने वाले खर्च के संबंध में दी जाने वाली राशि, छोटी समितियों के लिए रु० 1000/- प्रति बैठक से बढ़ाकर, रु० 1500/- प्रति बैठक (रु० 3000/- वार्षिक) और बड़ी समितियों के लिए रु० 2000/- प्रति बैठक से बढ़ाकर, रु० 3000/- प्रति बैठक (रु० 6000/- वार्षिक) करने की स्वीकृत प्रदान कर दी है। इ समितियों का विवरण नीचे दिया गया है:—

(1) निम्नलिखित 36 नगरों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को रु० 6000/- प्रतिवर्ष (रु० 3000/- प्रति बैठक), समितियों की बैठकों पर हुए खर्च के संबंध में स्वीकृत किए जाएंगे:—

1. कलकत्ता (कार्यालय) 2. पटना (कार्यालय) 3. पोर्ट-ब्लेयर 4. भुवनेश्वर 5. रांची 6. गुवाहाटी (कार्या०) 7. अहमदाबाद (कार्या०) 8. कोल्हापुर 9. गोवा 10. नागपुर (कार्या०) 11. पूणे (कार्या०) 12. बम्बई (कार्या०) 13. बड़ौदरा (कार्या०) 14. इन्दौर (कार्या०) 15. ग्वालियर 16. जयपुर (कार्या०) 17. जबलपुर (कार्या०) 18. भोपाल (कार्या०) 19. आगरा 20. इलाहाबाद (का०) 21. कापनुर (कार्या०) 22. गोरखपुर 23. चण्डीगढ़ (कार्या०) 24. जम्मू 25. देहरादून 26. लखनऊ (कार्या०) 27. वाराणसी 28. शिमला 29. श्रीनगर 30. बेंगलूर (कार्या०) 31. मेंगलूर 32. मैसूर 33. हैदराबाद (कार्या०) 34. कोचीन (कार्या०) 35. मद्रास (कार्या०) 36. त्रिवेन्द्रम (कार्या०)

(2) निम्नलिखित 74 नगरों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को रु० 3000/- प्रतिवर्ष (रु० 1500/- प्रति बैठक), समितियों की बैठकों पर हुए खर्च के संबंध में स्वीकृत किए जाएंगे:—

1. कटक 2. दुर्गापुर 3. धनबाद 4. पाराद्वीप-पत्तन 5. बोकारो 6. बर्नपुर 7. मुजफ्फरपुर 8. अगरतल्ला 9. आईजोल 10. इम्फाल 11. ईटानगर 12. कोहिमा 13. गंगटोक 14. दीमापुर 15. शिलांग 16. सिलचर 17. अमरावती 18. औरंगाबाद 19. अकोला 20. कान्डल ला 21. चन्द्रपुर 22. नासिक 23. भावनगर 24. राजकोट 25. वेरावल 26. सूरत 27. अजमेर 28. उदयपुर 29. उज्जैन 30. कोटा 31. जोधल पुर 32. देवास 33. नीमच 34. बीकानेर 35. रायपुर रतलाम 37. अम्बाला 38. अलीगढ़ 39. अमृतसर 40. इज्जतनगर रनाल 42. जालन्धर 43. झांसी 44. गाजियबाद 45. पटियाला 46. फरीदाबाद 47. मेरठ 48. मथुरा 49. रोहतक 50. लुधियाना 51. हिसार 52. अल नन्तपुर 53. गुन्टूर 54. तिरुपति 55. बेलगांव 56. वारंगल 57. विजयल वाड़ा 58. विशाखापत्तनम 59. हुबली 60. ऊटी-कुनूर 61. कालीकट 62. कण्णूर 63. कोयम्बटूर 64. तिरूचिरापल्ली 65. पांडिचेरी 66. पाल लक्काड् कंजीवकोड 67. मदुरै 68. सालेम 69. त्रिच्चूर 70. मडिकेरी 71. कारवार 72. आबू-पर्वत 73. रीवा 74. भिलाई

2. राशि खर्च करते समय यह ध्यान रखा जाए कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की एक दिन की बैठक में दो समय की चाय व दोपहर के भोजन पर कुल खर्चा रु० 14/- प्रति व्यक्ति से अधिक न किया जाए। बैठक के संबंध में अन्य विविध खर्च, बची हुई राशि से किए जा सकते है। इस संबंध में, अध्यक्ष अपने स्तर पर निर्णय ले सकते हैं।

3. यह स्वीकृति गृह मंत्रालय (वित्त-II शाखा) की सहमति से उनकी अनौपचारिक टिप्पणी संख्या 63 (एच)/95/वित्त-II, दिनांक 6-3-95 के अंतर्गत जारी की जा रही है।

—डॉ० दामोदर खड़से

उप मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) केन्द्रीय राजभाषा विभाग लोक मंगल, 1501, शिवाजीनगर, पुणे-411005.

पाठकों के पत्र

"राजभाषा भारती" अंक 65 मिला। गेट अप बदला है। यह एकरसता को तोड़ता है। आकर्षक भी है। सबसे बढ़कर इस अंक में कविताएं, समीक्षाएं और लेखों की अधिक संख्या बढ़ाकर यह ठोस सच्चाई जाहिर की है कि साहित्य से राजभाषा हिन्दी का क्षेत्र विकसित ही होता है।

उत्तम संपादन के लिए बधाई।

—रतीलाल शाहीन

37, नवपाडा, गुलजार गली, बांदरा पूर्व बम्बई-51.

"राजभाषा भारती" का आचार्य विनोबा भावे विशेषांक (अंक 66-जुलाई सितम्बर 1994) पढ़ने का सौभाग्य मुझे मिला। इस संग्रहणीय अंक की जितनी प्रशंसा का जाए उतनी ही कम है। यह अंक हिन्दी प्रचारकर्त्ताओं विशेषकर केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् की शाखाओं को अत्युतम प्रचार सामग्री प्रदान करने में समर्थ है।

विद्याधर पाण्डेय

सदस्य, राष्ट्रीय कार्य समिति एवं राज्य संयोजक (उत्तर प्रदेश) केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् 3/866, भारतीपुरम्, झूसी, इलाहाबाद-221506.

"राजभाषा भारती" के अंकों में निरंतर निखार और उल्लेखनीय परिवर्तन पाकर बेहद खुशी हुई। आपके संपादन नेतृत्व में इसकी पठनीयता भी बढ़ी है। इसके पीछे आपके और आपके सहयोगियों के अथक प्रयास और रचनात्मकता जुड़ी हुई है। मेरी हार्दिक बधाइंया स्वीकार करें।

पश्चिम क्षेत्र राजभाषा सम्मेलन को संबोधित करते हुए राजभाषा विभाग के पूर्व सचिव श्री रवीन्द्र कुमार सिन्हा। उनकी दाईं ओर बैठे हैं संयुक्त सचिव (राजभाषा) श्री देव स्वरूप।

राजभाषा सम्मेलन को संबोधित करते हुए राजभाषा विभाग के पूर्व सचिव श्री रवीन्द्र कुमार सिन्हा।

राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र मुख्यालय में राजभाषा हिंदी प्रणाम-पत्र वितरण समारोह की एक झलक।

पं० सं० 3246/77
आई एस एस एन 0970—9398

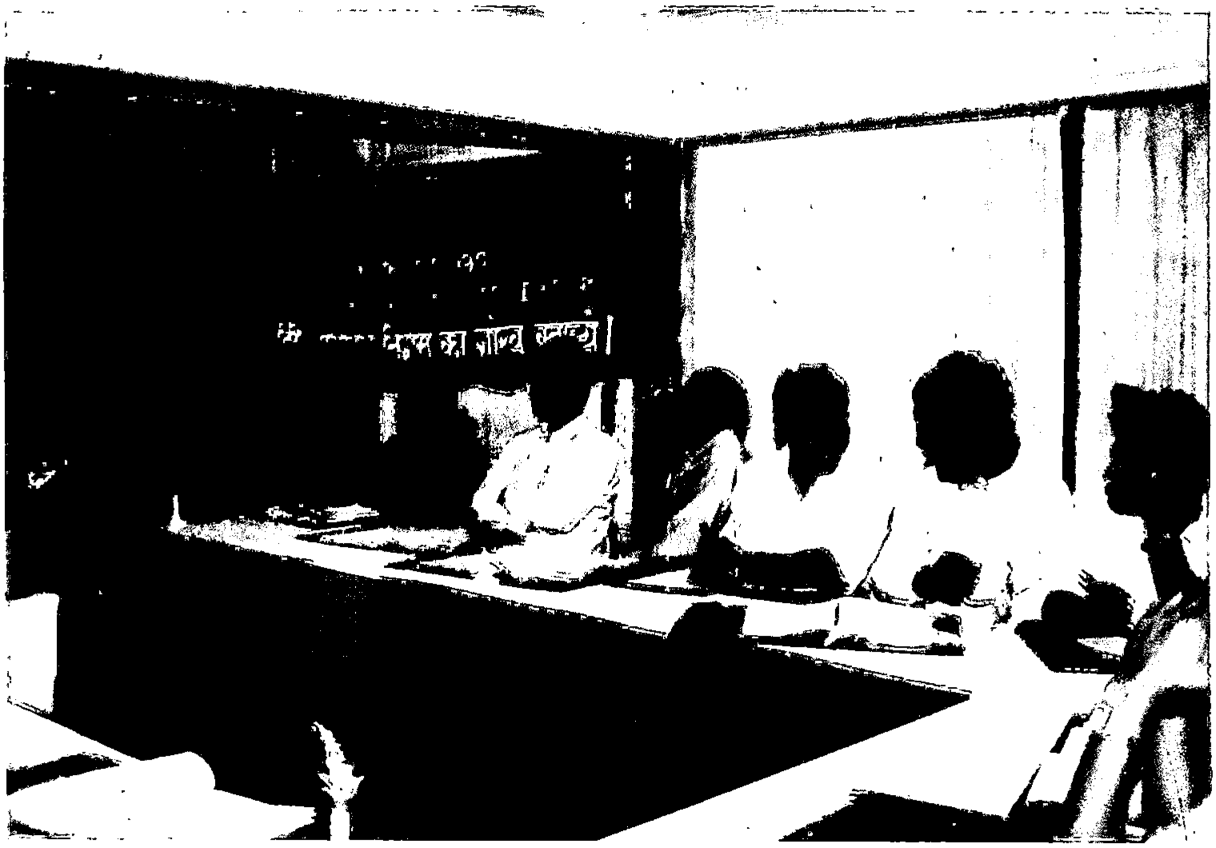

भारत पेट्रोलियम कार्पोरेशन लि० बम्बई में हिंदी समन्वयकों का सम्मेलन।

वरिष्ठ साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर।

राजभाषा विभाग, भारत सरकार, (गृह मंत्रालय) लोकनायक भवन, नई दिल्ली-110003 के लिए उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्राणालय फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।